वैदिक धर्म



वैशाख सं. २००३

जून १९४६

वार्षिक मूल्य

म ऑ. से ५) रु.; वी. पी. से ५।=) रु.

विदेशके लिये १५ शिलिंग।

इस अंकका मू. ॥) रु.

क्रमांक ३१८

नवीन ग्रन्थ

ईश्वरका साक्षात्कार

प्रथम भाग

[पृष्ठसंख्या ४८५ मूल्य ३) डा० व्य० ॥) वी. पी. से ३॥=) म० आ० से ३) भेजकर मगाईये]

वेदके संपूर्ण ६ सूक्तोंका पूर्ण विवरण और करीब २१ वैदिक ऋषियोंके ३०० मंत्रोंका ईश्वर-विषयक वर्णन इस ग्रंथमें है। इसमें १९ प्रकरण हैं और वैदिक संहिताओंमें जो ईश्वरविषयक वर्णन है, वह इसमें दिया है। शीघ्र मंगवाईये—

मंत्री, स्वाध्याय-मण्डल, औंध, (जि. सातारा)

वैदिक धर्म

विषयसूची

वैदिक धर्म

क्रमांक ३१८

वर्ष २७ | ज्येष्ठ विक्रमीय संवत २००३, जून १९४६ | अङ्क ६

प्रबल संघटना

स्थिरा वः सन्त्वायुधा पराणुदे वीळू उत प्रतिष्कभे ।
युष्माकमस्तु तविषी पनीयसी मा मर्त्यस्य मायिनः ॥

(ऋ. १।३९।२)

" तुम्हारे हथियार शत्रुको दूर हटा देनेके लिये शत्रुसे अधिक सुदृढ रहें, तुम्हारे पासके शत्रुका प्रतिकार करनेके साधन शत्रुसे अधिक बलशाली हों। तुम्हारी सब प्रकारकी शक्ति सदा प्रशंसनीय अवस्थामें रहे, पर कपटी शत्रुका बल कभी न बढे। "

शत्रुका प्रतिकार करनेके लिये अपने पासके हथियार शत्रुसे अधिक सुदृढ और अधिक प्रभावशाली बनाने चाहिये। शत्रुसे लडनेके अन्यान्य साधन भी शत्रुसे अधिक परिणामकारी होने चाहिये। अपनी सेना भी शत्रुसे अधिक संख्यामें हो, अधिक सामर्थ्यशाली हो और अधिक साधन-संपन्न हो। हर समय सावधान रहना चाहिये और किसी भी प्रकार अपने पास शिथिलता नहीं आनी चाहिये। अपनी संघटना अभेद्य होनी चाहिये। किसी तरह अपने अन्दर फूट नहीं होनी चाहिये। इस तरह सब प्रकारसे अपना सामर्थ्य प्रभावी रहा तोही विजय प्राप्त हो सकेगा। मनुष्यको सदाही अपने विजयके लिये यत्नवान् होना चाहिये और विजय चाहिये तो अपनी संघटना प्रबल बनानी चाहिये।

प्रेम-भिक्षा

(लेखक— श्री० लालचन्दजी)

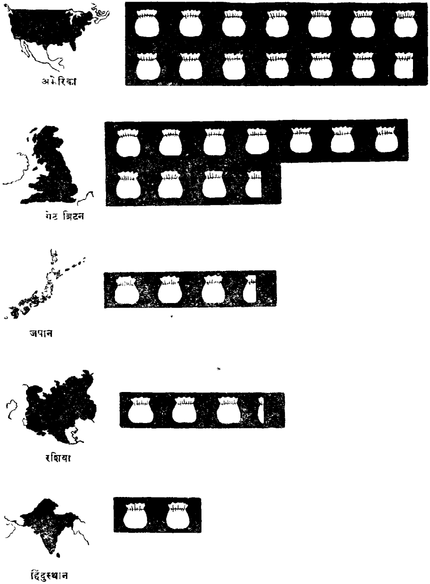
हे प्रेममय प्रभो, मुझे विश्वास अपना दीजिये ।
शक्तिसहित मैं नम्र हूं, अभिमान मम हर लीजिये ।।
सत्ता तेरी है सब जगह, वह व्यक्त मुझमें हो सदा ।
तव भावमें मैं मग्न हूं, सत लग्न यह भर दीजिये ।।
श्रद्धासहित शुभ भावमय, जीवन मेरा नितही बढे ।
सद्भावमें नित रमण हो, ऐसा हृदय कर दीजिये ।।
आनंदमय ! आनंदमें, आनन्द नित मैं हूं यहां ।
आनंद मन, सुन्दर सुमन, आनंदमें कर दीजिये ।।
दीजिये आनंद अपना, प्रेममय, कल्याणमय ।
पूर्ण भगवन् ! पूर्णतामें, पूर्णमन कर दीजिये ।।
निज प्रेममें भर दे मुझे, रख प्रेममय अपने निकट ।
नितही फलूं फूलूं यहां शुभ आश यह भर दीजिये ।।

तेरे निकट

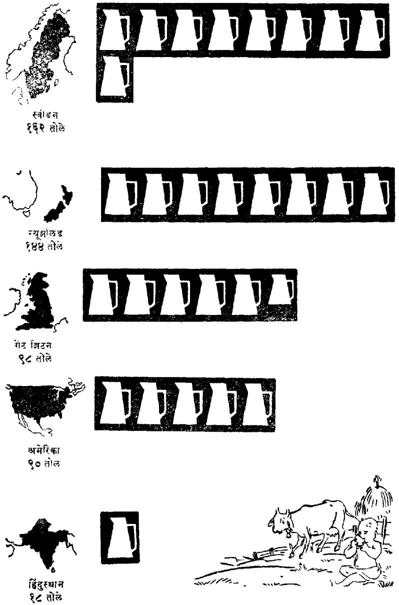
आनन्दमय ! तेरे निकट, आनंदमें भरपूर हूं ।
न है ईर्ष्या, न कपट मुझे, नित प्रेममें सुखपूर हूं ।।
नित प्रेमकी शुभ भावनासे, द्वेष मेरे दूर हैं ।
मनमें विमल भावों भरा, आनंद मंगलपूर हूं ।।
तेरी छवी वह सुखमयी, आनंदमयी मंगलमयी ।
देखूं निरंतर जगत्में चित्तमें हृदयमें सब जगह ।।
तेरे सुखद निज प्रेमका, मद है भरा, मुझमें सदा ।
अभिमान मुझसे दूर है, शुभ काम हो नित हर जगह ।।
शुभ भावना और प्रेमसे, मम वासनाका ह्रास है ।
हृदय भूमि शुद्ध है, सद्भावकी है कामना ।।
निजके हितोंकी लालसा, अब सर्वहितमें लीन है ।
है कामना तेरे मिलनकी, आत्मअर्पण भावना ।।

कुछ ज्ञातव्य बातें।

प्रत्येक व्यक्तिकी आमदनी।



प्रत्येक मनुष्य प्रतिदिन कितना दूध पीता है ?



(ब्लॉक्स- पद्मा प्रकाशन, बम्बईकी कृपासे प्राप्त)

ॐ

ऋग्वेदका सुबोध भाष्य

(५)

कण्व ऋषिका दर्शन

(कण्वपुत्र प्रस्कण्वके मंत्रोंके समेत)

(काण्व दर्शनोंमें द्वितीय विभाग)

(ऋग्वेदका अष्टम और नवम अनुवाक)

लेखक

भट्टाचार्य पण्डित श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,

अध्यक्ष स्वाध्याय-मण्डल, औंध (जि० सातारा)

संवत् २००२

मूल्य २) रु०

काण्व-दर्शन

१ प्रथम विभाग = मेधातिथिका दर्शन
२ द्वितीय " कण्व " "

मुद्रक और प्रकाशक
व० श्री० सातवळेकर, B. A., भारतमुद्रणालय, औंध (सातारा)

कण्व ऋषिका तत्त्वज्ञान

कण्व ऋषिके मन्त्र ऋग्वेदमें १०१ हैं, इनका सूक्तवार क्रम इस तरह है—

सूक्तानुसार मंत्रसंख्या

ऋग्वेद-प्रथम मण्डल

कण्व ऋषि

अष्टमअनुवाक		देवता	मन्त्रसंख्या	
सूक्त	३६	अग्निः	२०	
	३७	मरुतः	१५	
	३८	,,	२५	
	३९	,,	१०	४०
	४०	ब्रह्मणस्पतिः	८	
	४१	मित्रवरुणार्यमणः	६	
		आदित्याः	३	
	४२	पूषा	१०	
	४३	रुद्रः	६	
		सोमः	३	९६

ऋग्वेद-नवम मण्डल

९४	पवमानः सोमः	५	५

कुल मंत्र-संख्या १०१

अथर्ववेदमें कण्व ऋषिके मंत्र तीन सूक्तोंमें विभक्त हैं। देखिये—

अथर्व. कां.	२।३१	मंत्र	५
,,	३२	,,	६
,,	५।२३	,,	१३
		कुल मंत्र	२४

अर्थात् ऋग्वेद-अथर्ववेदके कुल मंत्र १२५ हुए।

कण्वऋषिके देवतानुसार मंत्र ऐसे हैं। पूर्वोक्त मंत्रही देवतानुसार ऐसे होते हैं—

देवतानुसार मंत्रसंख्या

१ मरुतः	४०
२ अग्निः	२०
(यूपः २)	
३ पूषा	१०
४ आदित्याः	९
(मित्रवरुणअर्यमाणः ५)	
५ ब्रह्मणस्पतिः	८
६ रुद्रः	५
७ पवमानः सोमः	५
८ सोमः	३
९ रुद्रः, मित्रावरुणौ	१
कुल मंत्र-संख्या	१०१
कृमिनाशन	२४
	१२५

कण्वगोत्रमें उत्पन्न प्रस्कण्व ऋषिके मंत्र सूक्तानुसार ये हैं—

ऋग्वेद-प्रथम मण्डल

प्रस्कण्व ऋषि

नवमअनुवाक		देवता	मंत्रसंख्या	
सूक्त	४४	अग्निः	१४	
	४५	,,	१०	२४
	४६	अश्विनौ	१५	
	४७	,,	१०	२५
	४८	उषा	१६	
	४९	,,	४	२०
	५०	सूर्यः		१३
		अष्टम मण्डल		
	४९	इन्द्रः		१०
		नवम मण्डल		
	९५	पवमानः सोमः	५	९७
		प्रस्कण्वके अथर्ववेदमें मंत्र		११
		कुल मंत्र-संख्या		१०८

प्रस्कण्व ऋषिके मंत्रोंकी देवतावार मंत्रसंख्या—

१ अश्विनौ	२५
२ अग्निः	२४
(यूपः २)	
३ उषा	२०
४ सूर्यः	१३
५ इन्द्रः	१०
६ पवमानः सोमः	५
कुल मंत्र-संख्या	९७

अथर्ववेदमें—		
सरस्वान्	२	
श्येनः	२	
सोमारुद्रौ	२	
ईर्ष्यापनयनं	२	
आपः	१	
वाक्	१	
इन्द्रः विष्णुः	१	११
		१०८

ऋषिनामों तथा राजाओंके नामोंका मंत्रोंमें उल्लेख इनके सूक्तोंमें निम्नलिखित प्रकार आया है—

[**ऋ. १।३६के**] मंत्र १० में '**मेध्यातिथिः काण्वः**' तथा मंत्र ११ और १७ में भी मेध्यातिथिके नाम हैं। इसके अतिरिक्त **धनस्पृत** (मं. १०); **उपस्तुत** (मं. १० और १७); **तुर्वश, यदु, उग्रदेव, नववास्त्व, बृहद्रथ, तुर्वीति** (मं. १८) ये नाम भी इसी सूक्तमें हैं। ये नाम कण्वके सूक्तमें हैं। अब प्रस्कण्वके सूक्तोंमें ऋषिनाम देखिये—

ऋ. १।४५ के मंत्र ३ में **प्रस्कण्व**का नाम आया है। इसके अतिरिक्त **प्रियमेध, अत्रि, विरूप, अंगिराः** ये नाम भी इसी मंत्रमें हैं। '**प्रियमेध**' का नाम पुनः मं. ४ में आया है। इसी सूक्तके ५ वें मंत्रमें ऋषिने अपने गोत्रका नाम '**कण्व**' कहा है।

ऋ. १।४६ के नवम मंत्रमें '**कण्वासः**' पद है, यह इस का गोत्रनाम है। ऋ. १।४७ के मंत्र २ में '**कण्वासः**' पद है। यही पद मंत्र ४;५; १० में भी है।

ऋ. १।४९ के मंत्र ४ में '**कण्वाः**' पद है, यह ऋषिका गोत्रनाम है। ऋ. ८।४९ के मंत्र ५ और १३ में '**कण्व**' नाम है। इसी सूक्तके मं. ९ और १० में '**मेध्यातिथि, नीपातिथि, कण्व, त्रसदस्यु, पक्थ, दशव्रज, गोशर्य, ऋजिश्वा**' ये नाम हैं।

इस तरह कण्व और प्रस्कण्व तथा अन्य ऋषियोंके तथा राजाओंके नाम इन सूक्तोंमें आये हैं।

सूक्तोंके विषय

इन सूक्तोंमें शक्तिको बढाना, शक्तिका संगठन करना, वीरताकी वृद्धि, शस्त्रास्त्रोंकी योजना, शत्रुका पराभव करना, क्षात्रबलको बढाना, क्षात्रधर्मको संगठित करना, शत्रुका पूर्ण नाश करना, जलचिकित्सासे रोग दूर करना, सुवीर्यकी वृद्धि करना, ३३ देव, यज्ञ, सूर्य किरणसे नीरोगता, सोमरसपान इत्यादि अनेक विषय हैं। राज्यका बल बढानेके लिये इनकी आवश्यकता रहती है।

इससे प्रतीत होता है कि कण्व ऋषिके उपदेशका राज्यशासनसे घनिष्ठ संबंध है। कण्व ऋषिके संबंधमें अन्य ग्रन्थोंमें निम्नलिखित इतिहास मिलता है—

घोरपुत्र कण्व

प्रथम कण्व

कण्व शब्दको नीलकण्ठ भट्ट 'सुखमय' इस अर्थसे ग्रहण करते हैं। बृहद्देवतामें कण्वके विषयमें जो उल्लेख पाया जाता है, उसमें लिखा है कि, घोरनामा ऋषिके कण्व और प्रगाथ ये दो पुत्र थे। जब कि ये दोनों पुत्र अरण्यमें रहा करते थे, तब प्रगाथके द्वारा कण्वपत्नीके संबंधमें कुछ अविनयपूर्ण व्यवहार हुवा। कण्व प्रगाथको शाप देनेके लिये उद्युक्त हुवे। तब प्रगाथने उनकी क्षमा मांगकर कण्व और कण्वपत्नी इन दोनोंको मातापिता मान लिया। आगे चलकर कण्व तथा उनके वंशज इन्होंने मिलकर ऋग्वेदके अष्टम मण्डलकी रचना की।

संभव है कि कण्वका कुल यदु और तुर्वश इनका पौरोहित्य करता होगा। ऋग्वेदमें कण्वकुलोत्पन्न देवातिथि इन्द्रकी प्रार्थना करता हुवा दिखाई देता है कि 'तेरी कृपासे **यदु** और **तुर्वश** ये सुखी हो गये हुवे मुझे दिखाई दें।'—

महत्ते वृष्णो अभिचक्ष्यं कृतं पश्येम तुर्वशं यदुम्॥
(ऋ. ८।४।७)

कई ग्रंथोंमें तथा ऋग्वेदमें इस पुरातन ऋषिका नामोल्लेख किया हुवा पाया जाता है। उदाहरणार्थ—

भुवत्कण्वे वृषा द्युम्न्याहुतः क्रन्दश्वो गविष्टिषु॥
(ऋ. १।३६।८)

यामस्य कण्वो अदुहन् प्रपीनाम्॥
(अथर्व. ७।१५।१)

कण्वः कक्षीवान् पुरुमीढो अगस्त्यः॥
(अथर्व. १८।३।१५)

यामस्य कण्वोऽअदुहत्प्रपीनाम् ॥
(वा. य. १७।७४)

कण्वो हैतान्नृतुप्रैषान्ददर्श॥ (शांख्यायन ब्रा. २८.८)

कण्व स्वयं सूक्तद्रष्टा भी थे। ऋग्वेदके प्रथम मण्डलके ३६ से ४३ तक आठ सूक्त घोरपुत्र कण्वके नामसे पहिचाने जाते हैं।

कण्वके पुत्र तथा वंशज भी कई जगह उल्लेखित किये गये हैं। कहीं कहींपर कण्वके वंशजका नामनिर्देश कण्व इस पैतृक नामसे किया हुवा पाया जाता है।

कण्वासस्त्वा सुतसोमास इन्धते हव्यवाहं स्वध्वर॥
(ऋ. १।४४।८)

विवस्कण्वास इन्दवो वसु सिन्धूनां पदे।
(ऋ. १।४६।९)

कहींपर कण्व नार्षद ऐसा भी उसका उल्लेख किया गया है।

कण्वाय। प्रवाच्यं तद्वृषणा कृतं वां यन्नार्षदाय।
(ऋ. १-११७-८)

कुछ स्थानोंमें उस कण्वके वंशजको कण्व श्रायस इस नामसे संबोधित किया गया है।

कण्व एव श्रायसोऽवेत्। (तै. सं. ५।४।७।१६)
कण्वः श्रावय रे सो। (मैत्रा. सं. ३।३।९।११)

कण्वाः सौश्रवसाः ऐसा इन वंशजोंका बहुवचनी उल्लेख भी किया गया है।

तामेतां कण्वास्सौश्रवसा विदुः।
(काठक. सं. १३।१२)

अथर्ववेदमें कण्व यह शब्द रोगबीजोंका प्रतिशब्द इस अर्थसे पाया जाता है।

गर्भादं कण्वं नाशय। (अथर्व. २.२५.३)

क्षत्रियोंके गायत्रीमंत्रमें कण्वका उल्लेख बडे ही गौरव पूर्ण शब्दोंमें किया गया है। वहाँपर प्रार्थना की गई है कि कण्वने भगवान् सूर्यसे जो विश्व-कल्याणकरी बुद्धि प्राप्त करा ली थी, वह मुझे मिले।

यामस्य कण्वोऽअदुहत् प्रपीनां सहस्रधारां पयसा महीं गाम्। (वा. य. १७।७४)

ऋग्वेदमें नार्षद कण्वके विषयमें मनोरंजक उल्लेख है।

विष्णुपुराणका मत है कि ब्रह्मरातपुत्र याज्ञवल्क्यके पंद्रह शिष्योंमेंसे कण्व एक था। भागवत इस याज्ञवल्क्यको देवरात-पुत्र कहता है। आगे चलकर कण्वने यजुर्वेदमें अपनी शाखा निर्माण की और उसके ग्रंथ भी बनाये।

यजुर्भिरकरोच्छाखा दशपञ्चशतैर्विभुः॥
जगृहुर्वाजसन्यस्ताः कण्वमाध्यन्दिनादयः॥
(भागवत. १२.६. ७४)

वे ग्रन्थ ब्रह्मांशमें याज्ञवल्क्यके विरुद्ध हैं। कण्व एक गोत्रके प्रवर्तक भी हैं।

कण्व स्वयं अंगिरस गोत्रोत्पन्न है। इस कुलकी उत्पत्ति पुरु-वंशसे हुई। कुछ स्थानोंपर ऐसा उल्लेख किया है कि कण्व मति-नारपुत्र अप्रतिरथसे पैदा हुवे।

अप्रतिरथस्य कण्वः पुत्रोऽभूत्।
(विष्णु. ४.१९.५०)

परन्तु एक जगह कण्वको अजमीढपुत्र बताया है।

आजमीढस्य केशिन्यां कण्वः समभवत्किल।
(मत्स्य. ४९.४६)

इन दोनों विधानोंमें कालकी दृष्टिसे असंगति प्रतीत होती है।

अप्रतिरथ और अजमीढ समकालीन नहीं थे। प्रगाथ काण्व यह दुर्गहोंके पौत्रोंका समकालीन था। वह जिस सूक्तका ऋषि है उस सूक्तमें उन पौत्रोंका उल्लेख है।

नपातो दुर्गहस्य मे सहस्रेण सुराधसः।
(ऋ. ८।६५।१२)

कण्व गोत्रोत्पन्नोंको दक्षिणा देनेका सत्याषाढ श्रौतसूत्रमें निषेध किया हुवा है। गोपीनाथ भट्ट अपने भाष्यमें उसका कारण बताते हैं कि—

कण्वं तु बधिरं विद्यात्।

कण्व ब्रह्मदेवके पुष्करक्षेत्रमें किये हुवे यज्ञमें विद्यमान थे। आप एक धर्मशास्त्रकार हैं। स्तंबने एक प्रश्न उपस्थित किया है कि किसके दिये हुवे अन्नका ग्रहण किया जाय और इसका उत्तर देते समय उसने कण्वके एक वचनका उल्लेख किया है जिसमें कि कहा है, " किसीने भी आदरपूर्वक दिया हुवा अन्न ग्राह्यही है। " स्मृतिचंद्रिकामें आधारके लिये कण्वके ग्रन्थमेंके आह्निक और श्राद्ध इस विषयमें कई प्रमाण लिये गये हैं। मिताक्षरामें भी कण्वके ग्रन्थोंका आधार कई जगह लिया गया है।

कण्वनीति, कण्वसंहिता, कण्वोपनिषद्, कण्वस्मृति ऐसे चार ग्रन्थ कण्वके नामपर पाये जाते हैं। कण्वस्मृतिका उल्लेख हेमाद्रि, मध्वाचार्य आदिने किया हुवा है।

द्वितीय कण्व

कश्यप गोत्रोत्पन्न एक ऋषि। मेधातिथि ऋषिके आप पुत्र हैं।

ऋषिर्मेधातिथेः पुत्रः कण्वो बर्हिषदस्तथा।
(महा. अ. २५५.३१)

मालिनी नदीके तटपर आपका आश्रम था। आपही इतिहास-प्रसिद्ध कण्व हैं जिन्होंने कि भरत-जननी शकुंतलाका पालन किया था। आगे चलकर उनके अनुपस्थितिमें जब दुष्यंत और शकुंतला इनका ब्याह हुवा, तब आपहीने उसे संमति दी।

न भयं विद्यते भद्रे मा शुचः सुकृतं कृतम् ॥

(म. आ. ९४.५९)

आप एकबार गौतमाश्रमको गये। उस आश्रमकी समृद्धता देखकर आपके मनमें इच्छा निर्माण हुई कि 'मेरे आश्रममें भी ऐसी ही समृद्धता निर्माण हो।' तब आपने तप करके गंगा और क्षुधा इन्हें प्रसन्न करा लिया और उनसे आयुष्य, द्रव्य और भुक्ति-मुक्तिका वर मांग लिया। दूसरे वरसे आपने यह मांगा कि 'मैं तथा मेरे वंशज इन्हे कभी भी क्षुधासे पीडा न हो।' आपको ये दोनो वर मिले। जिस तीर्थपर आपने तपश्चर्या की थी, वह कण्वतीर्थ इस नामसे पहिचाना जाने लगा। बादमें जब महाराजा भरत यज्ञ करते रहे तब कण्व उस यज्ञके मुख्य ऋत्विज थे।

याजयामास तं कण्वो दक्षवद्भूरिदक्षिणम् ॥

(म. आ. १०१।४)

इस यज्ञमें भरतजीने आपको एक सहस्र पद्म भार शुद्ध जाम्बूनद सुवर्णका दान किया।

सहस्रं यत्र पद्मानां कण्वाय भरतो ददौ।
जाम्बूनदस्य शुद्धस्य कनकस्य महायशाः॥

(म. द्रो. ६८.११)

संभव है कि भरतजीके इस यज्ञमें आप उपस्थित हों या आपके पुत्र। इन्होंने दुर्योधनको मातलिकी कथा सुनाई। परन्तु उस बोधप्रद कथाको सुनकर भी जब उसने न माना, तब आपने उसे शाप दिया कि तेरी मृत्यु जांघ टूटनेसे हो जायगी।

यस्माद्रुं ताडयसि ऊरौ मृत्युर्भविष्यति ॥

(म. उ. १०५.४३)

कालका विचार किया जाय तो यह कण्व भी मूल कण्वका एकाद वंशज होगा।

तृतीय कण्व

कश्यपके पुत्र। कलियुगारंभके बाद सहस्र वर्षोंसे आप भरत-भूमिमें जन्म पा चुके। देवकन्या आर्यावतीसे आपका विवाह हुवा। उपाध्याय, दीक्षित, पाठक, शुक्ल, मिश्र, अग्निहोत्री, द्विवेदी, त्रिवेदी, पाण्डेय, चतुर्वेदी ये सब आपके पुत्रोंके उप नाम हैं। आपने आपकी मधुर प्रवचनशैलीके द्वारा मिश्रदेशवासी दशसहस्र म्लेंछोंको वश करा लिया। और उन्हें शुद्धिविधि करके आर्यधर्ममें प्रविष्ट करा लिया। इन शुद्धिकृत म्लेंछोंमेंसे दो सहस्रकी योजना आपने वैश्योंमें की। उन दो सहस्रोंमेंसे पृथुनामक कश्यपका सेवक कण्वका कृपापात्र बना। इसलिये उसे क्षत्रियपद देकर कण्वने उसे राजपुत्र नगर दे दिया।

सरस्वत्याज्ञया कण्वो मिश्रदेशमुपाययौ।
म्लेंछान्संस्कृतमाभाष्य तदा दशसहस्रकान् ॥
वशीकृत्य स्वयं प्राप्तो ब्रह्मावर्तं महोत्तमे ॥

(भविष्य. प्र. प. २१ अ.)

प्रस्कण्व

भागवतमतानुसार यह मेधातिथिका पुत्र है। आगे चलकर प्रस्कण्वादिक द्विजत्वको प्राप्त हुवे।

तस्य मेधातिथिस्तस्मात्प्रस्कण्वाद्या द्विजातयः।

(भा. ९.२०.७)

प्रस्कण्व काण्व

यह ऋग्वेदके प्रथम मण्डलके चवालीससे लेकर पचासतकके सूक्तोंका तथा अष्टम मण्डलके उनपचासवे सूक्तका द्रष्टा है। शांख्यायन श्रौतसूत्रमें कहा है कि इसने पृषध्र, मेध्य और मातरिश्वन् इनसे द्रव्य पाया था।

यहां तीन कण्वों और दो प्रस्कण्वोंका उल्लेख है। तीसरा कण्व निःसन्देह आधुनिक है। हमारे मतसे पहिला कण्व ही सूक्तद्रष्टा ऋषि है, दूसरा और तीसरा ये दोनों अर्वाचीन हैं। प्रस्कण्व ऋषिके विषयमें कोई ऐसे भिन्न चरित्र उपलब्ध नहीं हैं।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि 'कण्व' अनेक हुए हैं, तथापि सूक्तद्रष्टा एकही ऋषि है। जिस कण्व ऋषिके मंत्र यहां दिये हैं वह सूक्तद्रष्टा कण्व है। इसके इतिहासके विषयमें अधिक खोज करनेकी आवश्यकता है।

प्रत्येक ऋषिके मंत्रोंमें अग्नि, इन्द्र, अश्विनौ, सोम आदि देवताओंके मंत्र हैं। पाठक इनमें ऐसी तुलना करें कि एक ऋषिके मंत्रोंमें एक देवताके वर्णनमें जो विशेषण आये हैं, उस वर्णनमें और अन्य ऋषिके मंत्रोंमें क्या भेद है? ऋषिका स्फुरणही मंत्र हैं, यह स्फुरण कहनेमात्रसेही मन्त्रकी उत्पत्ति अध्यात्मभावसे-आत्मिक स्फूर्तिसे-सिद्ध है। देखना यह है कि उसके अविष्कारमें, प्रत्येकके स्फुरणमें, भाव व्यक्त करनेमें क्या क्या हेरफेर हैं। जितना सूक्ष्म अध्ययन किया जाय उतना इस विषयमें इस समय थोडाही होगा।

स्वाध्याय-मण्डल औंध (जि. सातारा) १ वैशाख सं० २००३	निवेदनकर्ता श्री० दा० सातवळेकर

ऋग्वेदका सुबोध भाष्य

कण्व ऋषिका दर्शन

कण्वपुत्र प्रस्कण्वके मंत्रोंके समेत

(काण्व-दर्शनोंमें द्वितीय विभाग)

(१) शक्ति बढानेवाला अग्नि

(ऋ. १।३६) कण्वो घौरः । अग्निः, १३-१४ यूपो वा । प्रगाथः- विषमा बृहत्यः, समाः सतोबृहत्यः

(१३ उपरिष्टाद्बृहती । ऐ० ब्रा० २।२ चरणच्छेदः)

प्र वो यह्वं पुरूणां विशां देवयतीनाम् ।
अग्निं सूक्तेभिर्वचोभिरीमहे यं सीमिदन्य ईळते १
जनासो अग्निं दधिरे सहोवृधं हविष्मन्तो विधेम ते ।
स त्वं नो अद्य सुमना इहाविता भवा वाजेषु सन्त्य २
प्र त्वा दूतं वृणीमहे होतारं विश्ववेदसम् ।
महस्ते सतो वि चरन्त्यर्चयो दिवि स्पृशन्ति भानवः ३

अन्वयः- देवयतीनां पुरूणां विशां वः यह्वं अग्निं सूक्तेभिः वचोभिः प्र ईमहे । अन्ये इत् यं सीं ईळते ॥१॥

जनासः सहो-वृधं अग्निं दधिरे । हविष्मन्तः (वयं) ते विधेम । वाजेषु सन्त्य ! सः त्वं अद्य इह नः सुमना अविता भव ॥ २ ॥

होतारं विश्व-वेदसं, त्वा दूतं प्र वृणीमहे । महः सतः ते अर्चयः वि चरन्ति । भानवः दिवि स्पृशन्ति ॥ ३ ॥

अर्थ— देवत्वकी प्राप्तिकी इच्छा करनेवाले बहुसंख्य तुम (सब) प्रजाजनोंके लिये महासामर्थ्यवान् अग्निकी सूक्तों और वाक्योंद्वारा (हम) प्रार्थना करते हैं । (इसी तरह) अन्य भी उसीकी स्तुति करते हैं ॥ १ ॥

मानवोंने बलको बढानेवाले अग्निको धारण किया है । (हे अग्ने) हवि लेकर (हम) तुम्हारी पूजा करते हैं । हे बलके कार्योंके लिये दान देनेवाले ! वह तुम आज यहां हमारे ऊपर प्रसन्नचित्त होकर हमारे रक्षक बनो ॥ २ ॥

(तुम देवोंको) बुलाते हैं और सर्वज्ञानी भी हैं, (हम) तुम्हें दूत करके वरण करते हैं । महान् और सत्यस्वरूप ऐसे तुम्हारी ज्वालाएं फैल रहीं हैं । (तुम्हारे) किरण आकाशतक पहुंचते हैं ॥ ३ ॥

देवासस्त्वा वरुणो मित्रो अर्यमा सं दूतं प्रत्नमिन्धते ।
विश्वं सो अग्ने जयति त्वया धनं यस्ते ददाश मर्त्यः ४
मन्द्रो होता गृहपतिरग्ने दूतो विशामसि ।
त्वे विश्वा संगतानि व्रता ध्रुवा यानि देवा अकृण्वत ५
त्वे इदग्ने सुभगे यविष्ठ्य विश्वमा हूयते हविः ।
स त्वं नो अद्य सुमना उतापरं यक्षि देवान्त्सुवीर्या ६
तं घेमित्था नमस्विन उप स्वराजमासते ।
होत्राभिरग्निं मनुषः समिन्धते तितिर्वांसो अति स्रिधः ७
घ्नन्तो वृत्रमतरन् रोदसी अप उरु क्षयाय चक्रिरे ।
भुवत् कण्वे वृषा द्युम्न्याहुतः क्रन्ददश्वो गविष्टिषु ८
सं सीदस्व महाँ असि शोचस्व देववीतमः ।
वि धूममग्ने अरुषं मियेध्य सृज प्रशस्त दर्शतम् ९

हे अग्ने ! वरुणः मित्रः अर्यमा देवासः त्वा प्रत्नं दूतं सं इन्धते । यः मर्त्यः ते ददाश, सः त्वया विश्वं धनं जयति ॥४॥

हे अग्ने ! (त्वं) मन्द्रः होता विशां गृहपतिः दूतः असि । त्वे विश्वा व्रता संगतानि, यानि देवाः ध्रुवा अकृण्वत ॥ ५ ॥

हे यविष्ठ्य अग्ने ! सुभगे त्वे इत् विश्वं हविः आ हूयते । स त्वं नः सुमनाः, अद्य उत अपरं सुवीर्या देवान् यक्षि ॥ ६ ॥

नमस्विनः स्व-राजं तं घ ईं इत्था उप आसते । स्रिधः अति तितिर्वांसः मनुषः होत्राभिः अग्निं सं इन्धते ॥ ७ ॥

घ्नन्तः वृत्रं अतरन्, रोदसी अपः क्षयाय उरु चक्रिरे । वृषा द्युम्नी आहुतः कण्वे भुवत्, (यथा) गविष्टिषु अश्वः क्रन्दत् ॥ ८ ॥

सं सीदस्व, महान् असि । देव-वी-तमः शोचस्व । हे मियेध्य प्रशस्त अग्ने ! अरुषं दर्शतं धूमं वि सृज ॥ ९ ॥

हे अग्ने ! वरुण मित्र और अर्यमा ये देव तुम प्राचीन दूतको प्रकाशित करते हैं । जो मानव तुम्हारे लिये दान देता है, वह तुम्हारी (सहायतासे) सब धन जीत कर प्राप्त करता है ॥ ४ ॥

हे अग्ने ! (तुम) हर्षवर्धक दाता प्रजाजनोंके घरोंके रक्षक (और देवोंके) दूत हो । तुम्हारे अन्दर वे सब व्रत संगत होते हैं, कि जो ये देव दृढतापूर्वक करते हैं ॥ ५ ॥

हे युवक अग्ने ! उत्तम भाग्यसंपन्न ऐसे तुम्हारे अन्दरही सब प्रकारका हवि अर्पण किया जाता है । वह तुम हमारे ऊपर आनन्द-चित्त होकर, आज (और वैसेही) दूसरे दिन भी प्रभावशाली देवोंका अर्चन करो ॥ ६ ॥

नमस्कार करनेवाले उपासक स्वयंप्रकाशी इस (अग्नि) की इस तरह उपासना करते हैं । शत्रुओंको पार करनेकी इच्छा करनेवाले मनुष्य हवन करनेवालोंके द्वारा अग्निको प्रकाशित करते हैं ॥ ७ ॥

प्रहार करनेवाले वीरोंने वृत्रका वध किया और अन्तरिक्षको जलोंके रहनेके लिये बहुत विस्तृत किया है । बलवान् और प्रकाशित (अग्नि) आहुतियाँ प्राप्त करके कण्वके लिये (धन-दाता) हुआ, (जैसा) गौओंकी प्राप्तिके युद्धोंमें हिनहिनानेवाला घोडा (यशदायी होता है) ॥ ८ ॥

(हे देव) बैठ जाओ, तुम बडे हो, देवोंकी कामना करते हुए प्रकाशित होओ । हे पवित्र और प्रशंसित अग्ने ! वेगवान् दर्शनीय धूम उत्पन्न करो ॥ ९ ॥

यं त्वा देवासो मनवे दधुरिह यजिष्ठं हव्यवाहन ।
यं कण्वो मेध्यातिथिर्धनस्पृतं यं वृषा यमुपस्तुतः १०

यमग्निं मेध्यातिथिः कण्व ईध ऋतादधि ।
तस्य प्रेषो दीदियुस्तमिमा ऋचस्तमग्निं वर्धयामसि ११

रायस्पूर्धि स्वधावोऽस्ति हि तेऽग्ने देवेष्वाप्यम् ।
त्वं वाजस्य श्रुत्यस्य राजसि स नो मृळ महाँ असि १२

ऊर्ध्व ऊ षु ण ऊतये तिष्ठा देवो न सविता ।
ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता यदञ्जिभिर्वाघद्भिर्विह्वयामहे १३

ऊर्ध्वो नः पाह्यंहसो नि केतुना विश्वं समत्रिणं दह ।
कृधी न ऊर्ध्वाञ्चरथाय जीवसे विदा देवेषु नो दुवः १४

पाहि नो अग्ने रक्षसः पाहि धूर्तेरराव्णः ।
पाहि रीषत उत वा जिघांसतो बृहद्भानो यविष्ठ्य १५

हे हव्यवाहन ! मनवे देवासः यजिष्ठं यं त्वा इह दधुः। मेध्यातिथिः कण्वः यं (त्वां) धनस्पृतं (दधे); वृषा यं (च) उपस्तुतः यं (त्वां दधे) ॥ १० ॥

मेध्यातिथिः कण्वः ऋतात् अधि यं अग्निं ईधे, तस्य इषः प्र दीदियुः , तं इमा ऋचः (वर्धयन्ति, वयं) तं अग्निं वर्धयामसि ॥ ११ ॥

हे स्व-धावः ! रायः पूर्धि । हे अग्ने ! देवेषु ते आप्यं अस्ति हि । त्वं श्रुत्यस्य वाजस्य राजसि । सः (त्वं) नः मृळ, महान् असि ॥ १२ ॥

नः ऊतये ऊर्ध्वः सु तिष्ठ, सविता देवः न। ऊर्ध्वः वाजस्य सनिता, यत् अञ्जिभिः वाघद्भिः विह्वयामहे ॥ १३ ॥

ऊर्ध्वः केतुना नः अंहसः नि पाहि । विश्वं अत्रिणं सं दह। चरथाय जीवसे नः ऊर्ध्वान् कृधि । नः दुवः देवेषु विदाः ॥ १४ ॥

हे बृहद्भानो यविष्ठ्य अग्ने! नः रक्षसः पाहि । अ-राव्णः धूर्तैः पाहि । रिषतः उत वा जिघांसतः पाहि ॥ १५ ॥

हे हव्य पहुंचानेवाले (अग्ने) ! मानवोंके (हितके) लिये सब देवोंने यजनीय ऐसे तुमको यहां (इस यज्ञमे) धारण किया है । मेध्यातिथि कण्वने धन देनेवाले तुम्हे (धारण किया है), बलको बढानेवाले (वीरने और) उपस्तुतने भी तुम्हें धारण किया है ॥ १० ॥

मेध्यातिथि कण्वने सूर्यसे (उत्पन्न करके) इस अग्निका धारण किया है, उसके किरण चमकने लगे हैं, उस (अग्निका यश) ये ऋचाएं (बढाती हैं, हम भी) उसी अग्निको बढाते हैं ॥ ११ ॥

हे अपनी धारक शक्तिवाले (अग्ने) ! (हमें) धन भरपूर दो । हे अग्ने ! देवोंमें तेरी निःसंदेह मित्रता है । तुम प्रशंसनीय बलके प्रकाशक हो। वह (तुम) हमें सुखी करो, तुम बडे हो ॥ १२ ॥

हमारी सुरक्षाके लिये उच्च होकर ठहरो, जैसा सूर्य देव (उच्च स्थानमें) है । उच्च होकर अन्नके दाता (बनो), अब सु-अलंकृत याजकोंके साथ (हम तुम्हें) बुला रहे हैं ॥ १३ ॥

ऊंचा होकर ज्ञानसे हमें पापसे बचाओ । सब राक्षसो (रोगबीजों) को जला दो । (हमारी) प्रगति और दीर्घ जीवनके लिये हमें उच्च बनाओ । (यह) हमारी प्रार्थना देवोंतक पहुंचाओ ॥ १४ ॥

हे महातेजस्वी बलवान् अग्ने ! हमें राक्षसोंसे बचाओ । कन्जूस धूर्तोंसे बचाओ । हिंसकों और घातकोंसे हमें सुरक्षित रखो ॥ १५ ॥

घनेव विष्वग्वि जह्यराव्णस्तपुर्जम्भ यो अस्मध्रुक् ।
यो मर्त्यः शिशीते अत्यक्तुभिर्मा नः स रिपुरीशत १६
अग्निर्वव्ने सुवीर्यमग्निः कण्वाय सौभगम् ।
अग्निः प्रावन्मित्रोत मेध्यातिथिमग्निः साता उपस्तुतम् १७
अग्निना तुर्वशं यदुं परावत उग्रादेवं हवामहे ।
अग्निर्नयन्नववास्त्वं बृहद्रथं तुर्वीतिं दस्यवे सहः १८
नि त्वामग्ने मनुर्दधे ज्योतिर्जनाय शश्वते ।
दीदेथ कण्व ऋतजात उक्षितो यं नमस्यन्ति कृष्टयः १९
त्वेषासो अग्नेरमवन्तो अर्चयो भीमासो न प्रतीतये ।
रक्षस्विनः सदमिद् यातुमावतो विश्वं समत्रिणं दह २०

हे तपुर्जम्भ ! अराव्णः विष्वक्, घना इव, वि जहि। यः अस्म-ध्रुक्, यः मर्त्यः अक्तुभिः अति शिशीते, सः रिपुः नः मा ईशत ॥ १६ ॥

हे अपनी गर्मीसे (रोगबीजोंके) नाश करनेवाले ! कञ्जूसोंको चारों ओरसे, गदासे (नाश करनेके) समान, विनष्ट करो। जो हमारा द्रोह करता है, जो रात्रियोंमें (जागता हुआ हमारे) नाशका प्रयत्न करता है, वह शत्रु हमपर कभी प्रभुत्व न करे ॥ १६ ॥

अग्निः सुवीर्यं वव्ने । अग्निः कण्वाय सौभगं; अग्निः मित्रा प्र आवत् । उत अग्निः मेध्यातिथिं, उपस्तुतं सातौ (प्र अवत्) ॥ १७ ॥

अग्नि उत्तम वीर्य देता है। अग्निने कण्वको उत्तम भाग्य दिया, अग्निने हमारे मित्रोंका बचाव किया है। इसी तरह अग्निने मेध्यातिथि और उपस्तुतका विनाश होनेके समय (बचाव किया) ॥ १७ ॥

अग्निना तुर्वशं यदुं उग्रदेवं हवामहे। दस्यवे सहः अग्निः नववास्त्वं बृहद्रथं तुर्वीतिं नयत् ॥ १८ ॥

अग्निके साथ हम तुर्वश, यदु और उग्रदेवको बुलाते हैं। दुष्टोंका दमन करनेका बल (देनेवाले) अग्निदेव नववास्त्व, बृहद्रथ और तुर्वीतिको ठीक रीतिसे चलाते हैं ॥ १८ ॥

हे अग्ने! ज्योतिः त्वां शश्वते जनाय मनुः नि दधे। ऋत-जातः उक्षितः कण्वे दीदेथ। यं कृष्टयः नमस्यन्ति ॥ १९ ॥

हे अग्ने ! ज्योतिस्वरूप तुमको शाश्वत कालसे मानवोंके हितके लिये मनुने स्थापन किया। यज्ञमें प्रकट होकर और (यज्ञमें) तृप्त होकर (तुमने) कण्वको यश दिया। (अतः) जिसको सब मनुष्य नमन करते हैं ॥ १९ ॥

अग्नेः अर्चयः त्वेषासः अमवन्तः भीमासः प्रति-इतये न (शक्याः)। रक्षस्विनः यातु-मावतः सदं इत् सं दह। विश्वं अत्रिणं सं दह ॥ २० ॥

अग्निकी ज्वालाएँ प्रकाशित, बलशाली, और भयंकर हैं उनका विरोध नहीं (किया जा सकता)। राक्षसों और यातना देनेवालोंको जला दो। सर्व भक्षकोंको जला दो ॥ २० ॥

शक्तियोंका संगठन करनेवाला अग्नि

इस सूक्तमें शक्तियोंका संगठन करनेका अग्निका गुणधर्म विशेष प्रमुखतासे वर्णन किया है। प्रथम शरीरमें देखिये, शरीर में गर्मी यह अग्निका गुण रहनेतक ही जीवनका होना संभव है। गर्मी चली गयी, शरीर ठण्डा हो गया, तो जीवन समाप्त हो जाता है। शरीर यह एक उत्तम संगठन ही है, वैदिक दृष्टिसे देखा जाय, तो यहां तैंतीस देवताओंकी शक्तियोंका संगठन ही हुआ है, परस्पर विरुद्ध गुणधर्मवाली देवताएँ यहां हैं। जल और अग्निका परस्पर विरोध प्रसिद्ध है। जल अग्निका नाश करता है और अग्नि, सूर्य तथा वायु जलको सुखाकर नष्ट करते हैं। इस तरह इनका परस्पर विरोध है। वनस्पति और अग्निका भी विरोध है, अग्नि वनस्पतियोंको खा जाता है और उस समय

वायु अग्निकी साथ करता है। इस तरह वायु और मेघका भी परस्पर वैर है, वायु मेघोंको तितरबितर करता है और इकठ्ठा भी करता है। ऐसे ये देव परस्परका विद्वेष करते हैं, पर इस शरीरके संगठनमें ये परस्परकी सहायता कर रहे हैं !! शरीरमें गर्मी—अग्नि-रहनेतक ही ये सब देवतायें संगठनमें रहती हैं। गर्मी चली गयी तो यह संगठन टूट जाता है, इसलिये अग्नि संगठन करनेवाला है।

राष्ट्रमें भी अग्निसे होनेवाले यज्ञ जनताका संगठन करते हैं। राजसूय, अग्निष्टोम, ज्योतिष्टोम आदि अनेकविध यज्ञ जनताका संगठन करते हैं, नरमेधमें सब जातियोंके मानवोंका संगठन होता है। अग्निसे यज्ञ होते हैं और यज्ञोंसे जनताका संगठन होता है, इसलिये अग्निको संगठनका देव माना है वह योग्य ही है। अग्नि सब देवोंके पास पहुंचता है, उनको एकत्रित करता है, यज्ञके लिये उनको निमंत्रण देता है और अपने रथपर उनको बिठलाकर यज्ञस्थानमें लाता है और उनको संगठित करके उनसे यज्ञ कराता है। पाठक इस सूक्तमें अग्निके इस कार्यका वर्णन देख सकते हैं।

जनताका संगठन भी इसी रीतिसे करना चाहिये। किसी महत्त्वपूर्ण कार्यका जोश, विचारोंकी आग, सद्भावनाकी गर्मी जनतामें उत्पन्न करनी चाहिये। और नाना जातियों और नाना धंधोंमें विभक्त हुई जनताको संगठित करना चाहिये। यज्ञके केन्द्रसे जनताके संगठनका यह विधि है। इस तरह विचार करने से अग्निद्वारा व्यक्तिमें, राष्ट्रमें और विश्वमें शक्तियोंका संगठन किस तरह होता है, इसका ज्ञान पाठक प्राप्त कर सकते हैं।

देवत्वकी प्राप्ति

१ देवयतीनां पुरूणां विशां यह्वं अग्निं वचोभिः प्र ईमहे-देवत्वकी प्राप्ति करनेकी इच्छावाली, सब उन्नति-साधनोंसे भरपूर ऐसी प्रजाओंके सामर्थ्यका संवर्धन करनेवाले अग्निकी हम प्रशंसा करते हैं। इसमें प्रत्येक पदका महत्त्व अत्यंत है इसलिये इन पदोंका महत्त्व प्रथम देखिये-

१ देवयती-अपने अन्दर देवत्व स्थापित हो और वह देवत्व बढे, ऐसी इच्छा करनेवाली प्रजाका यह नाम है। मनुष्योंमें राक्षस-मानव, पशु-मानव, जन-मानव, नर-मानव, देव-मानव ऐसे भेद हैं। इन नामोंसे ही इनके लक्षणोंका ज्ञान हो सकता है। मनुष्यको अपने अन्दरके राक्षसपन या पशुपनका त्याग करके अपने अन्दर देवभाव स्थापन करना चाहिये। इसीलिये धर्म है। अर्थात् इस तरह मानवोंमें राक्षस और देव ऐसे दो विभेद रहते हैं। इस मंत्रमें देव मानवोंका ही विचार किया है। सब मानवोंका संगठन नहीं हो सकेगा, परन्तु जो अपने अन्दर देवत्वका विकास करना चाहते हैं, उनका ही संगठन हो सकता है। और जो मानवोंका संगठन करना चाहते हैं, उनको सबसे प्रथम देवत्वकी प्राप्तिके इच्छुक कौन हैं और कौन राक्षसगणके लोग हैं, इनका विवेक करना चाहिये। समान विचारोंका संगठन होगा। कमसे कम अपने विरोधी भावोंको दबाना और सर्वसाधारणके हितके कार्य करनेकी इच्छा करना इतना तो आवश्यक ही है। अर्थात् अपने अन्दर देवभाव उत्पन्न करना यह मानवका पहिला साध्य है। भगवद्गीतामें १६ वे अध्यायमें प्रारंभमेंही दैवी संपत्तिके लक्षण दिये है। ब्राह्मी स्थिति भी जो गीतामें कही वह यहां पाठक देखें।

३ पुरुः— पुर्, पूः (नगर), पुरी (नगरी), पुरु (नागरिक), पूरवः, पौराः (नागरी जनता), इन सबमें 'पुर्' पद है। इसका यौगिक अर्थ 'परिपूर्ण, सब सुख साधनोंसे, उन्नतिके साधनोंसे भरपूर भरे हुवे' यह है। जिस नगरीमें उन्नतिके और उपभोगके सब साधन भरपूर रहते हैं, वह 'पुर्, पूः, पुरी' है; और जिन लोगोंके पास वे साधन भरपूर रहते हैं उनका नाम 'पूरु, पूरवः, पौराः' है। इस मंत्रमें 'पुरु' पद है, इसका भी यही अर्थ है, इनकी संगठना होनी चाहिये। उन्नतिके और सुखके सब साधन नगरमें संग्रहित करना और उनका उपयोग सबको करनेका अवसर मिलना, यह नागरिकों का कर्तव्य है।

४ विश्, विट्- प्रजा, जनता, जो घरबार करके स्थायीरूपसे एक स्थानपर रहती है। खेती-बाडी, व्यापार-व्यवहार, लेनदेन करनेवाली जनता। इनका संगठन करना आवश्यक है। प्रत्येक व्यापार-व्यवहारके कार्यकर्ताओंका संगठन करके पश्चात् सब संघोंका संगठन करना योग्य है। इसीका नाम 'गण-व्यवस्था' है। गण, व्रात, संघ, गणमंडल, गणमहामण्डल ये इनके छोटे बडे गणोंके नाम हैं। इनके मुखियाको गणेश, गणप, गणपति, गणमण्डलेश, गणमहामण्डलाधिप आदि नाम हैं। इससे छोटे बडे संगठनकी संस्थाओंका बोध हो सकता है।

५ देवयतीनां पुरूणां विशां (गणः)- अपने अन्दर देवत्वका संवर्धन करनेवाले साधनसंपन्न प्रजाजनोंके गणोंकी रचना करना संगठनका साध्य है। इसमें छोटे मोठे संघ होंगे।

६ यह्वः अग्निः- सामर्थ्य बढानेवाला शक्तिरूप अग्नि। इसको जनतामें प्रज्वलित करना चाहिये। व्यक्तिमें यह उत्साहरूप है, जनतामें यज्ञस्थलमें प्रदीप्त होनेवाला है। 'यह्व' का अर्थ- 'बडा, महान, समर्थ, शक्तिमान, फुर्तीला, प्रयत्नशील, कार्यतत्पर, सतत प्रयत्नशील' यह है।

७ प्र ईमहे- पूर्वोक्त मानवोंके सतत प्रयत्न करनेके उत्साहरूप अग्निकी हम प्रशंसा करते हैं। अर्थात् इसकी प्रशंसा होना योग्य है। 'प्र-ई' का अर्थ 'प्रगति,' उच्च गति, उत्कर्षकी ओर जाना है। पूर्वोक्त प्रकारके मानवोंकी प्रगति उनके सतत यत्न करनेके उत्साहसे निःसन्देह होगी।

८ अन्ये सीं ईळते- दूसरे भी इसकी स्तुति गाते हैं। क्योंकि यह प्रशंसा योग्य है। 'ईळ्, ईड्, ईर्' ये धातु सदा अन्नके साथ संबन्ध रखते हैं। 'इला, इरा, इडा' ये पद वेदमें भूमिके और अन्नके वाचक हैं। भूमिसे ही अन्न होता है और अन्न उसीको मिलता है जो कि पूर्वोक्त प्रकार उत्साहसे कार्य करते हैं। (मं. १)

९ जनासः सहोवृधं अग्निं दधिरे- लोग बलवर्धक अग्निको अपने अन्दर धारण करते हैं। 'सहः, सहस्' का अर्थ है 'कष्ट सहन करनेका बल'। जिसके पास कष्ट सहन करनेकी शक्ति होगी वही प्रयत्नसे उन्नतिको प्राप्त होगा। जिसमें परिश्रमकी शक्ति नहीं है वह कुछभी कर नहीं सकता।

१० सुमनाः अविता भव- उत्तम मनवाला संरक्षक हो। रखवालीका कार्य करनेवाला उत्तम मनवाला चाहिये, नहीं तो वही बुरे पापी मनवाला हुआ तो रक्षण करनेके स्थानपर भक्षण करेगा और रक्षकका राक्षस बनेगा। (मं. २)

११ होतारं विश्व-वेदसं दूतं वृणीमहे—दाता, सब जाननेहारा ऐसे दूतका हम स्वीकार करते हैं। दूत दाता हो और वह अच्छा ज्ञानी, समझदार हो। राजदूतके भी येही लक्षण हैं।

१२ महः सतः अर्चयः विचरन्ति, भानवः दिवि स्पृशन्ति—जो महात्मा सत्यनिष्ठ होते हैं, उनका तेज चारों ओर फैलता है और उनका प्रकाश आकाशतक पहुंचता है। सत्यपालनकी यह महिमा है। (मं. ३)

१३ यः ददाश, सः विश्वं धनं जयति—जो दान देता है, वह सब धन विजय करके प्राप्त करता है। जो अपने पासके धनादि शक्तियोंका यज्ञ करता है, वह सर्वत्र विजय पाता है। (मं. ४)

१४ देवाः यानि ध्रुवा अकृण्वत, ता विश्वा व्रता त्वे संगतानि—सब अन्य देव जो स्थायी व्रत करते हैं, उन सब व्रतोंका संबंध तुम्हारे पास पहुंचता है अर्थात् ऐसा कोई कार्य नहीं है, जो कि मुख्य देवकी शक्तिके बिना हो सकता हो। 'सर्वदेव-नमस्कारः केशवं प्रति गच्छति' = सब देवोंको किया नमस्कार विष्णुको पहुंचता है, तथा —

येऽप्यन्यदेवताभक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम्॥
(गी. ९।२३)

'अन्य देवताओंके उद्देश्यसे किया हुआ यजन विष्णुकाही यजन होता है।' इन वचनोंके सदृश यह मन्त्रभाग है। (मं. ५)

१५ सुमनाः सुवीर्याः यक्षि-उत्तम मन रखते हुए उत्तम पराक्रमी वीरोंका पूजन करो। जो उत्तम पराक्रमी वीर हैं, उनका ही सत्कार करना चाहिये। (मं. ६)

१६ नमस्विनः स्वराजं उपासते— (नमस्) अन्न पास रखनेवाले अपने तेजसे चमकनेवाले वीरका सत्कार करते हैं। यहां 'नमस्-विन्' का अर्थ 'अन्न-वान्' किया है।

१७ स्रिधः अतितितीर्षवः मनुषः—मनुष्य घातपात और हिंसा करनेवाले शत्रुओंको परास्त करनेकी इच्छा करें। (मं. ७)

१८ घ्नन्तः वृत्रं अतरन्—प्रहार करनेवाले वीरोंने चारों ओरसे घेरनेवाले शत्रुका पराभव किया।

१९ रोदसी क्षयाय उरु चक्रिरे-पृथ्वी और अन्तरिक्ष में (मनुष्योंके) रहनेके लिये बहुत स्थान बनाया। यह वीरता का कार्य है। मानवोंको उचित है कि वे अपने रहनेके लिये विस्तृत स्थान बनावें। अपना निवास अतिसंकुचित स्थानमें न होने दें। (मं. ८)

२० स्व-धा-वः रायः पूर्धि- अपनी शक्तिसे युक्त वीर (हमें) धनोंसे भरपूर भर देवें। मनुष्य अपनी शक्तिसे धनादि कमावे।

२१ देवेषु आप्यं- दिव्य विबुधोंमें (मनुष्य अपनी) मित्रता रखे। देवोंके साथ मित्रता करनेयोग्य अपनी उन्नति मनुष्य करे। मनुष्यमें देवत्वकी दैवी-संपत्तिकी-स्थापना हुए बिना देवोंकी मित्रता होना असंभव है।

१२ **शुभ्रस्य वाजस्य राजसि-** प्रशंसनीय बलसे तेजस्वी बनो। ऐसे श्रेष्ठ पराक्रम करो कि जिससे तुम्हारी कीर्ति चारों ओर फैले। (मं. १२)

१३ **नः ऊतये ऊर्ध्वः तिष्ठ-** हमारी सुरक्षाके लिये उच्च बनो। स्वयं उच्च बनकर हमारी रक्षा करो। स्वयं उच्च बनना और पश्चात् दूसरोंकी सुरक्षाका यत्न करना मनुष्यको योग्य है। (मं. १३)

१४ **केतुना नः अंहसः निपाहि—** ज्ञान देकर हमें पापसे बचाओ। मनुष्य ज्ञानसे ही पापसे अपनी सुरक्षा कर सकते हैं।

१५ **विश्वं अत्रिणं सं दह—** सब भकोसनेवालोंका नाश करो। सब रोगबीजोंको अग्निकी ज्वालासे जला दो। अत्रिन् = खानेवाला, भकोसनेवाला, रक्त खानेवाला कृमि, रोग बीज, राक्षस।

१६ **चरथाय जीवसे नः ऊर्ध्वान् कृधि—** उत्तम चाल चलन और दीर्घ जीवनके लिये हम सबको उच्च बनाओ। उत्तम श्रेष्ठ बननेसे उत्तम आचार होगा और दीर्घ जीवन प्राप्त होगा। (मं. १४)

१७ **रक्षसः अराव्णः धूर्तेः रिषतः जिघांसतः नः पाहि—** राक्षसों, कंजूसों, धूर्तों, घातकों और हिंसकोंसे हमें बचाओ। ये पद रोगबीजोंके भी वाचक हैं। (मं. १५)

१८ **अराव्णः विष्वक् विजहि—** कंजूसोंको चारों ओरसे दूर करो।

१९ **यः अस्म-ध्रुक् मर्त्यः अक्तुभिः अति शिशीते सः रिपुः नः मा ईशत—** जो द्रोह करनेवाला हमारा शत्रु रातोंरात जागता हुआ हमारे घातपातका विचार करता हो, उसका शासन हमारे ऊपर न हो। अर्थात् ऐसे शत्रुका सर्वतोपरि नाश हो जाय। (मं. १६)

२० **सुवीर्यं ववे, सौभगं (ददाति), मित्राणि प्रावत्—** वह उत्तम पराक्रम करता है, सौभाग्य देता है और मित्रोंकी सुरक्षा करता है। (मं. १७)

इस तरह मानवधर्मका सर्व सामान्य बोध करनेवाले मन्त्रभाग इस सूक्तमें विशेष स्मरण रखनेयोग्य हैं। पाठक इस रीतिसे विचार करेंगे, तो उनको किसी देवताके वर्णन करनेवाले मंत्रोंसे मानवधर्मका उपदेश कैसा प्राप्त करना चाहिये, इसका बोध हो सकता है।

ऋषियोंके नाम

इस सूक्तमें निम्नलिखित ऋषियोंके नाम आये हैं-

१ **मेध्यातिथिः कण्वः (त्वां) वृधे। —** कण्व गोत्रके मेध्यातिथि ऋषिने अग्निकी उपासनाविधिका स्वीकार किया है। (मं. १०)

२ **मेध्यातिथिः कण्वः ऋतात् अधि अग्निं ईधे-** कण्वगोत्रके मेध्यातिथि ऋषिने यज्ञमें अग्निको प्रदीप्त किया। '**तं इमाः ऋचः**' उसका वर्णन ये ऋचाएं करती हैं। यहां इस सूक्तकी ऋचाओंका निर्देश है अथवा दूसरे मंत्रोंका निर्देश है इसकी खोज होनेयोग्य है। (मं. ११)

३ **अग्निः कण्वाय सौभगं, मेध्यातिथिं प्रावत्-** अग्निने कण्वको सौभाग्य दिया, मेध्यातिथिकी सुरक्षा की। (मं.१७)

यह सूक्त घोरपुत्र कण्व ऋषिका है। मेधातिथि और मेध्यातिथि ये दोनों ऋषि कण्वगोत्रके हैं, जिनके नामोंमेंसे मेध्यातिथिका नाम इस सूक्तमें पूर्वोक्त मंत्रोंमें आया है। इसके अतिरिक्त **धनस्पृत** (मं. १०), **उपस्तुत** (मं. १०;१७), **तुर्वश, यदु, उग्रदेव, नववास्त्व, बृहद्रथ, तुर्वीति** (मं. १८) ये नाम भी आये हैं। इनमें तुर्वश आदि नाम राजाओंके होंगे। यदु और तुर्वश वेदमंत्रोंमें बहुत वार आये हैं। कई भाष्यकार इन पदोंको गुणबोधक मानते हैं। जैसे (तुर्- वश) त्वरासे शत्रुको वश करनेवाला, (बृहत्- रथ) बडे रथवाला, (नव- वास्त्व) नवीन घरमें रहनेवाला इस तरह इनके गुणबोधक अर्थ होते हैं।

रोगबीजोंका नाश करना

इस सूक्तमें कहा है कि अग्नि रोगबीजोंका नाश करता है।

१ **विश्वं अत्रिणं सं दह—** सब भक्षक कृमियोंको जला दो। '**अत्रिन्**' वह रोगबीज है, कि जो शरीरके खून और मांसको खा जाता है और शरीरको कृश करता है। (मं. १४, २०)

२ **रक्षसः पाहि-** राक्षसोंसे बचाओ। यहां रक्षस् पद क्षुद्र कृमियोंका वाचक है, ये रोग बढानेवाले कृमि हैं। (मं.१५)

३ **रक्षस्विनः यातु-मावतः सं दह-** यातना देनेवाले राक्षसोंको जला दो। जिनसे शरीरमें यातना या पीडा होती है, वे रोगबीज ये हैं।

अग्निकी ज्वालाएं इन रोगबीजोंको जलाकर नष्ट भ्रष्ट कर देती हैं। इसीलिये यज्ञसे आरोग्य प्राप्त होता है।

सजे हुवे ऋत्विज्

' अञ्जिभिः वाघद्भिः विह्वयामहे ' (मं. १३)– अलंकारों, वस्त्रों, चन्दनादि विलेपनोंसे ऋत्विज अपने शरीरोंको सजाते थे ऐसा इस मंत्रसे प्रतीत होता है। 'अञ्जि'= अंगलेप, विलेपन, उबटना, चमकनेवाला लेपन, चन्दन, चन्दनका विलेपन, तिलक, रंगोंवाला विलेपन।

(२) वीर काव्य

(ऋ. १।३७) कण्वो घौरः। मरुतः। गायत्री।

क्रीळं वः शर्धो मारुतमनर्वाणं रथेशुभम्। कण्वा अभि प्र गायत १
ये पृषतीभिर्ऋष्टिभिः साकं वाशीभिरञ्जिभिः। अजायन्त स्वभानवः। २
इहेव शृण्व एषां कशा हस्तेषु यद् वदान्। नि यामञ्चित्रमृञ्जते ३
प्र वः शर्धाय घृष्वये त्वेषद्युम्नाय शुष्मिणे। देवत्तं ब्रह्म गायत ४
प्र शंसा गोष्वघ्न्यं क्रीळं यच्छर्धो मारुतम्। जम्भे रसस्य वावृधे ५
को वो वर्षिष्ठ आ नरो दिवश्च ग्मश्च धूतयः। यत् सीमन्तं न धूनुथ ६
नि वो यामाय मानुषो दध्र उग्राय मन्यवे। जिहीत पर्वतो गिरिः ७

अन्वयः– हे कण्वाः! वः मारुतं क्रीळं अनर्वाणं रथे शुभं शर्धं अभि प्र गायत॥ १॥

हे स्व-भानवः! पृषतीभिः ऋष्टिभिः वाशीभिः अञ्जिभिः साकं अजायन्त॥ २॥

एषां हस्तेषु कशाः यत् वदान् इह इव शृण्वे, यामन् चित्रं नि ऋञ्जते॥ ३॥

वः शर्धाय, घृष्वये, त्वेषद्युम्नाय शुष्मिणे, देवत्तं ब्रह्म प्र गायत॥ ४॥

यत् गोषु क्रीळं मारुतं रसस्य जम्भे ववृधे, (तत्) अघ्न्यं शर्धः प्र शंस॥ ५॥

हे नरः! दिवः च ग्मः च धूतयः, वः आ वर्षिष्ठः कः? यत् सीं अन्तं न धूनुथ?॥ ६॥

वः उग्राय मन्यवे यामाय मानुषः नि दध्रे, पर्वतः गिरिः जिहीत॥ ७॥

अर्थ— हे कण्वो! तुम्हारे (उपास्य देव) मरुतोंके सामूहिक रहनसहनसे उत्पन्न, क्रीडा कुशलतासे युक्त, आपसके कलहोंसे रहित, रथमें सुहानेवाले बलका (काव्य-) गायन करो॥ १॥

अपने तेजसे युक्त, (मरुत् वीर) धब्बोंवाली हिरनियोंके साथ भालों और कुल्हाडों तथा वीर भूषणोंके साथ साथ प्रकट हुए हैं॥ २॥

इनके हाथोंमें रहनेवाले कोडे, जब शब्द करने लगते हैं, (तब उस शब्दको मैं) यहीं रहकर सुनता हूँ। इसकी युद्धभूमिमें विलक्षण (शूरता) प्रकट होती है॥ ३॥

तुम्हारा बल बढानेके लिये, शत्रुदलका विनाश करनेके लिये और तेजस्वी सामर्थ्य प्राप्त करनेके लिये देवताविषयक ज्ञान(-मय स्तोत्रका) गान करो॥ ४॥

जो बल गौओंमें पाया जाता है, जो खिलाडीपनसे मरुतोंके संघोंमें प्रकट होता है, जो (गो-)रसके सेवनसे बढता है, उस विनाश न करनेवाले सामर्थ्यकी प्रशंसा करो॥ ५॥

हे नेताओं! द्युलोकको और भूलोकको भी तुम कम्पित करनेवाले हो, ऐसे तुममें भला श्रेष्ठ कौन है, जो सदा वृक्षोंके अग्रभाग (को हिलाने) के समान शत्रुदलको न हिला सकता हो?॥ ६॥

तुम्हारे भयानक आवेशसे युक्त आक्रमणसे डरकर मानव (तो किसी न किसीके सहारे) रहताही है, (क्योंकि) पर्वत और पहाड (को भी तो तुम) हिला देते हो॥ ७॥

येषामज्मेषु पृथिवी जुजुर्वाँ इव विश्पतिः । भिया यामेषु रेजते ८
स्थिरं हि जानमेषां वयो मातुर्निरेतवे । यत् सीमनु द्विता शवः ९
उदु त्ये सूनवो गिरः काष्ठा अज्मेष्वत्नत । वाश्रा अभिज्ञु यातवे १०
त्यं चिद् घा दीर्घं पृथुं मिहो नपातममृध्रम् । प्र च्यावयन्ति यामभिः ११
मरुतो यद्ध वो बलं जनाँ अचुच्यवीतन । गिरीँरचुच्यवीतन १२
यद्ध यान्ति मरुतः सं ह ब्रुवतेऽध्वन्ना । शृणोति कश्चिदेषाम् १३
प्र यात शीभमाशुभिः सन्ति कण्वेषु वो दुवः । तत्रो षु मादयाध्वै १४
अस्ति हि ष्मा मदाय वः स्मसि ष्मा वयमेषाम् । विश्वं चिदायुर्जीवसे १५

येषां यामेषु अज्मेषु पृथिवी, जुजुर्वान् इव विश्पतिः, भिया रेजते ॥ ८ ॥	जिनके आक्रमणोंके अवसरपर और चढाईके समयमें यह भूमि, दुर्बल राजाके समान, भयसे कांपने लगती है ॥ ८ ॥
एषां जानं स्थिरं हि, मातुः वयः निः एतवे यत् शवः सीं द्विता अनु ॥ ९ ॥	इनकी जन्मभूमि स्थिर है । जैसे मातासे पक्षी दूर जानेका यत्न करते हैं, (तो भी माताके पास उनका मन रहता है,) उसी तरह इनका बल सदैव दोनों (मातृभूमि और विजय-स्थानमें) विभक्तसा हो जाता है ॥९॥
त्ये गिरः सूनवः अज्मेषु काष्ठाः, वाश्राः अभि-ज्ञु यातवे, उत् उ अत्नत ॥ १० ॥	उन वाणीके पुत्र (वक्ता मरुतोंने) शत्रुपर करनेके आक्रमणोंमें अपनी (अन्तिम) सीमाएं ही पकड लीं हैं, जैसा कि गौओंको घुटनेतकके पानीमें जाना सुगम होता है, उसी तरह (वे सुगमतासे चारों ओर) पहुंचते हैं ॥ १० ॥
त्यं चित् घ दीर्घं पृथुं अ-मृध्रं मिहः न-पातं यामभिः प्र च्यवयन्ति ॥ ११ ॥	उस बडे लंबेचौडे, फैले हुवे, विनष्ट न होनेवाले, जल वृष्टि न करनेवाले मेघोंको (भी अपने) हमलोंसे (ये) हिला देते हैं ॥११॥
हे मरुतः ! यत् ह वः बलं जनान् अचुच्यवीतन, गिरीन् अचुच्यवीतन ॥ १२ ॥	हे मरुतों ! जो सचमुच तुम्हारा बल लोगोंको हिला देता है, वह पर्वतोंको भी कंपाता है ॥ १२ ॥
यत् ह मरुतः यान्ति अध्वन् आ सं ब्रुवते ह, एषां कः चित् शृणोति ? ॥ १३ ॥	जिस समय सचमुच मरुत् संचार करते हैं, तब वे मार्गमेंही मिलकर बोलते हैं, इनका शब्द (कौन दूसरा) सुनता है ? (कोई नहीं ।) ॥ १३ ॥
आशुभिः शीभं प्र यात, कण्वेषु वः दुवः सन्ति, तत्रो सु मादयाध्वै ॥ १४ ॥	तीव्र गतिसे वेगपूर्वक चलो, कण्वोंके मध्यमें आपका सत्कार (होनेवाला) है । वहां तुम भली भान्ति तृप्त होवो ॥ १४ ॥
वः मदाय अस्ति हि स्म, विश्वं चित् आयुः जीवसे, एषां वयं स्मसि स्म ॥ १५ ॥	तुम्हारी तृप्तिके लिये (यह हमारा अर्पण) है, सुखपूर्वक संपूर्ण आयु बितानेके लिये हम इनके (अनुयायी होकर) रहेंगे ॥ १५ ॥

मरुत् देवोंका गण

' मरुत् ' (मर्+उत्) मरनेतक उठकर लडनेवाले बडे भारी वीर हैं । ये समुदायसे रहते हैं । सब मिलकर एकही बडे भारी घरमें रहते हैं। साथ साथ शत्रुपर हमला करते हैं, सबका पोषाख एक जैसा रहता है, खानपान समान होता है, सबके पास शस्त्रास्त्र समान रहते हैं । इनकी कतार सातोंकी मिलकर एक होती है, प्रत्येक कतारके दोनों ओर दो वीर रहते हैं। इनको ' पार्श्व-रक्षक ' अर्थात् दोनों बाजुओंसे होनेवाले हमलोंसे बचानेवाले वीर कहते हैं । इस तरह १+७+१=९ नौ वीरोंकी एक कतार होती है, ऐसी इनकी ७ कतारें होती हैं । अर्थात् ७ कतारोंमें मिलकर (९×७=) ६३ सैनिक होते हैं। इनके

संख्याके अनुसार संघके नाम होते हैं—

१ शर्ध- ७वीरोंका एकी पंक्ति, २ पार्श्वरक्षक, मिलकर ९ वीर हुए। (१+७+१=) ९×७ कतारें=६३ वीरोंका एक शर्ध होता है। इसमें (७×७=) ४९ सैनिक और (७×२=) १४ पार्श्वरक्षक मिलकर ६३ वीर रहते हैं। इसका नाम 'शर्ध' है।

२ व्रात— (६३×७ =) ४४१ सैनिकोंका एक व्रात कहलाता है।

३ गण—(६३×१४=) ८८२ सैनिकोंका, अथवा १४ व्रातोंका एक गण कहलाता है।

४ महागण— (६३×६३=) ३९६९ सैनिकोंका महागण कहलाता है।

इस तरह सातोंके विविध अनुपातोंमें इनके अनेक छोटे मोटे सैनिक विभाग होते हैं। इससे भी 'महागणमंडल' आदि अनेक विभागोंके नाम हैं।

शस्त्रास्त्र

इनके शस्त्रास्त्र ये हैं। ऋष्टिः= भाला, वाशीः= कुल्हाडा, ये शस्त्र और अञ्जि— गणवेश भी सबका समानही रहता है। अन्यत्र अन्य शस्त्रोंका भी वर्णन है। तलवार, वज्र आदि भी ये बर्तते थे और लोहेके शिरस्त्राण भी ये बर्तते थे।

बल

मरुतोंका बल संघके कारण है। समूहमें रहना, समूहमें जाना, समूहसे क्रीडा करना आदिके कारण जो इनका संगठन है उसका यह बल है। इस सूक्तका मंत्रवार आशय ऐसा है-

१ ऋषि कण्वोंसे कहता है कि मरुतोंके काव्यका गान करो क्योंकि उनका बल संघसे उत्पन्न हुआ है तथा ये आपसमें कभी लडते नहीं, रथोंमें बैठकर वीरताको प्रकट करते हैं। अर्थात् इनके काव्यका गान करनेसे मानवोंमें संगठनका बल बढेगा, खेलोंमें रुचि बढनेसे वृत्ति आनन्दयुक्त बनेगी, और उससे उत्साह बढेगा। इसलिये मरुतोंके काव्यका गान करना वीरताको बढानेवाला है।

२ ये वीर भाले, बर्चियां, कुल्हाडें तथा अपना अन्य पोषाख समसमानही धारण करते हैं और जब बाहर आते हैं, तब सजे सजाये साथ साथ प्रगट होते हैं। ये कभी अकेले नहीं रहते। इनका सबही रहना सहना सांघिक होता है।

३ ये हाथोंमें चाबूक लेकर अपने घोडोंको दौडाते हुए आते हैं। उस समय इनके कोडोंका शब्द दूरसे भी सुनाई देता है। युद्धके समय तो इनकी वीरता विशेषही प्रकट होती है।

४ वीरोंके संघका बल बढानेके लिये, शत्रुपर हमला करनेके लिये और प्रतापका सामर्थ्य वृद्धिंगत करनेके लिये इन वीरोंके काव्योंका गान करते जाओ। वीरोंके काव्य गानेसे सुननेवालोंमें वीरता बढ जाती है। यह है वीरोंके काव्यका महत्त्व।

५ गौके दूध आदि गोरसमें एक बडाभारी सामर्थ्य है। संघमें रहनेसे और एक बल बढता है। पहिला बल गोरस पीनेसे बढता है और दूसरा सांघिक जीवनसे बढता है, इस सब प्रकारके बलकी वृद्धि करनी चाहिये। कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये कि जिससे शक्तिका नाशही हो जाय।

६ ये वीर भूमि और आकाशको हिला छोडते हैं। ये सब समान होनेके कारण इनमें कोई भी छोटा या बडा नहीं होता। इनमें एक भी वीर ऐसा नहीं है कि जो शत्रुको समूल हिलाता न होगा।

७ इनका हमला शत्रुपर होने लगा, तो साधारण मानव किसीके आश्रममें जाकर रहते हैं, क्योंकि ये वीर पहाडोंको भी उखाड देते हैं। अर्थात् इनके हमलोंसे सभी भयभीत होते हैं।

८ इनके हमलोंके समय भूमि भी कांप उठती हैं, और मरियल पालकके समान सभी भयभीत होते हैं।

९ इनका जन्मस्थान सुस्थिर है, पर ये दूर दूर हमला करनेके लिये दौडते हैं। जिस तरह पक्षीके छोटे बच्चे भक्ष्यके लिये दूर जाते हैं तो भी अपनी मातापर उनका ध्यान रहता है; वैसाही ये वीर दूर हमलेके लिये गये तो भी मातृभूमिपर उनका ध्यान रहताही है।

१० ये बडे वक्ता हैं, ये अपने पराक्रममें अपनी पराकाष्ठा करते हैं। जिस तरह घुटने जितने पानीमें गौवें घूमती हैं, उसी तरह सर्वत्र ये वीर घूमते हैं और पराक्रम करते रहते हैं।

११ ये (वायुरूपमें) बडे भारी मेघोंको तितरबितर करते हैं। वैसेही ये वीर शत्रु कितना भी प्रबल हुआ, तो भी उसको उखाडही देते हैं।

१२ जो उनका बल शत्रुओंको हटाता है वही बल पर्वतोंको भी लांघता है।

१३ ये वीर जब कतारोंमें मार्गपरसे चलते हैं, तब वे आपसमें इतनी छोटी आवाजसे बोलते हैं, कि इस समय इनका शब्द तीसरा आदमी सुन नहीं सकता । दो वीर आपसमें बात करने लगे तो तीसरा सुन नहीं सकता ।

१४ वीरों ! शीघ्र आगे बढो, उपासकोंको आशीर्वाद दो, उपासकोंके स्थानपर तृप्त हो जाओ ।

१५ वीरोंकी तृप्ति करनेके लियेही हम उनके लिये यह अर्पण कर रहे हैं । हमें दीर्घ आयु प्राप्त हो और इस आयुमें हम इन वीरोंके ही होकर रहेंगे ।

यह है इस सूक्तका आशय । मरुतोंका काव्य वीरता बढानेवाला है । '**आशुभिः शीभं प्रयात**' अथवा '**शीभं प्रयात**' (Quick march) शीघ्र गतिसे या शीघ्र गतिवाले वाहनोंसे आगे बढो ' अथवा 'शीघ्रतासे बढो' यह सैनिकीय आदेश यहां है ।

(३) वीर–काव्य

(ऋ. १। ३८) कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री ।

कद्ध नूनं कधप्रियः पिता पुत्रं न हस्तयोः । दधिध्वे वृक्तबर्हिषः । १
क्व नूनं कद् वो अर्थं गन्ता दिवो न पृथिव्याः । क्व वो गावो न रण्यन्ति २
क्व वः सुम्ना नव्यांसि मरुतः क्व सुविता । को३ विश्वानि सौभगा ३
यद् यूयं पृश्निमातरो मर्तासः स्यातन । स्तोता वो अमृतः स्यात् ४
मा वो मृगो न यवसे जरिता भूदजोष्यः । पथा यमस्य गादुप ५
मो षु णः परापरा निर्ऋतिर्दुर्हणा वधीत् । पदीष्ट तृष्णया सह ६

अन्वयः– हे कध-प्रियः वृक्त-बर्हिषः ! पिता पुत्रं न, हस्तयोः कद् ह नूनं दधिध्वे ? ॥ १ ॥

नूनं क्व ? वः कद् अर्थम् ? दिवः गन्त, न पृथिव्याः, वः गावः क्व न रण्यन्ति ॥ २ ॥

हे मरुतः ! वः नव्यांसि सुम्ना क्व? सुविता क्व ? विश्वानि सौभगा क्वो ? ॥ ३ ॥

हे पृश्निमातरः ! यूयं यद् मर्तासः स्यातन, वः स्तोता अ-मृतः स्यात् ॥ ४ ॥

मृगः यवसे न, वः जरिता अ-जोष्यः मा भूत्, यमस्य पथ्या (मा) उप गात् ॥ ५ ॥

परापरा दुर्हणा निर्ऋतिः नः मो सु वधीत्, तृष्णया सह पदीष्ट ॥ ६ ॥

अर्थ– हे स्तुतिसे प्रसन्न होनेवाले और आसनोंपर विराजमान मरुतों ! पिता पुत्रको जैसे अपने हाथोंसे (उठाता है, उस तरह तुम हमें) कब भला उठाओगे ? ॥१॥

(भला तुम) किधर (जाओगे)? तुम्हारा उद्देश्य क्या है ? तुम भलेही द्युलोकसे प्रस्थान करो, लेकिन इस भूलोकसे कभी न चले जाओ । आपकी गौवें भला कहां नहीं रम्भाती हैं? ॥२॥

हे मरुत् वीरो ! तुम्हारी नवीन सुख बढानेवाली (आयोजनाएँ) कहाँ हैं ? तुम्हारी सुविधाएँ कहां हैं ? तुम्हारे सभी सौभाग्य कहां हैं ? ॥३॥

हे मातृभूमिके वीरो ! तुम यद्यपि मरण-धर्मशील हो, तथापि तुम्हारा स्तोता भक्त निःसन्देह अमर होगा ॥ ४ ॥

हिरन जैसा तृणको (असेवनीय नहीं समझता), वैसा ही तुम्हारी स्तुति करनेवाला भक्त तुम्हारे लिये अप्रिय न होवे, और वैसेही वह यमके मार्गसे भी न चला जावे (उसकी अपमृत्यु न होने पावे) ॥५॥

पराकाष्ठाकी, हटानेके लिये कठिन दुर्दशा भी हमारा नाश न करे, तृष्णाके साथही उस दुर्दशाका विनाश हो जाए ॥६॥

सत्यं त्वेषा अमवन्तो धन्वञ्चिदा रुद्रियासः । मिहं कृण्वन्त्यवाताम् ७
वाश्रेव विद्युन्मिमाति वत्सं न माता सिषक्ति । यदेषां वृष्टिरसर्जि ८
दिवा चित् तमः कृण्वन्ति पर्जन्येनोदवाहेन । यत् पृथिवीं व्युन्दन्ति ९
अध स्वनान्मरुतां विश्वमा सद्म पार्थिवम् । अरेजन्त प्र मानुषाः १०
मरुतो वीळुपाणिभिश्चित्रा रोधस्वतीरनु । यातेमखिद्रयामभिः ११
स्थिरा वः सन्तु नेमयो रथा अश्वास एषाम् । सुसंस्कृता अभीशवः १२
अच्छा वदा तना गिरा जरायै ब्रह्मणस्पतिम् । अग्निं मित्रं न दर्शतम् १३
मिमीहि श्लोकमास्ये पर्जन्य इव ततनः । गाय गायत्रमुक्थ्यम् १४
वन्दस्व मारुतं गणं त्वेषं पनस्युमर्किणम् । अस्मे वृद्धा असन्निह १५

धन्वन् चित्, त्वेषाः अम-वन्तः रुद्रियासः, अ-वातां मिहं आ कृण्वन्ति, सत्यम् ॥ ७ ॥

यत् एषां वृष्टिः असर्जि, वाश्रा इव, विद्युत् मिमाति, माता वत्सं न, सिसक्ति ॥ ८ ॥

यत् पृथिवीं व्युन्दन्ति उद-वाहेन पर्जन्येन दिवा चित् तमः कृण्वन्ति ॥ ९ ॥

मरुतां स्वनात् अधः पार्थिवं विश्वं सद्म आ (अरेजत), मानुषाः प्र अरेजन्त ॥ १० ॥

हे मरुतः ! वीळुपाणिभिः चित्राः रोधस्वतीः अनु अ-खिद्र-यामभिः यात ईम् ॥ ११ ॥

एषां वः रथाः, नेमयः, अश्वासः, अभीशवः, स्थिराः सुसंस्कृताः सन्तु ॥ १२ ॥

ब्रह्मणः पतिं अग्निं, दर्शतं मित्रं न, जरायै तना गिरा अच्छ वद ॥ १३ ॥

आस्ये श्लोकं मिमीहि, पर्जन्यः इव ततनः, गायत्रं उक्थ्यं गाय ॥१४॥

त्वेषं पनस्युं अर्किणं मारुतं गणं वन्दस्व, इह अस्मे वृद्धाः असन् ॥ १५ ॥

मरु देशमें भी तेजस्वी और बलिष्ठ मरुत् वीर वायुरहित अवस्थामें भी वृष्टि करते हैं, वह सत्य है ॥७॥

जब इन (मरुतोंकी सहायतासे) वृष्टि होती है, तब रंभानेवाली गौके समान, बिजली बडा शब्द करती है और माता बालक(को अपने पास रखने)के समान (मेघोंमेंही) रहती है।८

(ये वीर) जब भूमिको भिगाते हैं, तब जलसे भरे मेघोंसे दिनके समयमें भी अन्धेरा किया जाता है ॥ ९ ॥

मरुतोंकी गर्जनासे नीचेवाला पृथ्वीरूपी संपूर्ण घर हिलने लगता है और मानव भी कांप उठते हैं ॥ १० ॥

हे मरुत् वीरों ! बलवाले बाहुओंके साथ सुन्दर नदियोंके तटोंपरसे विना थकावट तुम गमन करते हो ॥ ११ ॥

ये तुम्हारे रथ, रथके आरे, घोडे, लगाम सभी सुदृढ और शुभसंस्कारवाले हों ॥ १२ ॥

ज्ञानके पति अग्निके विषयमें, सुन्दर मित्रके समान, स्तुति करनेके लिये सतत अपनी वाणीसे (स्तुतिके वाक्य) बोलो॥१३॥

मुखमें ही प्रथम श्लोकको (अक्षरोंके प्रमाणसे) बनाओ, उसका पर्जन्यके समान फैलाव करो और गायत्री छन्दमें रचे काव्यका गायन करो ॥ १४ ॥

तेजस्वी, स्तुतियोग्य, पूज्य मरुतोंके दलका वन्दन करो, यहां हमारे वृद्ध हमारे समीप ही रहें ॥ १५ ॥

मर्त्य और अमर

यूयं मर्तासः स्यातन, वः स्तोता अ-मृतः स्यात् । (मं. ४)

मरुत् स्वयं मर्त्य हैं, पर उनके पराक्रम ऐसे हैं कि उनके पराक्रमोंके काव्योंका गायन करनेवाले अमर हो जायँ। यह चतुर्थ मंत्रमें कहा है। ऋभुदेवोंके विषयमें भी वेदमन्त्रमें ऐसाही कहा है—

मर्तासः सन्तो अमृतत्वं आनशुः ॥

(ऋ. १।११०।४)

(सायनभाष्य) एवं कर्माणि कृत्वा मर्तासो मनुष्या अपि सन्तः अमृतत्वं देवत्वं आनशुः आनशिरे । कृतैः कर्मभिः लेभिरे ॥

ऋभुदेव प्रथम मनुष्य थे। पर शुभकर्म करनेसे वे देवत्व प्राप्त कर सके। सभी मनुष्य इस बातका स्मरण रखें। नरका नारायण बननेका भाव यहां है। मरुत् देव स्वयं मर्त्य हैं, पर उनका उपासक अमर होगा ऐसा कहा है, इसमें मरुत् भी देवत्वकी प्राप्ति कर चुके थे, यह बात मानी गयी है। क्योंकि अब मरुत् स्वयं देवही हैं और इन्द्रादि देवोंकी पंक्तिमें बैठनेके अधिकारी हैं। ऋभुदेवोंकी बात भी ऐसी ही है। यहां मनुष्योंको देवत्वकी प्राप्ति होनेकी बात स्पष्ट हुई है, जैसे मरुत् और ऋभु प्रथम मानव होते हुए पश्चात् शुभकर्मोंके कारण देव बने, वैसे ही अन्य मनुष्य भी बन सकते हैं।

तृष्णाके साथ दुर्गतिका नाश

'**निर्ऋतिः तृष्णया सह पदीष्ट**' (मं. ६) विपदा तृष्णाके साथ विनष्ट हो जाय। सब विपत्तियोंकी जडमें अतितृष्णा है। सब जगतके झगडे अतितृष्णासे होते हैं। इसलिये दुर्दशाका नाश तब होगा जब कि तृष्णाका नाश होगा। यह भाव हरएकको यहां देखनेयोग्य है।

सूक्तका भाव

जिस तरह पिता अपने निज पुत्रका प्रेमसे पालन करता है, उसी तरह वीर राष्ट्रके लोगोंका पालन करें (१), बिना उद्देश्यके कभी किसी जगह न जाओ। वीर हमारे स्थानपर अवश्य रहें, हम से दूर न हों। अपनी गौवें कहां चरती हैं, कौनसा पानी पीती है, क्या खाती हैं इसका ध्यान रखो (२), सुख और आनन्द बढाने के लिये नयी नयी आयोजनाएं करते रहो (३), ऐसा पुरुषार्थ करो कि जिसका वर्णन करने और सुननेवाले अमर बनें (४), प्रभुका भक्त प्रभुको प्रिय होता है और वह मृत्युके पास भी नहीं जाता (५), हम प्रभुके भक्त होनेके कारण हमारे पास कभी किसीतरह की दुर्दशा नहीं आवेगी, क्योंकि हमने तृष्णा छोड दी है इस कारण दुर्दशा भी हमसे दूर ही रहेगी (६), मरुदेशमें भी वृष्टि करनेवाले ये मरुत् देव (वायु) हैं (७), जब वृष्टि होती है तब मेघोंमें बिजली चमका करती है (८), जब बडी वृष्टि होती है तब बडे मेघ आकाशमें आनेके कारण दिनमें भी अन्धेरा होता है (९), मेघगर्जनासे पृथ्वीपरका सब कुछ, मानव भी कांपते हैं (१०), वृष्टि होनेके समय वेगसे वायु बहते हैं, नदियां भी बढती हैं (११), वीरोंके रथ, आरे, घोडे, लगाम आदि सब उत्तम और सुदृढ हों, (१२) ज्ञानीकी सदा प्रशंसा करो (१३), काव्य करनेके समय पहिले मनही मनमें श्लोकको रचना अक्षरोंके प्रमाणसे करो और पश्चात् उसको प्रकट रूपमें कहो (१४), तेजस्वी वीरोंके संघको वन्दन करो। (१५)

मरुत् वीर मूलतः आधिदैविक जगत्में वायु हैं, अतः इनमें से कई मंत्र वायुपरक हैं। वायु वृष्टि करता है, इसलिये वृष्टिका भी वर्णन यहां है। शेष वर्णन वीरोंका है। अधिदैवतमें वायु, अधिभूतमें शूरवीर, और अध्यात्ममें प्राण ये मरुतोंके रूप हैं।

(४) वीर-काव्य

(ऋ. १।३९) कण्वो घौरः। मरुतः। प्रगाथः= विषमा बृहत्यः, समाः सतोबृहत्यः।

प्र यदित्था परावतः शोचिर्न मानमस्यथ।
कस्य क्रत्वा मरुतः कस्य वर्पसा कं याथ कं ह धूतयः ॥ १

अन्वयः- हे धूतयः मरुतः! यत् मानं परावतः इत्था शोचिः न प्र अस्यथ, कस्य क्रत्वा, कस्य वर्पसा, कं याथ, कं ह? ॥ १॥

अर्थ— हे शत्रुओंको जडसे उखाडनेवाले वीर मरुतों! जब तुम अपना बल अत्यंत दूर स्थानसे बिजलीकी भान्ति यहांपर फेंकते हो, तब भला यह किस उद्देश्यसे, किस आयोजनासे, कहां जानेके लिये, या किसके निकट पहुंचनेके लिये (फेंकते हो)? ॥ १॥

स्थिरा वः सन्त्वायुधा पराणुदे वीळू उत प्रतिष्कभे ।
युष्माकमस्तु तविषी पनीयसी मा मर्त्यस्य मायिनः २
परा ह यत् स्थिरं हथ नरो वर्तयथा गुरु ।
वि याथन वनिनः पृथिव्या व्याशाः पर्वतानाम् ३
नहि वः शत्रुर्विविदे अधि द्यवि न भूम्यां रिशादसः ।
युष्माकमस्तु तविषी तना युजा रुद्रासो नू चिदाधृषे ४
प्र वेपयन्ति पर्वतान् वि विञ्चन्ति वनस्पतीन् ।
प्रो आरत मरुतो दुर्मदा इव देवासः सर्वया विशा ५
उपो रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं प्रष्टिर्वहति रोहितः ।
आ वो यामाय पृथिवी चिदश्रोदबीभयन्त मानुषाः ६
आ वो मक्षू तनाय कं रुद्रा अवो वृणीमहे ।
गन्ता नूनं नोऽवसा यथा पुरेत्था कण्वाय बिभ्युषे ७

वः आयुधा पराणुदे स्थिरा, उत प्रतिष्कभे वीळू सन्तु, युष्माकं तविषी पनीयसी अस्तु, मायिनः मर्त्यस्य मा ॥२॥

हे नरः! यत् स्थिरं परा हत, गुरु वर्तयथ, पृथिव्याः वनिनः वि याथन, पर्वतानां आशाः वि (याथन) ह ॥३॥

हे रिशादसः! अधि द्यवि वः शत्रु नहि विविदे, भूम्यां न, हे रुद्रासः! युष्माकं युजा आधृषे तविषी नू चित् तना अस्तु ॥ ४ ॥

हे देवासः मरुतः! दुर्मदा इव, पर्वतान् प्र वेपयन्ति, वनस्पतीन् वि विञ्चन्ति, सर्वया विशा प्रो आरत ॥५॥

रथेषु पृषतीः उपो अयुग्ध्वं, रोहितः प्रष्टिः वहति, वः यामाय पृथिवी चित् आ अश्रोत्, मानुषा अबीभयन्त ॥६॥

हे रुद्राः! तनाय कं मक्षु वः अवः आ वृणीमहे, यथा पुरा बिभ्युषे कण्वाय नूनं गन्त, इत्था अवसा नः (गन्त) ॥ ७ ॥

तुम्हारे हथियार शत्रुदलको हटानेके लिये सुदृढ रहें, और (शत्रुको) प्रतिबंध करनेके लिये बलवाले भी हों। तुम्हारी शक्ति प्रशंसनीय हो। पर कपटी शत्रुका बल कभी न (बढे) ॥ २ ॥

हे नेता वीरों! जब तुम सुस्थिर शत्रुको भी उखाडकर दूर फेंकते हो, बलिष्ठ शत्रुको भी हिला देते हो, पृथ्वीपरके वनोंका भी नाश करते हो, तब तुम पर्वतोंके चारों ओर तो सुगमतासे ही निकल जाते हो ॥ ३॥

हे शत्रुका विनाश करनेवाले वीरों! द्युलोकमें तो तुम्हारे लिये शत्रु नहीं है, भूमिपर भी नहीं है। हे शत्रुको रुलानेवाले वीरों! तुम्हारे साथ रहनेसे शत्रुपर हमला करनेकी मेरी शक्ति शीघ्रही बढ जाय ॥ ४ ॥

हे देववीर मरुतों! शक्तिके कारण मतवाले होनेके समान तुम्हारे वीर पर्वतोंको हिला देते हैं, वृक्षोंको उखाड देते हैं। ऐसे शक्तिवाले तुम सब जनताको प्रगति करनेके लिये सहायक होओ ॥ ५ ॥

तुम अपने रथोंमें धब्बोंवाली हिरनियां जोडते हो और लाल रंगवाला बडा हिरन धुराको खींचता है। तुम्हारे जानेका शब्द भूमि (पर) सुनाई देता है,(जिससे) मानव भयभीत होते हैं॥६॥

हे शत्रुको रुलानेवाले वीरों! हमारे बालबच्चोंका कल्याण होनेके लिये शीघ्रही तुम्हारा संरक्षण हमें मिल जाय, ऐसा वर हम चाहते हैं। जैसे पहिले भयभीत कण्वकी ओर तुम शीघ्र जा चुके थे, वैसेही हमारे पास अपनी रक्षक शक्तिके साथ आओ ॥ ७ ॥

युष्मेषितो मरुतो मर्त्येषित आ यो नो अभ्व ईषते ।
वि तं युयोत शवसा व्योजसा वि युष्माकाभिरूतिभिः ८
असामि हि प्रयज्यवः कण्वं दद प्रचेतसः ।
असामिभिर्मरुत आ न ऊतिभिर्गन्ता वृष्टिं न विद्युतः ९
असाम्योजो बिभृथा सुदानवोऽसामि धूतयः शवः ।
ऋषिद्विषे मरुतः परिमन्यव इषुं न सृजत द्विषम् १०

हे मरुतः ! यः अभ्वः युष्मा इषितः मर्त्य-इषितः नः आ ईषते, तं शवसा वि युयोत, ओजसा वि (युयोत), युष्माभिः ऊतिभिः वि (युयोत) ॥८॥

हे प्रयज्यवः प्रचेतसः मरुतः ! कण्वं असामि हि दद, अ-सामिभिः ऊतिभिः, विद्युतः वृष्टिं न, नः आ गन्त ॥९॥

हे सुदानवः ! असामि ओजः, असामि शवः, बिभृथ, (हे) धूतयः मरुतः ! ऋषि-द्विषे परि-मन्यवे, इषुं न, द्विषं सृजत ॥१०॥

हे वीर मरुतों ! जो घातपात करनेवाला हथियार तुमने फेंका अथवा किसी मानवने फेंका हमपर गिरता हो, तो उसे अपने बलसे हटा दो, अपने सामर्थ्यसे उसे दूर करो, तुम्हारी संरक्षक योजनाद्वारा उसे विनष्ट करो ॥ ८ ॥

हे पूजनीय और ज्ञानी मरुद्वीरों ! कण्वको जैसा तुमने संपूर्ण रूपसे आश्रय दिया था, वैसेही संपूर्ण संरक्षक शक्तियोंके साथ, बिजलियां वृष्टिके साथ जातीं हैं वैसे, तुम हमारे पास आओ ॥ ९ ॥

हे उत्तम दाताओं ! तुम संपूर्ण बल और सामर्थ्य धारण करते हों । हे शत्रुको हटानेवाले वीरों! ऋषियोंका द्वेष करनेवाले क्रोधी शत्रुको विनष्ट करनेके लिये बाणके समान, दूसरे शत्रुको ही उसपर छोड दो ॥ १० ॥

शत्रुपर शत्रुको ही छोडना

' परिमन्यवे, इषुं न, द्विषं सृजत । ' (मं. १०) दुष्ट शत्रुका नाश करनेके लिये, जैसे बाण उसपर छोडते हो, वैसेही दूसरे शत्रुको उसपर छोड दो। अपने एक शत्रुपर अपने दूसरे शत्रुको छोडना, जिससे आपसमें लडते हुए दोनों शत्रु एक दूसरेके आघातसेही मर जायंगे और अनायास ही अपना विजय होगा। अतः यह शत्रुका नाश करनेकी युक्ति बडी अच्छी है।

(धूतयः) जैसा वायु वृक्षोंको कंपाता है, उस तरह शत्रुको कंपानेवाले वीर होने चाहिये। जिसके भयसे शत्रु कांप उठें, वे वीर ये हैं। (मं. १, १०)

(आयुधा स्थिरा वीळु) वीरोंके आयुध सुदृढ और सामर्थ्यवान् हों, शत्रुसे अधिक सामर्थ्यवान् हों। शत्रुके आयुधोंसे कभी कमजोर न हों। (तविषी पनीयसी) शक्ति भी प्रशंसनीय हो, (प्रतिष्कभे वीळु) शत्रुका प्रतिबंध करनेका सामर्थ्य विशेषही संघठित हो। पर ऐसा सामर्थ्य (मायिनः मा) कपटी शत्रुके पास कभी न हो। अपना सामर्थ्य बढे परन्तु कपटी दुष्ट शत्रुका सामर्थ्य कभी न बढे। (मं. २)

(स्थिरं परा हत, गुरु वर्तयथ) स्थिर शत्रुको उखाडकर दूर फेंक देते, और बलिष्ठ शत्रुको भी हटा देते हैं वे वीर हैं। (यहां वीरोंका कर्तव्य बताया है, वह सबको स्मरण रखनेयोग्य है।) (मं. ३)

(रिश-अदसः) शत्रुको खानेवाले वीर हों, शत्रुका संपूर्ण नाश करनेका तात्पर्य यहां है। (रुद्रासः) शत्रुको रुलानेवाले ये वीर हैं। (आधृषे तविषी तना अस्तु) शत्रुपर हमला करनेकी शक्ति बहुतही बढाई जाय। वीरोंको ऐसा करना योग्य है। (मं. ४)

(सर्वथा विशा प्रो आरत) वीर सब प्रजाजनोंके साथ रहें और उनकी प्रगतिके लिये यत्न करते जायँ। (मं. ५)

(वः यामाय मानुषा अबीभयन्) आपके हमलोंके कारण मनुष्य डरते हैं। अर्थात् वीर शत्रुपर ऐसा हमला करें कि जिसको देखकर सब लोग भयभीत हो जायँ (मं. ६)

(यः अ-भ्वः, तं शवसा ओजसा वि युयोत) जो अपूर्व मारक शस्त्र हैं, उनको बलसे और सामर्थ्यसे हटा दो। (मं. ८)

(अ-सामि ओजः शवः च बिभृथ) बडा सामर्थ्य और बल शूरवीर धारण करें और शत्रुको उखाडकर फेंक दें। (मं. १०)

इस तरह इस वीरकाव्यमें वीरोंके लिये बडी आवश्यक सूचनाएं दी हैं। पाठक इनको अपनावें।

(५) क्षात्रबलका संवर्धन

(ऋ. १।४०) कण्वो घौरः। ब्रह्मणस्पतिः। प्रगाथः= विषमा बृहत्यः, समाः सतोबृहत्यः।

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे। उप प्र यन्तु मरुतः सुदानव इन्द्र प्राशूर्भवा सचा १
त्वामिद्धि सहसस्पुत्र मर्त्य उपब्रूते धने हिते। सुवीर्यं मरुत आ स्वश्व्यं दधीत यो व आचके २
प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता। अच्छा वीरं नर्यं पङ्क्तिराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः ३
यो वाघते ददाति सूनरं वसु स धत्ते अक्षिति श्रवः। तस्मा इळां सुवीरामा यजामहे सुप्रतूर्तिमनेहसम् ४
प्र नूनं ब्रह्मणस्पतिर्मन्त्रं वदत्युक्थ्यम्। यस्मिन्निन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा देवा ओकांसि चक्रिरे ५
तमिद् वोचेमा विदथेषु शंभुवं मन्त्रं देवा अनेहसम्।
इमां च वाचं प्रतिहर्यथा नरो विश्वेद् वामा वो अश्नवत् ६

अन्वयः— हे ब्रह्मणस्पते! उत्तिष्ठ, देवयन्तः (वयं) त्वा ईमहे। सुदानवः मरुतः उप प्र यन्तु। हे इन्द्र! सचा प्राशूः भव ॥ १ ॥

हे सहसः पुत्र! मर्त्यः हिते धने त्वां इत् उपब्रूते हि। हे मरुतः! यः वः आचके, (सः) स्वश्व्यं सुवीर्यं आ दधाति ॥ २ ॥

ब्रह्मणस्पतिः प्र एतु। सूनृता देवी प्र एतु। देवाः नर्यं पङ्क्तिराधसं वीरं यज्ञं नः अच्छ नयन्तु ॥ ३ ॥

यः वाघते सूनरं वसु ददाति, सः अक्षिति श्रवः धत्ते। तस्मै सुवीरां सुप्रतूर्तिं अनेहसं इळां आ यजामहे ॥ ४ ॥

ब्रह्मणस्पतिः उक्थ्यं मंत्रं नूनं प्र वदति, यस्मिन् (मन्त्रे) इन्द्रः वरुणः मित्रः अर्यमा देवाः ओकांसि चक्रिरे ॥५॥

हे देवाः! तं इत् शंभुवं अनेहसं मन्त्रं विदथेषु वोचेम। हे नरः! इमां वाचं प्रतिहर्यथ च। विश्वा इत् वामा वः अश्नवत् ॥ ६ ॥

अर्थ— हे ज्ञानके स्वामिन्! उठो। देवत्वकी इच्छा करनेवाले (हम) तुम्हारी प्रार्थना करते हैं। उत्तम दानी मरुत् वीर साथ साथ रहकर (कतारमें) यहां आ जायँ। हे इन्द्र! सबके साथ रहकर इस सोमरसका पान कर ॥ १ ॥

हे बलके लिये उत्पन्न होनेवाले वीर! मनुष्य युद्ध छिड जानेपर तुम्हेंही सहायतार्थ बुलाता है। हे मरुतों! जो तुम्हारे गुण गाता है, (वह) उत्तम घोडोंसे युक्त और उत्तम वीरतावाला धन पाता है ॥ २ ॥

ज्ञानी (ब्रह्मणस्पति) हमारे पास आ जावे। सत्यरूपिणी देवी भी आवे। सब देव मनुष्योंके लिये हितकारी, पंक्तिमें संमानयोग्य, उत्तम यज्ञ करनेवाले वीरको हमारे पास ले आवें ॥३॥

जो यज्ञकर्ताको उत्तम धन देता है, वह अक्षय यश प्राप्त करता है। उसके हितार्थ हम उत्तम वीरोंसे युक्त, शत्रुका हनन करनेवाली, अपराजित मातृभूमि (इळा देवी) की प्रार्थना करते हैं ॥ ४ ॥

ब्रह्मणस्पति पवित्र मंत्रका अवश्यही उच्चारण करता है। जिस (मंत्र) में इन्द्र, वरुण, मित्र, अर्यमा देवोंने (अपने) घर बनाये हैं ॥ ५ ॥

हे देवों! उस सुखदायी अविनाशी मंत्रको हम यज्ञमें बोलते हैं। हे नेता लोगों! इस (मंत्ररूप) वाणीकी यदि प्रशंसा करोगे, तो सभी सुख तुम्हें मिलेंगे ॥ ६ ॥

को देवयन्तमश्नवज्जनं को वृक्तबर्हिषम्। प्रप्र दाश्वान् पस्त्याभिरस्थितान्तर्वावत् क्षयं दधे ७
उप क्षत्रं पृञ्चीत हन्ति राजभिर्भये चित् सुक्षितिं दधे।
नास्य वर्ता न तरुता महाधने नार्भे अस्ति वज्रिणः ८

देवयन्तं जनं कः अश्नवत्? वृक्तबर्हिषं कः (अश्नवत्)? दाश्वान् पस्त्याभिः प्रप्र अस्थित। अन्तर्वावत् क्षयं दधे ॥ ७ ॥

देवत्वकी इच्छा करनेवाले मनुष्यके पास (ब्रह्मणस्पतिको छोडकर) कौन भला दूसरा आवेगा? आसन फैलानेवाले उपासकके पास कौन (दूसरा आवेगा)? दाता अपनी प्रजाके साथ प्रगति करता है। संतानोंवाले घरका आश्रय करते हैं ॥ ७ ॥

(ब्रह्मणस्पतिः) क्षत्रं उप पृञ्चीत। राजभिः (शत्रून्) हन्ति। भये चित् सुक्षितिं दधे। वज्रिणः अस्य महाधने न वर्ता अस्ति, न तरुता, न अर्भे (अपि अस्ति) ॥ ८ ॥

(ब्रह्मणस्पति) क्षात्रबलको संचय करता है। इस वज्रधारीके साथ होनेवाले बडे युद्धमें (कोई भी) इसका निवारण करनेवाला, पराजय करनेवाला नहीं है। और छोटे युद्धमें भी कोई नहीं है ॥ ८ ॥

क्षात्रधर्म

इस सूक्तका मुख्य उपदेश यह है कि **(क्षत्रं उप पृञ्चीत)** क्षात्रशक्तिको संगठित करो, उसे संग्रहित करके बढाओ, क्षात्रवृत्तिका संवर्धन करो। यह क्षात्रशक्ति इतनी बढे कि जिससे **(अस्य वज्रिणः महाधने अर्भे [वा] वर्ता तरुता न अस्ति)** इस शूर वीरके साथ होनेवाले बडे अथवा छोटे संग्राममें इसको परास्त करनेवाले कोई न रहे। यह है क्षात्रवृत्तिकी पराकाष्ठा। यह वीर अपने **(राजभिः शत्रून् हन्ति)** माण्डलिकोंको साथ लेकर शत्रुओंपर हमला करता है, और उनको विनष्ट कर देता है। सबको काट देता है। (मं. ८) ये वीर (**सहसः पुत्रः**) बलके कार्यके लियेही उत्पन्न हुए सुपुत्र हैं। बलसे होनेवाला हरएक कार्य ये आनंदसे करते हैं। **(मर्त्यः धने हिते तं इत् उपब्रूते)** मनुष्य युद्ध छिड जानेपर उस वीरको ही अपनी सहायतार्थ बुलाते हैं। उसकी शक्तिका यह प्रभाव अन्य मनुष्योंपर रहता है। (**सः स्वश्व्यं सुवीर्यं आदधीत**) वह अपने पास उत्तम घोडे रखता है और वह वीर्यवान् पराक्रम करनेवाला शूर वीर भी होता है। (मं. २)

इस शूरका उद्देश्य यही होता है कि वह **(नर्य=नरेभ्यः हितं)** सब मानवोंका हित करनेके लिये तत्पर रहे, (वीरं वीरवति अभिवान्) शत्रुओंको अपनी वीरतासे दूर करे, (यज्ञं) यजन याजन करे करावे, श्रेष्ठोंका सत्कार करे, मध्यमोंका संगठन करे और जो हीनदीन हों उनकी सहायता करे। यही कार्य वह करता है। ऐसा पवित्र कार्य करनेसे वह (पंक्ति-राधसं) पंक्तिकी सम्यक् सिद्धि करे, इसके आगमनसे पंक्तिकी शोभा बढे। पंक्तिका यश बढानेवाला यह हो। ऐसा वीर पुत्र ईश्वरकी कृपासे हमें मिले, यही सबकी इच्छा रहनी चाहिये। (मं. २)

इसी वीरके लिये **(सुवीरां सुप्रतूर्तिं अनेहसं इळां आ यजामहे।** मं. ४) सुवीर प्रसवनेवाली, शत्रुओंका नाश करानेवाली, कभी पराजित न हुई जो अन्नदात्री (मातृभूमि है, उसकी) हम प्रार्थना करते हैं। मातृभूमिके लिये हम अपने सर्वस्वका यज्ञ करते हैं।

'इळा' के अर्थ 'वाणी, गौ, भूमि, अन्न' आदि अनेक हैं।

ज्ञानी राष्ट्रमें वीरताका क्षात्रतेज बढानेका कार्य करे। वही '**ब्रह्मणः-पति**' है। ज्ञानका पति, ज्ञानका स्वामी, ज्ञानका देव, ज्ञानीही है। (**ब्रह्मणस्पते उत्तिष्ठ**। मं. १) हे ज्ञानी उठो और राष्ट्रमें क्षात्रवृत्तिको जगाओ। जो देवत्वका भाव अपने अन्दर बढानेके इच्छुक हैं, उनकी संगठना की जाय। उत्तम दान अर्थात् आत्मसमर्पण करनेवाले वीर (उप प्र यन्तु) समीप आकर प्रगति करनेके लिये आगे बढें। यही वीरता बढानेवाला महामंत्र है।

(ब्रह्मणस्पतिः प्र एतु। मं. ३) ज्ञानी राष्ट्रकी प्रगति करे। **(सूनृता देवी प्र एतु)** सत्यताकी प्रगति हो। सब लोग सत्यका आश्रय करके अपने व्यवहार करते रहें।

सत्य पालनसेही मानवधर्म सिद्ध हो सकता है।

(**यः वसु ददाति सः अक्षिति श्रव धत्ते** । मं. ४) जो धनका दान करता है वह अक्षय यश कमाता है । राष्ट्रके उत्थानमें इस दानका महत्त्व अत्यधिक है ।

(**ब्रह्मणस्पतिः मंत्रं वदति** । मं. ५) यह ज्ञानी एक गुप्त मंत्र बोलता है, यह मंत्र (**शंभुवं अनेहसं मंत्रं विदथेषु वोचेम** । मं. ६) सबका कल्याण करनेवाला, पराभव और विनाशसे बचानेवाला रहता है, इसीलिये यह युद्धके समय बोला जाता है ।

इस तरह राष्ट्रमें ज्ञानी क्षात्रवृत्तिको बढावे और राष्ट्रमें क्षत्रिय वीर उन्नत हों । इसीसे राष्ट्रका उत्कर्ष होता है । पाठक इस सूक्तके एक एक पदका विशेष मनन करें । यह क्षात्रविद्याका उत्तम सूक्त है ।

(६) शत्रुका निवारण

(ऋ. १।४१) कण्वो घौरः । वरुणमित्रार्यमणः, ४–६ आदित्याः । गायत्री ।

यं रक्षन्ति प्रचेतसो वरुणो मित्रो अर्यमा । नू चित् स दम्यते जनः १
यं बाहुतेव पिप्रति पान्ति मर्त्यं रिषः । अरिष्टः सर्व एधते २
वि दुर्गा वि द्विषः पुरो घ्नन्ति राजान एषाम् । नयन्ति दुरिता तिरः ३
सुगः पन्था अनृक्षर आदित्यास ऋतं यते । नात्रावखादो अस्ति वः ४
यं यज्ञं नयथा नर आदित्या ऋजुना पथा । प्र वः स धीतये नशत् ५
स रत्नं मर्त्यो वसु विश्वं तोकमुत त्मना । अच्छा गच्छत्यस्तृतः ६

अन्वयः- प्रचेतसः वरुणः मित्रः अर्यमा (देवाः) यं रक्षन्ति, सः जनः नू चित् दम्यते ? ॥ १ ॥

(देवाः) यं बाहुता इव पिप्रति, (यं) मर्त्यं रिषः पान्ति, (सः) सर्वः अरिष्टः एधते ॥ २ ॥

राजानः (देवाः) एषां पुरः दुर्गा वि घ्नन्ति, द्विषः वि (घ्नन्ति), दुरिता तिरः नयन्ति ॥ ३ ॥

हे आदित्यासः ऋतं यते पन्थाः सुगः अनृक्षरः । अत्र वः अवखादः न अस्ति ॥ ४ ॥

हे नरः आदित्याः ! यं यज्ञं ऋजुना पथा नयथ, सः वः धीतये प्र नशत् ? ॥ ५ ॥

सः मर्त्यः अस्तृतः रत्नं विश्वं वसु अच्छ गच्छति, उत त्मना तोकं (गच्छति) ॥ ६ ॥

अर्थ— उत्तम ज्ञानी वरुण, मित्र, अर्यमा ये देव जिसकी सुरक्षा करते हैं, उस मानवको कौन भला दबा सकता है ? ॥ १ ॥

(ये देव) जिसका अपने बाहुबलसे जैसा (हो वैसा) पोषण करते हैं और (जिस) मानवको हिंसक शत्रुसे बचाते हैं, (वह) सब प्रकारसे अहिंसित होता हुआ बढताही है ॥ २ ॥

राजा (के समान ये देव) शत्रुओंके नगरों और किलोंका नाश करते हैं, द्वेष करनेवालोंका भी नाश करते हैं और पापोंसे परे पहुंचाते हैं ॥ ३ ॥

हे अदितिके पुत्रों ! सत्य मार्गसे जानेवालेके लिये मार्ग सुगम और कण्टकरहित होता है । इससे यहां तुम्हारे लिये बुरा खाद्य कभी नहीं मिलता ॥ ४ ॥

हे नेता, अदितिके पुत्रों ! जिस यज्ञको तुम सरल मार्गसे चलाते हो, वह (यज्ञ) आपके ध्यानमें कैसा भला नष्ट होगा ? ॥ ५ ॥

वह मनुष्य विनष्ट न होता हुआ रत्न आदि सब धन सहजहीसे प्राप्त करता है, और अपने लिये पुत्र भी (प्राप्त करता है) ॥ ६ ॥

कथा राधाम सखायः स्तोमं मित्रस्यार्यम्णः । महि प्सरो वरुणस्य ७
मा वो घ्नन्तं मा शपन्तं प्रति वोचे देवयन्तम्। सुम्नैरिद् व आ विवासे ८
चतुरश्चिद् ददमानाद् बिभीयादा निधातोः । न दुरुक्ताय स्पृहयेत् ९

हे सखायः ! मित्रस्य अर्यम्णः वरुणस्य महि प्सरः स्तोमं कथा राधाम ?॥ ७ ॥	हे मित्रो ! मित्र, अर्यमा और वरुणके महत्त्वके अनुरूप स्तोत्र हम किस तरह सिद्ध करेंगे ? ॥७॥
देवयन्तं घ्नन्तं वः मा प्रति वोचे, शपन्तं मा (प्रति वोचे)। सुम्नैः इत् वः आ विवासे ॥८॥	देवत्व-प्राप्तिके इच्छुकका जो नाश करता है, आपसे (हम कहते हैं कि) उससे हमारा भाषण भी न होवे, (उसी तरह) गाली देनेवालेके साथ भी (न भाषण होवे)। शुभ संकल्पोंके द्वाराही आपको हम तृप्त करेंगे ॥ ८ ॥
दुरुक्ताय न स्पृहयेत्। चतुरः ददमानात् आ निधातोः बिभीयात् ॥ ९ ॥	दुष्ट भाषण करनेकी इच्छा कोई न करे। चारों पुरुषार्थोंका जो धारण करता है, उससे विरोध करनेवालेसे मनुष्य डरे ॥९॥

शत्रुका निवारण

शत्रुका निवारण करना चाहिये। शत्रुके निवारण करनेका मुख्य साधन '**ज्ञान और विज्ञान**' है इसलिये कहा है, कि (**प्र-चेतसः यं रक्षन्ति, स जनः न दभ्यते**। मं. १) ज्ञानी लोग जिसकी सुरक्षा करते हैं, वह मनुष्य दबाया नहीं जा सकता। जिसके पीछे ज्ञानकी शक्ति है, वह मनुष्य पराधीन नहीं होगा। यह ज्ञानका महत्त्व है। यहां कहा है कि केवल सुरक्षाही मुख्य नहीं है, परंतु ज्ञानपूर्वक ज्ञानविज्ञानद्वारा होनेवाली सुरक्षा मुख्य है।

(**प्रचेतसः यं पिप्रति, रिषः पान्ति, सः अरिष्टः एधते**। मं. २) ज्ञानी जिसकी पालना करते हैं, ज्ञानी जिसको विद्वेषक शत्रुओंसे बचाते हैं, वह विनाशको प्राप्त नहीं होता। इतनाही नहीं, अपि तु वह बढता जाता है। पूर्व मंत्रसे '**प्रचेतसः**' (ज्ञानी) यह पद इस मंत्रमें तथा अगले मंत्रोंमें लेना योग्य है। ज्ञानी जिसकी पोषणा करते हैं और जिसको हिंसकोंसे सुरक्षित रखते हैं, वह न केवल विनष्ट नहीं होता, परंतु वह वृद्धिंगत होता है। ज्ञानीकी सहायतासे यह लाभ है।

(**प्रचेतसः राजानः एषां (शत्रूणां) पुरः दुर्गा विघ्नन्ति,(एषां) द्विषः विघ्नन्ति, दुरिता तिरः नयन्ति**। मं. ३) ज्ञानी क्षत्रिय वीर राजपुरुष इनके शत्रुओंके नगरों और किलोंको तोड देते हैं, इनके विद्वेषक वैरियोंका नाश करते हैं और इनको पापोंसे बचाकर दूर पहुंचा देते हैं। इस तरह सब प्रकारसे ज्ञानियोंकी सहायता लाभकारी होती है। यहां शत्रुके किलों दुर्गों और नगरियोंका नाश करके शत्रुसे बचानेका कार्य विज्ञानियोंको करना चाहिये, ऐसा स्पष्ट सूचित किया है। द्वेषिओं और पापोंको सदाके लिये दूर करना चाहिये।

(**ऋतं यते पन्थाः सुगः अनृक्षरः च**। मं. ४) सत्य मार्गसे जानेवालेके लिये इस विश्वमें सुगम और कण्टक-रहित मार्ग मिलता है। एक वार सत्य मार्गसे जानेका निश्चय करना चाहिये। यह हो जाय तो आगेका मार्ग सरल है। (**अत्र अवखादः नास्ति**। मं. ४) इसके लिये अयोग्य निंद्य भोजन कभी नहीं मिलेगा। सदा उत्तमोत्तम भोजनही इसको मिलता रहेगा। क्योंकि जो सन्मार्गसे जाता है, उसक विनाश कभी नहीं होगा। यह दर्शानेके लिये ही अगले मंत्रमें कहा है कि (**यं ऋजुना पथा नयथ, सः (कथं) प्र नशत्**। मं. ५) जिसको सरल मार्गसे चलाया जाता है वह (कैसे) विनष्ट होगा? अर्थात् उसका विनाश कभी नहीं होगा। (**सः अस्तृतः विश्वं वसु त्मना तोकं च गच्छति**। मं. ६) वह कभी विनष्ट नहीं होता, वह सब धन प्राप्त करता है और उत्तम औरस संतान भी प्राप्त करता है।

सुरक्षाका पथ्य

पूर्वोक्त सुरक्षाका जो मार्ग कहा है, उसका थोडासा पथ्य है। वह ऐसा है—

(**देवयन्तं घ्नन्तं मा प्रतिवोचे** । मं. ८) देवत्वकी प्राप्तिका अनुष्ठान करनेवालेका जो नाश करता है वैसे दुष्टके साथ बोलना भी नहीं चाहिये । उसके पूछनेपर भी उसके साथ बोलना नहीं चाहिये। स्वयं ऐसे दुष्टसे कोई व्यवहार कभी करना नहीं चाहिये, इतनाही नहीं, परन्तु वह आकर बोलने लगे तो उत्तरतक नहीं देना चाहिये । उसपर संपूर्ण बहिष्कार डालना चाहिये । (**शपन्तं मा प्रति वोचे** । मं. ८) शाप गालीगलोच देनेवालेसे भी बोलना नहीं चाहिये। तथा (**सु-म्नैः आ विवासे** । मं. ८) उत्तम मनके शुभ संकल्पोंसे ही ईश्वरकी सेवा करते रहना चाहिये। दूसरोंने गाली दी तो उसका जवाब गालीसे नहीं देना चाहिये । यह एक आचारका उत्तम नियम है । इसी तरह (**दुरुक्ताय न स्पृहयेत्** । मं. ९) दुष्ट भाषण करनेवालेको अपने सम्मुख उपस्थित भी नहीं होने देना चाहिये । बुरा भाषण करनेवालेको अपने सम्मुख नहीं चाहना चाहिये । (**चतुरः दद्‌मानात् आ निधातोः बिभीयात्** । मं. ९) चारों पुरुषार्थ करनेका सामर्थ्य धारण करनेवालेको जो नीचे दबाता है, उससे डरना चाहिये, क्योंकि वह कब किसका घात करेगा, इसका पता नहीं है । इसलिये इसके संपर्कसे दूर रहना चाहिये। आचारका यह पथ्य है ।

इस तरहके जो सुवीर हैं, उनके (**महि प्सरः स्तोमं कथा राधामः** । मं. ७) बडे यशका स्तोत्र हम किस तरह रचें और कैसा गायें ? क्योंकि यही कार्य गाने योग्य है । ये वीर (**वरुणः**=वरिष्ठः) श्रेष्ठ वीर, (**मित्रः**) मित्रवत् व्यवहार करनेवाला वीर, (**अर्यमा**) श्रेष्ठ कौन है इसका विचार करनेवाला, ये (**देवाः**) देववीर हैं । ये (**प्रचेतसः**) ज्ञानी हैं और येही सबकी सुरक्षा करते हैं । मानवोंको उचित है कि वे अपनेमें इन गुणोंकी धारणा करें और अपनेमें देवत्वका परम उत्कर्ष करें ।

(७) बटमारका नाश

(ऋ. १।४२) कण्वो घौरः । पूषाः । गायत्री ।

सं पूषन्नध्वनस्तिर व्यंहो विमुचो नपात् । सक्ष्वा देव प्र णस्पुरः १
यो नः पूषन्नघो वृको दुःशेव आदिदेशति । अप स्म तं पथो जहि २
अप त्यं परिपन्थिनं मुषीवाणं हुरश्चितम् । दूरमधि स्रुतेरज ३
त्वं तस्य द्वयाविनोऽघशंसस्य कस्य चित् । पदाभि तिष्ठ तपुषिम् ४
आ तत् ते दस्र मन्तुमः पूषन्नवो वृणीमहे । येन पितॄनचोदयः ५

अन्वयः— हे विमुचो नपात् पूषन् ! (अस्मान्) अध्वनः सं तिर । अंहः वि (तिर) । हे देव ! नः पुरः प्र सक्ष्व ॥ १ ॥

हे पूषन् ! यः अघः वृकः दुःशेवः नः आदिदेशति, तं पथः अप जहि स्म ॥ २ ॥

त्यं परिपन्थिनं मुषीवाणं हुरश्चितं स्रुतेः दूरं अधि अप अज ॥ ३ ॥

त्वं कस्य चित् तस्य द्वयाविनः अघशंसस्य तपुषिं पदा अभि तिष्ठ ॥ ४ ॥

हे मन्तुमः दस्र पूषन् ! ते तत् अवः आ वृणीमहे, येन पितॄन् अचोदयः ॥ ५ ॥

अर्थ— हे मुक्त करनेवाले पूषा ! (हमें) मार्गके पार पहुंचा दो । (हमें) पापके परे (कर दो) । हे देव ! हमें आगे बढाओ ॥ १ ॥

हे पूषा ! जो कोई पापी, क्रूर और सेवाके अयोग्य शत्रु हमें आदेश करता हो, उसको मार्गसे दूर करो ॥ २ ॥

उस बटमार चोर कपटीको मार्गसे दूर करके विनष्ट करो ॥ ३ ॥

तू किसी भी उस दुरंगे पापीके शरीरपर अपने पांवसे दबाकर खडा रह ॥ ४ ॥

हे शत्रुका दमन करनेवाले ज्ञानी पूषा ! तुम्हारा वह रक्षा-सामर्थ्य हम चाहते हैं कि जिससे तुमने पितरोंको उत्साह दिया था ॥ ५ ॥

अधा नो विश्वसौभग हिरण्यवाशीमत्तम । धनानि सुषणा कृधि ६
अति नः सश्चतो नय सुगा नः सुपथा कृणु । पूषन्निह क्रतुं विदः ७
अभि सूयवसं नय न नवज्वारो अध्वने । पूषन्निह क्रतुं विदः ८
शग्धि पूर्धि प्र यंसि च शिशीहि प्रास्युदरम् । पूषन्निह क्रतुं विदः ९
न पूषणं मेथामसि सूक्तैरभि गृणीमसि । वसूनि दस्ममीमहे १०

हे विश्वसौभग हिरण्यवाशीमत्तम ! अध नः धनानि सुषणा कृधि ॥ ६ ॥

हे विश्वमें सौभाग्ययुक्त और सुवर्णके अलंकारोंसे युक्त ! अब हमें धनोंको और उत्तम दानोंको (अर्पण) करो ॥ ६ ॥

सश्चतः नः अति नय, नः सुगा सुपथा कृणु । हे पूषन् ! इह क्रतुं विदः ॥ ७ ॥

बाधा करनेवाले दुष्टोंसे हमें पार ले जाओ । हमें सुगम उत्तम मार्गसे ले चलो । हे पूषन् ! तुम्हें यहाके कर्तव्यका ज्ञान है ॥ ७ ॥

हे पूषन् ! सुयवसं (नः) अभि नय । अध्वने नवज्वारः न (भवतु) । हे पूषन्० ॥८॥

हे पूषन् ! उत्तम जौंवाले देशमें (हमें) ले चलो । मार्गमें नवीन संताप न (होने पावे) । हे पूषन् ! तुम्हें यहांके कर्तव्यका पता है ॥ ८ ॥

हे पूषन ! शग्धि, पूर्धि, प्र यंसि, शिशीहि । उदरं प्रासि० ॥ ९ ॥

हे पूषन् ! हमें सामर्थ्यवान् बनाओ, (हमें धनधान्यसे) संपन्न करो, (हमें) संपत्तिमान् करो, (हमें) तेजस्वी करो, (हमारे) पेटको भर दो । हे पूषन् ! तुम्हें यहाके कर्तव्यका ज्ञान है ॥ ९ ॥

पूषणं न मेथामसि । सूक्तैः अभि गृणीमसि । दस्मं वसूनि ईमहे ॥ १० ॥

हम पूषाको भूल नहीं सकते । सूक्तोंसे उनकी स्तुति करते हैं । दर्शनीय धनोंको हम चाहते हैं ॥ १० ॥

वेदकी आज्ञाएँ

इस सूक्तमें अनेक आज्ञाएं हैं । यद्यपि 'पूषा' देवताके उद्देश्यसेही ये प्रार्थनाएं हैं, तथापि मानवोंका सर्वसामान्य धर्म बतानेके लिये और मानवोंको विशेष आदेश देनेके लिये भी इन प्रार्थनाओंका उपयोग आदेशोंके समान किया जा सकता है, यही नयी बात यहां बतानी है । ऐसी स्थितिमें 'पूषा' का अर्थ 'अपना पोषण करनेवाला' होगा । देखिये, इन प्रार्थनाओंका रूपान्तर मानवधर्मकी आज्ञाओंमें किस तरह हो सकता है—

१ पूषन्= जो पुष्टि चाहता है, पुष्टि करता है ।

२ विमुचः न-पात्= विमुक्त होनेकी आयोजनासे न गिरनेवाला । अपनी मुक्तिकी, बंधननिवृत्तिकी आयोजनामें दत्तचित्त रहनेवाला ।

३ अध्वनः सं तिर- इस मार्गको तैरकर परे पहुंच जा । तैरकर इसके पार हो जा । अपने प्रयत्नसे दुःखसे परे हो जा । दुःख दूर कर । अपना उन्नतिका मार्ग निष्कंटक कर ।

४ अंहः वि तिर- पापसे विशेष कर तैरकर पार हो जा । पापसे दूर हो । पापसे अपने आपको बचाओ ।

५ पुरः प्र सक्ष्व— आगे बढो, प्रगति करो । (मं. १)

६ यः अघः वृकः दुःशेवः आदिदेशति, तं पथः अप जहि— जो पापी क्रूर सेवाके अयोग्य हुकुमत करता हो, उसको मार्गसे हटा दो, उसको दूर कर दो । दुष्टकी आज्ञा कोई न माने । **अघः**=पापी; **वृकः**=भेडिया, क्रूर, हिंसक, घातकी; **दुःशेवः**=सेवा करने अयोग्य । (मं. २)

७ परिपन्थिनं मुषीवाणं हुरश्चितं स्रुतेः दूरं अधि अप अज— बटमार चोर कपटीको अपने मार्गसे दूर करके विनष्ट करो । **परि+पन्थी—** मार्गपर रहकर लूट करनेवाला; **मुषीवाणः**- सदा चोरीका कार्य करनेवाला; **हुरः+चित्** = कुटिल कपटी लोगोंको वारंवार उत्साहित करके बुरे कार्योंमें प्रवृत्त करनेवाला; **स्रुतिः** = मार्ग । (मं. ३)

८ द्वयाविनः अघशंसस्य तपुषिं पदा अभि तिष्ठ- दुरंगे पापीके शरीरको अपने पांवके नीचे दबा दे । (मं. ४)

९ पितृन् अचोदय— रक्षकोंको (सत्कर्ममें) प्रेरित करो। पिता = जनक, उत्पादक, संरक्षक। (मं. ५)

१० धनानि सुषणा कृधि— धनोंको सेवन करनेयोग्य करो। सुखसाधन सबको सुखसे प्राप्त हों। (मं. ६)

११ सश्चतः अति नय— बाधा करनेवाले दुष्टोंको दूर हटा दो। (मं. ७)

१२ सुगा सुपथा कृणु— सुखसे जानेयोग्य उत्तम मार्ग तैयार करो।

१३ इह क्रतुं विदः— यहांके कर्तव्यको जानो। (मं. ७)

१४ सुयवसं नय— उत्तम धान्यवाले प्रदेशके प्रति ले जा। जो भूमि उपजाऊ नहीं है, वहां न जा। (मं. ८)

१५ अध्वने नवज्वारः न भवतु— मार्गमें नया ज्वर, नया कष्ट, नया संताप न हो। (मं. ८)

१६ शग्धि, पूर्धि, प्र यंसि, शिशीहि, उदरं प्रासि— समर्थ बनो, पूर्ण करो (अधूरा न छोडो), संपन्न बनो, तेजस्वी बनो, उदर भर दो। शक् = समर्थ बनना, शक्तिका संपादन करना; पृ = भरपूर भरना, समाधान प्राप्त करना, परिपूर्ण होना; प्र-यम् = देना, संयम करना, स्वाधीन करना; शि = तीखा करना, शस्त्रकी धाराको तीखा करना, पतला करना, उत्साहित करना। (मं. ९)

१७ पूषणं न मेधामसि = पोषणकर्ताको न भूलो। (मं. १०)

इस तरह मूल प्रार्थना-वाक्योंके ही कर्तव्यके आदेश बनते हैं। 'हे पिता! हमें अन्न दो' इसमें पुत्र पिताकी प्रार्थना करता है और अन्न मांगता है। पर इसीमें 'अन्न दो, अन्नका दान करो' यह अन्नदानकी आज्ञा भी है। तथा '(अग्ने! अस्मान् सुपथा राये नय) हमें उत्तम मार्गसे धनके पास ले जाओ, इसमें प्रभुकी प्रार्थना ही है, परंतु (सुपथा राये नय) धन प्राप्त करनेके लिये उत्तम मार्गसे चलो, कभी बुरे मार्गसे न जाओ, यह आदेश भी सर्वसाधारण जनताके लिये है। इस तरह प्रार्थना होते हुए भी वेदमंत्रोंके टुकडे अनेक प्रकारसे मनुष्यको धर्मका उपदेश करते हैं। पाठक इसका अधिक मनन करें और इस तरह मानवधर्मका बोध जानें।

(८) जलचिकित्सक

(ऋ. १।४३) कण्वो घौरः। रुद्रः, ३ रुद्रः मित्रावरुणौ च, ७-९ सोमः। गायत्री, ९ अनुष्टुप्।

कद् रुद्राय प्रचेतसे मीळ्हुष्टमाय तव्यसे । वोचेम शंतमं हृदे १
यथा नो अदितिः करत् पश्वे नृभ्यो यथा गवे । यथा तोकाय रुद्रियम् २
यथा नो मित्रो वरुणो यथा रुद्रश्चिकेतति । यथा विश्वे सजोषसः ३
गाथपतिं मेधपतिं रुद्रं जलाषभेषजम् । तच्छंयोः सुम्नमीमहे ४

अन्वयः— प्रचेतसे मीळ्हुष्टमाय तव्यसे रुद्राय हृदे कत् शंतमं वोचेम? ॥१॥

अर्थ— विशेष ज्ञानी, अत्यंत सुखदायी महान् रुद्रके लिये हृदयसे कब (हम) शान्तिपाठकके स्तोत्र बोलेंगे? ॥ १ ॥

अदितिः नः रुद्रियं यथा करत्, यथा पश्वे नृभ्यः गवे, यथा तोकाय (करत्) ॥२॥

अदिति हमारे लिये (रोग दूर करनेका चिकित्साका) उपाय जैसा करे, वैसाही पशु, मानव, गाय और बालबच्चोंके लिये भी करे ॥ २ ॥

मित्रः वरुणः नः यथा चिकेतति, रुद्रः यथा चिकेतति, सजोषसः विश्वे (देवाः चिकेतन्ति) ॥३॥

मित्र और वरुण हमारे लिये (हित करना) जैसा जानता है, रुद्र जैसा जानता है, (वैसाही) सब उत्साही (देव जानते हैं) ॥ ३ ॥

गाथपतिं मेधपतिं जलाषभेषजं रुद्रं शंयोः तत् सुम्नं ईमहे ॥४॥

गाथाओंके स्वामी, यज्ञोंके प्रभु जलचिकित्सक रुद्रके पाससे (हम) शान्ति (की प्राप्ति और अनिष्टको) दूर (करनेसे मिलनेवाला) वह सुख हम प्राप्त करना चाहते हैं ॥ ४ ॥

यः शुक्र इव सूर्यो हिरण्यमिव रोचते । श्रेष्ठो देवानां वसुः ५
शं नः करत्यर्वते सुगं मेषाय मेष्ये । नृभ्यो नारिभ्यो गवे ६
अस्मे सोम श्रियमधि नि धेहि शतस्य नृणाम् । महि श्रवस्तुविनृम्णम् ७
मा नः सोमपरिबाधो मारातयो जुहुरन्त । आ न इन्दो वाजे भज ८
यास्ते प्रजा अमृतस्य परस्मिन् धामन्नृतस्य ।
मूर्धा नाभा सोम वेन आभूषन्तीः सोम वेदः ९

यः शुक्रः इव सूर्यः, हिरण्यं इव रोचते, (सः) देवानां श्रेष्ठः वसुः ॥५॥

नः अर्वते मेषाय मेष्ये नृभ्यः नारिभ्यः गवे सुगं शं करति ॥६॥

हे सोम ! नृणां शतस्य महि तुविनृम्णं श्रवः श्रियं अस्मे अधि नि धेहि ॥७॥

सोमपरिबाधः नः मा जुहुरन्त, अरातयः मा। हे इन्दो ! वाजे नः आ भज ॥८॥

हे सोम ! परस्मिन् धामन् ऋतस्य अमृतस्य ते याः आभूषन्तीः प्रजाः मूर्धा नाभा वेनः वेद ॥९॥

जो सामर्थ्यवान् होनेसे सूर्यके समान तथा सुवर्णके समान प्रकाशता है, (वह) देवोंमें वैभववान् है ॥ ५ ॥

हमारे घोडे, मेढे, मेढी, पुरुषों, नारियों और गौके लिये वह (रुद्र देव) सुख प्रदान करता है ॥ ६ ॥

हे सोम ! (हमें) सैकडों मानवोंके लिये पर्याप्त होनेवाला महान् तेजस्वी अन्न (बल या धन) देदो ॥ ७ ॥

सोममें विघ्न करनेवाले शत्रु हमारा घातपात न करें। दुष्ट कंजूस भी (हमें) न (सतावे)। हे सोम ! हमारा बल बढाओ ॥ ८ ॥

हे सोम ! श्रेष्ठ स्थानमें रहनेवाले, सत्य और अमृतसे युक्त, ऐसे तेरी पूजा करनेवाली यह प्रजा उच्च स्थानमें अपनेही घरमें विराजे ॥ ९ ॥

वैद्यके लक्षण

१ रुद्र देवताके अनेक रूप हैं, जो रुद्रसूक्तमें वर्णन किये हैं। इनमें 'वैद्य' भी एक रूप है जिसका वर्णन इस सूक्तमें है। रुद्र नाम प्रभुका है और प्रभु विश्वरूप है और उस विश्वरूपमें वैद्य भी एक है। यहांका वैद्य, (जलाष-भेषजः) जलचिकित्सक है। जलं= जल, उदक, पानी; अषः= सेवन करना, प्रयुक्त करना, खाना; भेषजः= जलके प्रयोग करनेद्वारा वैद्य जो रोगोंको दूर करता है, वह (जलाष-भेषजः) जलचिकित्सक वैद्य है। इसका वर्णन यहां है। इसका और वर्णन देखिये—

२ प्रचेताः- विशेष ज्ञानी, प्रबुद्ध, ज्ञानविज्ञानवान्,

३ मीळ्हुष्टमः= अत्यंत सुख देनेवाला, रोग दूर करके आनन्द बढानेवाला,

४ तव्यस्— बल बढानेवाला, आयु बढानेवाला, शक्ति बढानेवाला, रोग दूर करके सामर्थ्यकी वृद्धि करनेवाला,

५ रुद्रः (रुद्-द्रः)- रोगके कारणका नाश करनेवाला, रोग दूर करनेवाला। (मं. १)

६ अदितिः (अदनात् अदितिः)— खानपानका प्रबंध करनेवाली रुग्णपरिचारिका। खाने, पीने, दवा देने आदिका प्रबंध करनेवाली देवमाता जैसी देवी।

७ अदितिः रुद्रियं करत्— खानपान यथायोग्य रीतिसे यथासमय करनेवाली जो होती है, वही रोग दूर करनेका औषध सचमुच करती है। क्योंकि पथ्यकी सुव्यवस्थासे ही रोग दूर होते हैं। (मं. २)

८ मनुष्य, पशु, गायें, बालबच्चे इन सबके लिये यह खानपानका पथ्य आवश्यक है। (मं. २)

९ मित्र (सूर्य), वरुण (जलदेव), रुद्र तथा सब अन्य देव रोग दूर करते हैं। सूर्यकिरणोंसे, औषधिके रसोंसे, जलसे, विद्युत्से, इस तरह सब अन्य देवोंके सामर्थ्यसे रोग दूर होते हैं। मानवी जीवन सुखमय करना यह सब इन देवोंके सामर्थ्यपरही पूर्णतया अवलंबित है। (मं. ३)

१० गाथपतिः— वैद्य गाथाओंको जाने, पूर्वकालके लोगोंके अनुभव गाथामें लिखे रहते हैं। उनको जानना चाहिये। (मं. ४)

११ मेथपतिः— (मिथ्-मेथ्-संगमने) औषधियोंके परस्पर मेलमिलाप, अनेक औषधियोंका मिश्रण करनेका नाम ' मेथ ' है। किन औषधियोंका मेल करनेसे क्या लाभ होते हैं, यह जाननेवाला वैद्य चाहिये। इसीका नाम ' संगति-करण ' है, जो यज्ञका विषय है।

१२ जलाष-भेषजः = जलचिकित्सक।

१३ शं+योः सुम्नं = शान्ति देनेवाले, रोगको शान्त करनेवाले उपायका नाम ' शं ' है और रोग बीज तथा अनिष्ट भावको दूर करनेका नाम ' यु ' है। इसीसे ' सु-मनः (सु-म्नं)' सुख होता है। प्रसन्न मन होता है। वैद्यका यही कर्तव्य है। (मं. ४)

१४ सूर्यः शुक्रः- सूर्य वीर्यवर्धक है।

१५ हिरण्यं रोचते = सुवर्ण तेजस्विता बढानेवाला है।

१६ देवानां वसुः- देवताओंमें जो मूल सत्त्व हैं, ये सब मनुष्योंको लाभ देनेवाले हैं। (मं. ५)

१७ घोडे, मेष, मेषी, पुरुष, स्त्रियाँ, गायें आदिको (के रोग दूर होकर इनको इनसे ही) सुख मिलता है। (मं.२;६)

१८ सोम (आदि औषधियाँ) सैकडों मानवोंको पुष्टि करनेवाला अन्न देती हैं। यहां वनस्पतियोंके अन्नका ही उल्लेख है। (हे सोम ! तुवि-नृम्णं श्रवः अस्मे नि धेहि) हे सोम ! तू विशेष सामर्थ्य बढानेवाला अन्न हमें दो। यह अन्न वनस्पतिसे उत्पन्न ही है। तुवि-नृ-मनः (म्णं) बहुत सामर्थ्य मानवोंमें उत्पन्न करनेवाला (श्रवः) अन्न, यहां ' नृः मनः' पद मानसिक सामर्थ्यका वाचक है। जिसका मन समर्थ है, उसका शरीर भी समर्थ होता है। (मं. ७)

१९ सोम-परिबाधः— सोमादि वनस्पतियोंसे मिलनेवाले अन्नमें जो बाधा डालते हैं वे मानवोंके शत्रु हैं। ये (नः मा जुहुरन्त) हमें प्रतिबंध न करें अर्थात् वनस्पतियां हमें पर्याप्त प्रमाणमें मिलती रहें। (अ-रातयः मा) कंजूस लोग भी हमें विघ्न न करें। इस तरह औषधियोंसे हम दीर्घायु और बलवान् बनें। (मं. ८)

२० हे इन्दो ! नः वाजे आ भज- सोमका रस हमारा बल बढावे। अर्थात् यह रस बल बढाता है। (मं. ८)

२१ ऋतस्य अमृतस्य वेनः- यही सोमरस अमृत अर्थात् अपमृत्युको दूर करनेवाला है, वह सेवनके योग्य है। (मं. ९)

इस तरह वैद्यकीय ज्ञान इस सूक्तमें है। वह मननपूर्वक पाठक जानें।

(नवम मण्डल)

(९) सोम

(ऋ. ९।९४) कण्वो घौरः। पवमानः सोमः। त्रिष्टुप्।

अधि यदस्मिन्वाजिनीव शुभः स्पर्धन्ते धियः सूर्ये न विशः।
अपो वृणानः पवते कवीयन्व्रजं न पशुवर्धनाय मन्म १

अन्वयः- वाजिनी इव शुभः, सूर्ये न विशः, यत् अस्मिन् धियः अधि स्पर्धन्ते। अपः वृणानः कवीयन् पवते, व्रजं न, पशुवर्धनाय मन्म ॥१॥

अर्थ- ओजस्विनी सेनाके समान शुभ सूर्य (की प्रतीक्षा) में जैसे प्रजाजन (रहते हैं, वैसे) जब इस (सोमके वर्णन) में (कवियोंकी) बुद्धियाँ स्पर्धा करती हैं। (तब) जलके साथ मिलता हुआ (और) कवियोंकी (काव्य बनानेके लिये) इच्छा करता हुआ, (सोम) पशुवर्धन करनेवाले संरक्षक व्रजके समान, स्तोत्र (निर्माण कराता है) ॥ १ ॥

द्विता व्यूर्ण्वन्नमृतस्य धाम स्वर्विदे भुवनानि प्रथन्त ।
धियः पिन्वानाः स्वसरे न गाव ऋतायन्तीरभि वावश्र इन्दुम् २
परि यत्कविः काव्या भरते शूरो न रथो भुवनानि विश्वा ।
देवेषु यशो मर्ताय भूषन्दक्षाय रायः पुरुभूषु नव्यः ३
श्रिये जातः श्रिय आ निरियाय श्रियं वयो जरितृभ्यो दधाति ।
श्रियं वसाना अमृतत्वमायन्भवन्ति सत्या समिथा मितद्रौ ४
इषमूर्जमभ्य१र्षाश्वं गामुरु ज्योतिः कृणुहि मत्सि देवान् ।
विश्वानि हि सुषहा तानि तुभ्यं पवमान बाधसे सोम शत्रून् ५

अमृतस्य धाम द्विता व्यूर्ण्वन्! स्वर्विदे भुवनानि प्रथन्त। धियः ऋतायन्तीः इन्दुं पिन्वानाः गावः न स्वसरे अभि वावश्रे ॥२॥

अमृतके स्थानको (सोम) दोनों ओरसे खुला करता है। आत्मज्ञानी (सोम) के लिये सब भुवन विस्तृत होते हैं। सरल-भावसे चलनेवाली (कविकी) बुद्धियाँ, सोमरसको (दुग्ध आदिसे मिला कर) बढाती हुई, गौवें जैसी अपनी गोशालामें शब्द करती हैं, (वैसी काव्यगानका शब्द करती हैं) ॥ २ ॥

कविः काव्या यत् परि भरते, शूरः न रथः विश्वा भुवनानि (परि याति)। देवेषु यशः, मर्ताय भूषन्, दक्षाय रायः, पुरुभूषु नव्यः (भवति) ॥३॥

कवि (को स्फूर्ति देनेवाला सोम) काव्योंमें जैसा सब ओरसे भरा रहता है, वैसा शूरका रथ सब भुवनोंमें (भ्रमण करता है। वह सोम) देवोंमें यश, मनुष्यके लिये भूषण और दक्षके लिये संपत्ति (देता हुआ), बहुतसी भूमियोंमें नया (होता है, उत्पन्न होता है) ॥ ३ ॥

श्रिये जातः, श्रिये आ निः इयाय, जरितृभ्यः श्रियं वयः दधाति। श्रियं वसानाः अमृतत्वं आयन्। मितद्रौ समिथा सत्या भवन्ति ॥४॥

संपत्ति (बढाने) के लिये जो उत्पन्न हुआ है, संपत्ति (बढाने) के लिये जो प्रकट हुआ है, वह (सोम) स्तोताओंके लिये दीर्घायु देता है। संपत्तिको प्राप्त करते हुए (उपासक) अमृतत्वको पहुंचते हैं। (इस) सोमके प्रभावमें युद्ध सत्य (यशस्वी) होते हैं ॥ ४ ॥

हे सोम ! इषं ऊर्जं अभि अर्ष। अश्वं गां उरु ज्योतिः कृणुहि। देवान् मत्सि। तुभ्यं तानि विश्वानि हि सुसहा। हे पवमान सोम ! शत्रून् बाधसे ॥५॥

हे सोम ! अन्न और बल (हमें) दो। घोडे, गौवें तथा महान् तेज (हमारे लिये) कर दो। देवोंको तृप्त करो। तुम्हारे लिये वे सभी (राक्षस) पराजय करनेयोग्य हैं। हे छाने जानेवाले सोम ! (तू सारे) शत्रुओंको पराभूत करो ॥ ५ ॥

सोम, सोमरस और अन्न

यह सोमका सूक्त है। हरएक ऋषिका प्रायः कुछ न कुछ काव्य सोमपर है। (अपः वृणानः। मं. १) यह सोम जलको वरता है, जलको अपने अन्दर स्वीकारता है। अर्थात् जल सोमरसमें मिलाया जाता है। यह सोम (इषं ऊर्जं। मं. ५) अन्न और बल देता है अर्थात् सोमरस यह एक बल बढानेवाला अन्न है। इससे (मत्सि) तृप्ति होती है और आनन्द तथा उत्साह बढता है, जिससे ' विश्वा रक्षांसि सुषहा। शत्रून् बाधसे (मं. ५)' सब राक्षसों और सब शत्रुओंका पराभव किया जाता है। अर्थात् वीर सोम पीते हैं, उससे उनका उत्साह बढता है, जिससे उनके शत्रु परास्त होते हैं।

यह सोम (श्रिये) शोभा, ऐश्वर्य और यश बढानेके लिये उत्पन्न हुआ है, वह (वयः) दीर्घायु देनेवाला अन्न है। इसलिये इसके उत्साहसे (सत्या समिथा भवन्ति। मं. ४) युद्ध यशस्वी होते हैं, कभी पराभव नहीं होता। सोम पीकर वीर यशके भागी होते हैं।

यह सोम (कवीयन्) काव्यकी स्फूर्ति देता है, इस रसको पीकर कविकी स्फूर्ति बढती है और वे काव्य करते हैं। यह सोम कविको स्फूर्ति देनेके कारण कविही है, क्योंकि यदि वह कवि न हो तो दूसरोंको काव्यकी स्फूर्ति कैसे देगा? इसी तरह यह सोम शूरवीर भी है, इसीलिये इसके सेवन करनेसे वीरोंकी वीरता बढती है और वे शत्रुओंको परास्त करते हैं। (मं. ३)

इस तरह पाठक इस काव्यमय सूक्तका अच्छी तरह मनन करें।

अथर्ववेदमें कण्व-ऋषि

अथर्ववेदमें कण्वऋषि रोगजन्तुओंकी खोज करने और उनके नाशका उपाय ढूंढनेवाले दीखते हैं। कृमिनाशनमें इस ऋषिकी विद्याका स्थान बडा श्रेष्ठ है। अथर्ववेदमें कण्वके ३ सूक्त हैं—

अथर्व काण्ड २	सूक्त ३१	मंत्र ५
	,, ३२	६
,, ,, ५	,, २३	१३
	कुल मंत्रसंख्या	२४ हैं

तीनों सूक्त कृमिनाशकाही विचार कर रहे हैं। इनका अर्थ देखिये —

(१०) क्रिमिजम्भनम्

(अथर्व. २।३१) कण्वः। मही, चन्द्रमाः। अनुष्टुप्; २,४ उपरिष्टाद्विराड् बृहती; ३,५ आर्षी त्रिष्टुप्।

इन्द्रस्य या मही दृषत्क्रिमेर्विश्वस्य तर्हणी।
तया पिनष्मि सं क्रिमीन्दृषदा खल्वाँ इव ॥ १ ॥
दृष्टमदृष्टमतृहमथो कुरूरुमतृहम्।
अल्गण्डून्सर्वाञ्छलुनान्क्रिमीन्वचसा जम्भयामसि ॥ २ ॥
अल्गण्डून्हन्मि महता वधेन दूना अदूना अरसा अभूवन्।
शिष्टानशिष्टान्नि तिरामि वाचा यथा क्रिमीणां नकिरुच्छिषातै ॥ ३ ॥
अन्वान्त्र्यं शीर्षण्य१मथो पार्ष्टेयं क्रिमीन्।
अवस्कवं व्यध्वरं क्रिमीन्वचसा जम्भयामसि ॥ ४ ॥

अर्थ- (इन्द्रस्य या मही दृषत्) इन्द्रकी जो बडी शिला है वह (विश्वस्य क्रिमेः तर्हणी) सब प्रकारके कृमियोंका नाश करनेवाली है। (तया क्रिमीन् सं पिनष्मि) उससे मैं सब प्रकारके क्रिमियोंका नाश करता हूं, (दृषदा खल्वान् इव) जिस तरह पत्थरसे चणोंको पीसते हैं ॥ १ ॥

दृष्ट और अदृष्ट क्रिमीका नाश मैं करता हूं। भूमिपर (कु-रूरुम्) रेंगनेवाले क्रिमियोंका मैं नाश करता हूं। सब (अल्गण्डून् शलुनान्) इधरउधर चलनेवाले क्रिमियोंका मैं नाश करता हूं। इन क्रिमियोंका (वचसा नाशयामसि) वचाद्वारा नाश करता हूं ॥ २ ॥

अल्गण्डूओंको मैं बडे घातक उपायसे मारता हूं। चलनेवाले न चलनेवाले क्रिमी सब सारहीन हो जायँ। शेष रहे और न रहे क्रिमियोंको मैं वचासे नष्ट करता हूं, इससे इनमेंसे कोई नहीं बचेगा ॥ ३ ॥

(अन्वान्त्र्यं) आंतोंमें रहनेवाले, (शीर्षण्यं) सिरमें रहनेवाले, (पार्ष्टेयं क्रिमीन्) और पसलियोंमें होनेवाले क्रिमियोंको (अवस्कवं व्यध्वरं) बुरे स्थानमें उत्पन्न होनेवाले, यज्ञ न होनेसे उत्पन्न होनेवाले क्रिमियोंको मैं वचासे नष्ट करता हूं ॥ ४ ॥

ये क्रिमयः पर्वतेषु वनेष्वोषधीषु पशुष्वप्स्व१न्तः ।
ये अस्माकं तन्वमाविविशुः सर्वं तद्धन्मि जनिम क्रिमीणाम्　　५

जो पर्वतोंपर, जो वनोंमें और औषधियोंपर रहते हैं तथा जो पशुओं और जलोंमें होते हैं, जो हमारे शरीरोंमें घुसते हैं, उन सब रोगक्रिमियोंका मैं नाश करता हूं ॥ ५ ॥

क्रिमियोंकी उत्पत्ति

रोगोत्पादक क्रिमियोंकी उत्पत्ति ' पर्वत, वन, औषधि, पशु और जलके बीचमें होती है' ऐसा यहां कहा है, अर्थात् यदि इन स्थानोंकी पूर्णतासे स्वच्छता की जाय तो रोगक्रिमि उत्पन्न ही नहीं होंगे ऐसी यहां सूचना मिलती है। ये क्रिमी उत्पन्न होकर—

अस्माकं तन्वं आविविशुः । (मं. ५)

हमारे शरीरमें घुसते हैं और हमें पीडा देते हैं, इसीलिये इनके नाशका उपाय ढूंढकर निकालना चाहिये' उक्त स्थानोंमें सडावट न हो ऐसा प्रबंध करना चाहिये। ये मानवी शरीरमें सिरमें, पसलियोंमें, आंतोंमें तथा अन्यान्य स्थानोंमें उत्पन्न होते हैं, अथवा घुसकर व्यथा उत्पन्न करते है।

इनके नाशका उपाय

' **वचा** ' यह एक वनस्पति है। इसको ' वच ' बोलते हैं। इसकी बू (गन्ध) बडी उग्र होती है। क्रिमिनाशक औषधियोंमें यह बडे महत्त्वकी औषधि है। इसका चूरण, इसका धूप, इसके टुकडोंकी माला, घोलकर पीनेसे तथा अन्य प्रकारके सेवनसे क्रिमी दूर होते है।

' **इन्द्र-शिला** ' (इन्द्रस्य मही दृषत्।) इन्द्रका बडा पत्थर। यह क्या वस्तु है, अभीतक समझमें नहीं आया। ' मनः शिला ' जैसा कोई पदार्थ होगा। मनःशिला विषनाशक है। इसी तरह यह कोई औषधि वस्तु होगी। यह वस्तु खोज करनेयोग्य है।

(११) क्रिमिनाशनम्

(अथर्व. २।३२) कण्वः । आदित्यः । अनुष्टुप्, १ त्रिपाद्भुरिग्गायत्री, ६ चतुष्पान्निचृदुष्णिक् ।

उद्यन्नादित्यः क्रिमीन्हन्तु निम्रोचन्हन्तु रश्मिभिः । ये अन्तः क्रिमयो गवि　　१
विश्वरूपं चतुरक्षं क्रिमिं सारङ्गमर्जुनम् । शृणाम्यस्य पृष्टीरपि वृश्चामि यच्छिरः　　२
अत्रिवद्वः क्रिमयो हन्मि कण्ववज्जमदग्निवत् । अगस्त्यस्य ब्रह्मणा सं पिनष्म्यहं क्रिमीन्　　३
हतो राजा क्रिमीणामुतैषां स्थपतिर्हतः । हतो हतमाता क्रिमिर्हतभ्राता हतस्वसा　　४
हतासो अस्य वेशसो हतासः परिवेशसः । अथो ये क्षुल्लका इव सर्वे ते क्रिमयो हताः　　५
प्र ते शृणामि शृङ्गे याभ्यां वितुदायसि । भिनद्मि ते कुषुम्भं यस्ते विषधानः　　६

अर्थ- उदय होता हुआ सूर्य क्रिमियोंका नाश करे, अस्तको जाता हुआ सूर्य अपने किरणोंसे, क्रिमियोंका नाश करे। जो भूमिपर क्रिमि हैं ॥ १ ॥

अनेक रूपवाले, चार आंखवाले, सारंग और श्वेत वर्णवाले क्रिमी हैं। इसकी हड्डियोंको और सिरको तोडता हूं ॥२॥

अत्रि, कण्व, जमदग्निके समान मैं क्रिमियोंका नाश करता हूं। अगस्तिकी विद्यासे मैं क्रिमियोंका नाश करता हूं ॥३॥

क्रिमियोंका राजा और उनका स्थान पालक मारा गया। इन क्रिमियोंके मातापिता भाई बन्धुबांधव सब मारे गये ॥४॥

इन क्रिमियोंके साथ रहनेवाले परिचारक, सेवक तथा जो अन्य क्षुल्लक क्रिमि हैं वे भी मारे गये है ॥५॥

क्रिमीके सींग, विषस्थान आदि सब टूट गया है। जिससे यह काटता है वह उसका साधन भी टूट चुका है ॥६॥

सूर्य-किरणका प्रभाव

सूर्य किरणका प्रभाव ऐसा है कि जिससे सब प्रकारके रोग-जन्तु विनष्ट होते है । यह प्रथम मंत्रकी बातही यहां मुख्य है । जहां सूर्यकिरण पहुंचते है वहां रोगजन्तुओंका नाश होता है, अतः घर ऐसे बनाने चाहिये कि, जिनमें अच्छी तरह सूर्यकिरण पहुंचते रहें ।

(१२) क्रिमिघ्नम्

(अथर्व. ५।२३) कण्वः । इन्द्रः । अनुष्टुप्, १३ विराट् ।

ओते मे द्यावापृथिवी ओता देवी सरस्वती । ओतौ म इन्द्रश्चाग्निश्च क्रिमिं जम्भयतामिति १
अस्येन्द्र कुमारस्य क्रिमीन्धनपते जहि । हता विश्वा अरातय उग्रेण वचसा मम २
यो अक्ष्यौ परिसर्पति यो नासे परिसर्पति । दतां यो मध्यं गच्छति तं क्रिमिं जम्भयामसि ३
सरूपौ द्वौ विरूपौ द्वौ कृष्णौ द्वौ रोहितौ द्वौ । बभ्रुश्च बभ्रुकर्णश्च गृध्रः कोकश्च ते हताः ४
ये क्रिमयः शितिकक्षा ये कृष्णाः शितिबाहवः । ये के च विश्वरूपास्तान्क्रिमीन्जम्भयामसि ५
उत्पुरस्तात्सूर्य एति विश्वदृष्टो अदृष्टहा । दृष्टांश्च घ्नन्नदृष्टांश्च सर्वांश्च प्रमृणन्क्रिमीन् ६
येवाषासः कष्कषास एजत्काः शिपवित्नुकाः । दृष्टश्च हन्यतां क्रिमिरुतादृष्टश्च हन्यताम् ७
हतो येवाषः क्रिमीणां हतो नदनिमोत । सर्वान्नि मष्मषाकरं दृषदा खल्वाँ इव ८
त्रिशीर्षाणं त्रिककुदं क्रिमिं सारङ्गमर्जुनम् । शृणाम्यस्य पृष्टीरपि वृश्चामि यच्छिरः ९
अत्रिवद्वः क्रिमयो हन्मि कण्ववज्जमदग्निवत् । अगस्त्यस्य ब्रह्मणा सं पिनष्म्यहं क्रिमीन् १०
हतो राजा क्रिमीणामुतैषां स्थपतिर्हतः । हतो हतमाता क्रिमिर्हतभ्राता हतस्वसा ११
हतासो अस्य वेशसो हतासः परिवेशसः । अथो ये क्षुल्लका इव सर्वे ते क्रिमयो हताः १२
सर्वेषां च क्रिमीणां सर्वासां च क्रिमीणाम् । भिनद्म्यश्मना शिरो दहाम्यग्निना मुखम् १३

अर्थ— द्यावापृथिवी, देवी सरस्वती, इन्द्र, अग्नि ये सब परस्पर मिले जुले है, ये मिलकर क्रिमियोंका नाश करें ॥ १ ॥

हे इन्द्र ! इस कुमारके क्रिमियोंका नाश कर । मेरे पासके उग्र गंधि वचासे सब शत्रुभूत क्रिमि विनष्ट हुए हैं ॥२॥

जो क्रिमि आंख नाक और दांतोंमें घूमता है उसका नाश करते है ॥३॥

दो समान रूपवाले, दो विभिन्न रूपवाले, दो काले और दो लाल, एक भूरा और दूसरा भूरे कानवाला, गीध और भेडियेके समान जो क्रिमि हैं, वे मारे गये हैं ॥४॥

जो श्वेतकोखवाले, जो काले काली भुजावाले, जो अनेक रंगरूपवाले रोग क्रिमी हैं, उनका नाश करते है ॥५॥

यह सूर्य आगे उदयको प्राप्त हो रहा है, जो सबको देखनेवाला और अदृष्ट दोषको दूर करनेवाला है, वह सब दृष्ट तथा अदृष्ट क्रिमियोंका नाश करे ॥६॥

येवाष, कष्कष, एजत्क, शिपिवित्नुक ये क्रिमि हैं, ये दृष्ट हों वा अदृष्ट हों, ये सब नाश करनेयोग्य हैं ॥७॥

जिस तरह पत्थरोंसे चनोंको पीसते हैं, उस तरह इन सब क्रिमियोंका नाश करना चाहिये ॥ ८ ॥

तीन सिरोंवाले, तीन कुदानवाले सारंग और श्वेत क्रिमिका नाश करता हूं । इसकी पसुलियों और सिरको तोडता हूं ॥९॥

अत्रि, कण्व, जमदग्निके समान, अगस्त्यकी विद्यासे इन क्रिमियोंका नाश मैं करता हूं । (अथर्व २।३२।३,४,५ का अर्थ यहां है । येही वे मंत्र हैं । अर्थ पूर्वस्थान पृष्ठ ३३पर देखों। (१०;११;१२)

सब क्रिमियोंका सिर पत्थरसे तोड देता हूं और मुख अग्निसे जला देता हूं ॥१३॥

रोगक्रिमियोंका नाश

सूर्यकिरणसे रोगक्रिमियोंका नाश होता है यह बात यहां स्पष्ट है । क्रिमियोंके वर्णन आदि तथा उनके उपशमके उपायमें खोज करनेके विषय हैं ।

कण्व ऋषिके मंत्र समाप्त ।

(ऋग्वेद, प्रथम मण्डल)

प्रस्कण्व ऋषिके मन्त्र

(१३) सुवीर्य चाहिये

(ऋ. १।४४) प्रस्कण्वः काण्वः। अग्निः, १-२ अग्निः, अश्विनौ, उषाश्च। प्रगाथः= विषमा बृहत्यः, समाः सतोबृहत्यः।

अग्ने विवस्वदुषसश्चित्रं राधो अमर्त्य।
आ दाशुषे जातवेदो वहा त्वमद्या देवाँ उषर्बुधः ॥ १
जुष्टो हि दूतो असि हव्यवाहनोऽग्ने रथीरध्वराणाम्।
सजूरश्विभ्यामुषसा सुवीर्यमस्मे धेहि श्रवो बृहत् ॥ २
अद्या दूतं वृणीमहे वसुमग्निं पुरुप्रियम्।
धूमकेतुं भाऋजीकं व्युष्टिषु यज्ञानामध्वरश्रियम् ॥ ३
श्रेष्ठं यविष्ठमतिथिं स्वाहुतं जुष्टं जनाय दाशुषे।
देवाँ अच्छा यातवे जातवेदसमग्निमीळे व्युष्टिषु ॥ ४
स्तविष्यामि त्वामहं विश्वस्यामृत भोजन।
अग्ने त्रातारममृतं मियेध्य यजिष्ठं हव्यवाहन ॥ ५
सुशंसो बोधि गृणते यविष्ठ्य मधुजिह्वः स्वाहुतः।
प्रस्कण्वस्य प्रतिरन्नायुर्जीवसे नमस्या दैव्यं जनम् ॥ ६

अन्वयः- हे अमर्त्य जातवेदः अग्ने! त्वं उषसः विवस्वत् चित्रं राधः दाशुषे आ वह, अद्य उषर्बुधः देवान् (आ वह) ॥ १ ॥

हे अग्ने! जुष्टः दूतः हव्यवाहनः अध्वराणां रथीः असि हि। अश्विभ्यां उषसा सजूः सुवीर्यं बृहत् श्रवः अस्मे धेहि ॥ २ ॥

अद्य दूतं वसुं पुरुप्रियं धूमकेतुं भाऋजीकं व्युष्टिषु यज्ञानां अध्वरश्रियं अग्निं वृणीमहे ॥ ३ ॥

व्युष्टिषु देवान् अच्छ यातवे श्रेष्ठं यविष्ठं अतिथिं स्वाहुतं दाशुषे जनाय जुष्टं जातवेदसं अग्निं ईळे ॥ ४ ॥

हे अमृत विश्वस्य भोजन हव्यवाहन मियेध्य अग्ने! त्रातारं अमृतं यजिष्ठं त्वां अहं स्तविष्यामि ॥ ५ ॥

हे यविष्ठ्य! गृणते सुशंसः मधुजिह्वः स्वाहुतः बोधि। प्रस्कण्वस्य जीवसे आयुः प्रतिरन् दैव्यं जनं नमस्य ॥ ६ ॥

अर्थ— हे अमर ज्ञानी अग्निदेव! तुम उषाके साथ अनेक प्रकारका तेजस्वी धन दाताको देनेके लिये ला दो, आज उषःकालमें जागनेवाले देवोंको (यहां ले आओ) ॥ १ ॥

हे अग्ने! (तुम देवोंके द्वारा) सेवित दूत हव्य लानेवाला और हिंसारहित कर्मोको निभानेवाला हो। अश्विदेवों और उषाके साथ उत्तम वीर्य बढानेवाला बडा धन हमें ला दो ॥२॥

आज (हम) दूतकर्म करनेवाले सबके निवास हेतु, सबके प्रिय, धूमही जिसका चिन्ह है, ऐसे ज्वालाओंसे अलंकृत, उषःकालोंमें अहिंसक यज्ञकर्मोके कर्ता (है उस) अग्निका हम स्वीकार करते हैं ॥ ३ ॥

उषःकालोंमें देवोंको प्राप्त करनेके लिये, श्रेष्ठ तरुण गतिमान्, उत्तम रीतिसे बुलाये गये, दाता मनुष्यके लिये सेवाके योग्य, सर्वज्ञ अग्निकी मैं स्तुति करता हूँ ॥ ४ ॥

हे अमर, सबको भोजन देनेहारे, हविको पहुंचानेवाले पवित्र अग्निदेव! (तुम) सबके तारक, अमर पूज्य हो, (अतः) तुम्हारी मैं प्रशंसा करता हूं ॥ ५ ॥

हे तरुण! स्तुतिकर्ताको तुम स्तुति करनेयोग्य हो, मीठी जबानवाला तुम उत्तम हवन होनेके पश्चात् (हमारे अभिप्रायको) समझ लो। प्रस्कण्वकी दीर्घ आयुके लिये आयु बढाता हुआ दिव्य मानवको सम्मान दो ॥ ६ ॥

होतारं विश्ववेदसं सं हि त्वा विश इन्धते ।
स आ वह पुरुहूत प्रचेतसोऽग्ने देवाँ इह द्रवत् ७
सवितारमुषसमश्विना भगमग्निं व्युष्टिषु क्षपः ।
कण्वासस्त्वा सुतसोमास इन्धते हव्यवाहं स्वध्वर ८
पतिर्ह्यध्वराणामग्ने दूतो विशामसि ।
उषर्बुध आ वह सोमपीतये देवाँ अद्य स्वर्दृशः ९
अग्ने पूर्वा अनूषसो विभावसो दीदेथ विश्वदर्शतः ।
असि ग्रामेष्वविता पुरोहितोऽसि यज्ञेषु मानुषः १०
नि त्वा यज्ञस्य साधनमग्ने होतारमृत्विजम् ।
मनुष्वद् देव धीमहि प्रचेतसं जीरं दूतममर्त्यम् ११
यद् देवानां मित्रमहः पुरोहितोऽन्तरो यासि दूत्यम् ।
सिन्धोरिव प्रस्वनितास ऊर्मयोऽग्नेर्भ्राजन्ते अर्चयः १२
श्रुधि श्रुत्कर्ण वह्निभिर्देवैरग्ने सयावभिः ।
आ सीदन्तु बर्हिषि मित्रो अर्यमा प्रातर्यावाणो अध्वरम् १३

होतारं विश्ववेदसं त्वा विशः सं इन्धते हि । हे पुरुहूत अग्ने ! सः (त्वं) प्रचेतसः देवान् इह द्रवत् आ वह ॥७॥

हे स्वध्वर ! क्षपः व्युष्टिषु सवितारं उषसं अश्विना भगं अग्निं (आ वह)। सुतसोमासः कण्वासः हव्यवाहं त्वा इन्धते ॥ ८ ॥

हे अग्ने ! विशां अध्वराणां पतिः दूतः असि हि । उषर्बुधः स्वर्दृशः देवान् अद्य सोमपीतये आ वह ॥ ९ ॥

हे विभावसो अग्ने ! विश्वदर्शतः पूर्वाः उषसः अनु दीदेथ । ग्रामेषु अविता असि । यज्ञेषु मानुषः पुरोहितः असि ॥१०॥

हे अग्ने देव ! मनुष्वत् त्वा यज्ञस्य साधनं, होतारं ऋत्विजं, प्रचेतसं जीरं अमर्त्यं दूतं नि धीमहि ॥ ११ ॥

हे मित्रमहः ! यत् पुरोहितः अन्तरः देवानां दूत्यं यासि, सिन्धोः प्रस्वनितासः ऊर्मयः इव, अग्नेः अर्चयः भ्राजन्ते ॥ १२ ॥

हे श्रुत्कर्ण अग्ने ! श्रुधि । मित्रः अर्यमा प्रातर्यावाणः (तैः) सयावभिः वह्निभिः देवैः अध्वरं बर्हिषि आ सीदन्तु ॥१३॥

हवन करनेवाले सर्वज्ञानी ऐसे तुमको सब प्रजाएँ प्रदीप्त करती हैं। हे बहुतों द्वारा हवन किये गये अग्निदेव ! वह (तुम) ज्ञानी देवोंको यहां दौडते हुए ले आओ ॥ ७ ॥

हे उत्तम अहिंसक कर्मके कर्ता ! रात्रीके नंतर उषःकालोंमें सविता, उषा, दोनों अश्विदेवों, भग और अग्निको (यहां ले आओ)। सोमका रस निकालकर ये कण्व हविका हवन करते हुए तुम्हें प्रदीप्त करते हैं ॥ ८ ॥

हे अग्ने ! तुम प्रजाओंका तथा अहिंसक कर्मोंका पालन करनेवाला हो । उषःकालमें जागनेवाले आत्मदर्शी देवोंको आज सोमपान करनेके लिये ले आओ ॥ ९ ॥

हे विशेष प्रभावान् अग्ने ! विश्वमें दर्शनीय ऐसा तुम उषाके पश्चात् प्रदीप्त होते हो । तुम ग्रामोंके रक्षक हो । और यज्ञोंमें मनुष्योंमें अग्रगामी नेता हो ॥ १० ॥

हे अग्निदेव ! हम मनुष्यकी तरह तुम्हें यज्ञके साधन, होता, याजक, ज्ञानी, वृद्ध, अमर दूत करके यहां स्थापन करते हैं ॥ ११ ॥

हे मित्रोंमें पूजनीय! जब यज्ञके पुरोहित करके देवोंके बीचमें दूतकर्म करनेके लिये जाते हो, तब समुद्रका प्रचण्ड ध्वनि करनेवाली लहरोंके समान, अग्निकी ज्वालाएँ प्रदीप्त होती हैं ॥१२॥

हे सुननेवाले अग्ने ! (हमारा कथन) सुन लो । मित्र, अर्यमा तथा और जो प्रातःकालमें आनेवाले हैं उन देवोंके साथ (सब देव) अहिंसक कर्मके पास आसनपर बैठें ॥ १३॥

शृण्वन्तु स्तोमं मरुतः सुदानवोऽग्निजिह्वा ऋतावृधः।
पिबतु सोमं वरुणो धृतव्रतोऽश्विभ्यामुषसा सजूः ॥ १४

सुदानवः अग्निजिह्वाः ऋतावृधः मरुतः स्तोमं शृण्वन्तु । धृतव्रतः वरुणः अश्विभ्यां उषसा सजूः सोमं पिबतु ॥१४॥

उत्तम दानी अग्निरूप जिह्वावाले, यज्ञकर्मका वर्धन करनेवाले मरुत् वीर इस स्तोत्रको सुनें। व्रतपालन करनेवाला वरुण अश्विदेवोंके और उषाके साथ सोमरसका पान करे ॥ १४ ॥

उषःकालमें जागनेवाले देव

इस स्तोत्रमें तथा अन्यत्र भी देवोंको उषःकालमें जागनेवाले कहा है–

१ उषर्बुधः देवाः (१;९) –उषःकालमें जागनेवाले,

२ व्युष्टिषु देवान् यातवे (४)– विशेष प्रातः उषःकालमें देवोंको बुलाना चाहिये,

३ क्षपः व्युष्टिषु उषसं सवितारं अश्विना भगं अग्निं आ वह (८)– रात्री रहनेके समयही प्रातः की उषाओंमें उषा, सविता, अश्विदेव, भग और अग्निको बुलाओ,

४ प्रातर्यावाणः देवाः (१३)- प्रातःकालमें उठकर कार्य करनेके लिये जानेवाले देव होते हैं।

इस तरह अनेक वार वर्णन वेदमंत्रोंमें होता है। इससे स्पष्ट होता है कि देव बडी प्रभातमें, जब कि बहुतसी रात भी होती है, तब उठते हैं और अपने कार्यमें लगते हैं। इसीका नाम ब्राह्म-मुहूर्त है। (**क्षपः व्युष्टिषु**) रात्रीके अवशिष्ट भागके उषःकालमें उठना चाहिये यह वैदिक कालसे चली आयी परिपाटी है। आर्योंके घरोंमें कोई भी ऐसा मनुष्य नहीं होना चाहिये कि जो उषःकालमें सोया रहता हो। ब्राह्ममुहूर्तमें उठनेकी स्मृतियोंकी आज्ञा इन वैदिक मन्त्रभागोंपर आश्रित है।

धन कैसा हो ?

धन अन्न आदि कैसा हो इस विषयमें इस सूक्तके आदेश ऐसे हैं–

१ विवस्वत् चित्रं राधः (१)— तेजस्वी धन हो, जो निवासका हेतु बने, सिद्धितक पहुंचावे और तेजस्विता बढावे,

२ सुवीर्यं बृहत् श्रवः अस्मे धेहि (२)— उत्तमवीर्य, सामर्थ्य और पराक्रम बढानेवाला धन, अन्न और यश हमें मिले,

ऐसा धन या अन्न नहीं चाहिये कि जो वीर्यको घटावे पराक्रमकी शक्ति कम करे और यशमें बाधक हो।

अहिंसक कर्म

अहिंसक कर्म करने चाहिये। कर्म ऐसे करने चाहिये कि जिनमें हिंसा न हो, कुटिलता न हो, कपट या तेढापन न हो, इस विषयमें निम्नलिखित मंत्रभाग देखनेयोग्य है–

१ अध्वरः (अ+ध्वरः)— अहिंसायुक्त कर्म, हिंसारहित कर्म, कुटिलतारहित कर्म, ऐसे कर्म कि जिनमें तेढापन या कपट नहीं है। (मं. २;३;८;१३) अध्वरका दूसरा अर्थ (अध्व+रः) मार्ग बतानेवाला, सन्मार्गदर्शक है। अध्वरका अर्थ यज्ञ है, परन्तु यज्ञ वह कि जिसमें हिंसा नहीं होती।

देवताओंके लक्षण

इस सूक्तमें देवताओंके अनेक लक्षण कहे हैं, उनका विचार इस तरह है—

१ उषर्बुधः— उषःकालमें उठनेवाले, (१)

२ जुष्टः– प्रीतिसे सेवा करनेयोग्य, (२)

३ अध्वराणां रथीः— हिंसा, कुटिलता, कपट आदिसे रहित कर्मोंको करनेवाला,

४ वसुः— मनुष्योंका निवास सुखमय करनेवाला, (३)

५ पुरुप्रियः– बहुतोंको प्रिय,

६ भा-ऋजीकः— प्रभासे युक्त, तेजस्वी,

७ मियेध्यः— पवित्र, (५)

८ त्राता– संरक्षक,

९ मधुजिह्वः– मीठा भाषण करनेवाला, मधुरभाषी (६)

१० दैव्यः– दिव्यभावयुक्त,

११ विश्ववेदाः— सब जाननेवाला, (७)

१२ जातवेदाः– जो बना है उसको यथावत् जाननेवाला (४)

१३ प्रचेताः– विशेष ज्ञानी, मननशील (७;११)

१४ स्वर्दृश्– आत्मज्ञानी. (९)

१५ **विश्वदर्शतः**- विश्वको दिखानेवाला, सबमें दर्श-नीय, (१०)

१६ **सुदानुः**— उत्तम दाता, (१४)

१७ **अग्निजिह्वः**- तेजस्वी भाषण करनेवाला,

१८ **ऋतावृधः**— सत्य, यज्ञकी वृद्धि करनेवाला,

१९ **घृतव्रतः**-नियमका योग्य पालन करनेवाला,

२० **विभावसुः**- तेजस्वी, विशेष तेजस्वी । (१०)

देवत्वकी प्राप्ति इन गुणोंसे होती है, अतः ये गुण अपनाना मनुष्यके लिये योग्य है ।

कुछ कर्तव्य

निम्नलिखित मंत्रभाग मानवोंके कुछ कर्तव्य बताते हैं, उनका अब विचार करेंगे—

१ **त्रातारं अहं स्तविष्यामि**— दूसरोंकी रक्षा करने-वाले वीरकी मैं प्रशंसा करता हूं (५), अर्थात् जो दूसरोंकी सुरक्षा नहीं करता वह स्तुतिके योग्य नहीं है ।

२ **आयुः प्रतिरन्**- आयुको बढाओ (६), आयु जिससे घटे ऐसा कोई कर्म नहीं करना चाहिये ।

३ **दैव्यं जनं नमस्य**- दिव्य गुणवालोंको ही प्रणाम कर (६) जिसमें शुभगुण नहीं होंगे वह सत्कारके योग्य नहीं है ।

४ **ग्रामेषु अविता असि**- ग्रामोंमें सुरक्षा करनेवाला हो । (१०)

५ **यज्ञेषु पुरोहितः असि**- प्रशस्त कर्मोंमें अग्रगामी हो,

६ **श्रुत्कर्ण ! श्रुधि**- एकाग्र चित्तसे सुन । (१३)

७ **स्तोमं शृण्वन्तु**- प्रशंसायोग्य वर्णन सुनो । (१४) दूसरोंकी निंदा आदि न सुनो ।

८ **विश्वस्य भोजन**— सबको भोजन दो (५)

इस तरह कर्तव्यबोधक वाक्योंसे मानवधर्म सिद्ध होता हैं । इन वाक्योंसे विधि और निषेध किस तरह समझना चाहिये यह ऊपर बताया हैं । .

सोमपान

सोमपानका विषय इस सूक्तमें अनेक वार आया है उसके सूचक वाक्य ये हैं—

१ **सुतसोमासः**- मिलकर सोमरस निकालना (८)

२ **सोमपीतये देवान् आ वह**- सोमपानके लिये देवों-को ले आओ, (९)

३ **बर्हिषि आ सीदन्तु**— वे देव आकर आसनोंपर बैठें, (१३)

४ **वरुणः सोमं पिबतु**— वरुण सोम पीवे । (१४)

इस सूक्तके १४ मंत्रोंमेंसे चार मंत्रोंमें सोमका उल्लेख है । इस तरह यह सूक्त सुवीर्यवर्धक उत्तम उपदेश देता है ।

(१४) तैंतीस देवता

(ऋ. १।४५) प्रस्कण्वः काण्वः । अग्निः, १० (उत्तरार्धस्य) देवाः । अनुष्टुप् ।

त्वमग्ने वसूँरिह रुद्राँ आदित्याँ उत । यजा स्वध्वरं जनं मनुजातं घृतप्रुषम् १

श्रुष्टीवानो हि दाशुषे देवा अग्ने विचेतसः । तान् रोहिदश्व गिर्वणस्त्रयस्त्रिंशतमा वह २

अन्वयः— हे अग्ने ! त्वं इह वसून् रुद्रान् आदित्यान् यज । उत स्वध्वरं घृतप्रुषं मनुजातं जनं आ यज ॥ १ ॥

हे अग्ने ! विचेतसः देवाः दाशुषे श्रुष्टीवानो हि । हे रोहि-दश्व गिर्वणः ! त्रयस्त्रिंशतं तान् आ वह ॥ २ ॥

अर्थ— हे अग्ने ! तुम यहां वसुओं, रुद्रों और आदित्योंके (सन्तुष्टिके लिये) यज्ञ कर ॥ तथा उत्तम यज्ञ करनेवाले और घृताहुति देनेवाले मनुसे उत्पन्न हुए मानवोंकी (सन्तुष्टिके लिये भी) यज्ञ कर ॥ १ ॥

हे अग्ने ! विशेष ज्ञानसंपन्न देव सदाही दाताके लिये उत्तम फल देतेही हैं । हे लाल रंगोंके घोडे (जोतने)वाले स्तुतियोग्य (अग्ने) ! उन तैंतीस देवोंको तुम यहां ले आ ॥ २ ॥

प्रियमेधवदत्रिवज्जातवेदो विरूपवत् । अङ्गिरस्वन्महिव्रत प्रस्कण्वस्य श्रुधी हवम् ३
महिकेरव ऊतये प्रियमेधा अहूषत । राजन्तमध्वराणामग्निं शुक्रेण शोचिषा ४
घृताहवन सन्त्येमा उ षु श्रुधी गिरः । याभिः कण्वस्य सूनवो हवन्तेऽवसे त्वा ५
त्वां चित्रश्रवस्तम हवन्ते विक्षु जन्तवः । शोचिष्केशं पुरुप्रियाऽग्ने हव्याय वोळ्हवे ६
नि त्वा होतारमृत्विजं दधिरे वसुवित्तमम् । श्रुत्कर्णं सप्रथस्तमं विप्रा अग्ने दिविष्टिषु ७
आ त्वा विप्रा अचुच्यवुः सुतसोमा अभि प्रयः । बृहद्भा बिभ्रतो हविरग्ने मर्ताय दाशुषे ८
प्रातर्याव्णः सहस्कृत सोमपेयाय सन्त्य । इहाद्य दैव्यं जनं बर्हिरा सादया वसो ९
अर्वाञ्चं दैव्यं जनमग्ने यक्ष्व सहूतिभिः । अयं सोमः सुदानवस्तं पात तिरोअह्न्यम् १०

हे महिव्रत जातवेदः ! प्रियमेधवत् अत्रिवत् विरूपवत् अङ्गिरस्वत् प्रस्कण्वस्य हवं श्रुधि ॥ ३ ॥

हे महान् कर्म करनेवाले ज्ञानी (अग्ने) ! (तुमने) जैसी प्रियमेध, अत्रि, विरूप, और अङ्गिरसकी प्रार्थनाएं सुनी थी, वैसी प्रस्कण्वकी भी प्रार्थना सुनो ॥ ३ ॥

महिकेरवः प्रियमेधाः अध्वराणां शुक्रेण शोचिषा राजन्तं अग्निं ऊतये अहूषत ॥ ४ ॥

महान् कर्म करनेवाले प्रियमेध (ऋषियोंने) यज्ञोंके मध्यमे पवित्र प्रकाशसे तेजस्वी हुए अग्निको (सबकी) सुरक्षाके लिये प्रार्थना की थी ॥ ४ ॥

हे घृताहवन सन्त्य ! इमा उ गिरः सु श्रुधि । कण्वस्य सूनवः याभिः अवसे त्वा हवन्ते ॥ ५ ॥

हे घृतकी आहुतियां लेनेवाले दाता (अग्ने) ! ये प्रार्थनाएं सुनो । कण्वके पुत्र जिन (प्रार्थनाओं)से (सबकी) सुरक्षाके लिये तुम्हारी प्रार्थना करते हैं ॥ ५ ॥

चित्रश्रवस्तम पुरुप्रिय अग्ने ! शोचिष्केशं त्वां हव्याय वोळ्हवे विक्षु जन्तवः हवन्ते ॥ ६ ॥

हे विलक्षण यशवाले और सबको प्रिय अग्ने ! तेजस्वी किरणवाले तुम्हें हविको ले जानेके लिये प्रजाओंमें ये लोग बुलाते हैं ॥ ६ ॥

हे अग्ने ! विप्राः दिविष्टिषु होतारं ऋत्विजं वसुवित्तमं श्रुत्कर्णं सप्रथस्तमं त्वा नि दधिरे ॥ ७ ॥

हे अग्ने ! ज्ञानी लोग यज्ञोंमें, (देवोंको) बुलानेहारे ऋतुके अनुकूल यज्ञ करनेवाले, बहुत धनके दाता, प्रार्थना सुननेमें तत्पर और सर्वत्र प्रसिद्ध ऐसे तुम्हें स्थापित करते हैं ॥ ७ ॥

हे अग्ने ! दाशुषे मर्ताय हविः बिभ्रतः सुतसोमाः विप्राः प्रयः अभि बृहत् भाः त्वा आ अचुच्यवुः ॥ ८ ॥

हे अग्ने ! दाता मानवोंके लिये अन्न देनेवाले और जिन्होंने सोमरस तैयार किया है ऐसे ज्ञानी लोगोंने (हविरूप) अन्नके पास (रहनेवाले) अत्यंत तेजस्वी तेरा (मन अपनी)ओर खींच लिया है८

हे सहस्कृत सन्त्य वसो ! इह अद्य सोमपेयाय प्रातर्याव्णः दैव्यं जनं बर्हिः आ सादय ॥ ९ ॥

हे बलके उत्पन्नकर्ता दानशील (तथा सबके) निवासक (अग्ने) ! यहां आज सोमपानके लिये प्रातःकालहीमें आनेवाले दिव्य विबुधोंको (इन) आसनोंपर (लाकर) बिठलाओ ॥ ९ ॥

हे अग्ने ! अर्वाञ्चं दैव्यं जनं सहूतिभिः यक्ष्व । हे सुदानवः अयं सोमः, तं तिरोअह्न्यं पात ॥ १० ॥

हे अग्ने ! पास आये दिव्य जनोंका उत्तम भाषणके साथ आदरपूर्वक यजन कर । हे दानशीलो ! यह सोमरस है, इसको एकही दिन हुआ है, उसका पान करो ॥ १० ॥

तैंतीस देवताओंका सत्कार

' **वसु** ' आठ हैं, ' **वसु** ' का अर्थ— धन, शुभ, धनी, शुभकर्मकर्ता, रत्न, सुवर्ण, जल, नमक, ' वृद्धि ' नामक औषधि, प्रकाश-किरण, अग्नि, सूर्य, प्रकाश यह है। वसु आठ है—

धरो ध्रुवश्च सोमश्च अहश्चैवानिलोऽनलः ।
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टाविति स्मृताः ॥

' धर, ध्रुव, सोम, दिन, वायु, अग्नि, प्रत्यूष, प्रभास ये आठ वसु हैं। ' शतपथमें पृथ्वी, तेज, वायु, अन्तरिक्ष, आदित्य द्यौः, नक्षत्र और चन्द्रमा ये वसु हैं ऐसा कहा है।

अग्निश्च पृथिवी च वायुश्चान्तरिक्षं चादित्यश्च द्यौश्च चन्द्रमाश्च नक्षत्राणि चैते वसव एते हीदं सर्वं वासयन्ति ॥ (श. ब्रा. ११।६।३।६)

ये सबका निवास कराते हैं, इनके आधारसे सब स्थावर जंगम विश्व रहा है। इसलिये इनका नाम वसु है।

' **रुद्र** ' नाम ग्यारह प्राणोंका है। इसी तरह वायुका भी नाम रुद्र है, क्योंकि वायु प्राणोंका पोषक है। ये रुद्र ११ हैं।

' **आदित्य** ' नाम १२ महिनोंका है। बारह महिनोंमें सूर्यका तेज न्यूनाधिक होता है। चैत्रका सूर्य और पौषका सूर्य इनमें प्रकाशकी तीव्रताका अन्तर है। यही प्रकाशकी न्यूनाधिकताका भेद एक आदित्यके १२ सूर्य बना देता है।

८ **वसु**+११**रुद्र**+१२ **आदित्य**= मिलकर ३१ देव होते हैं, **यज्ञ** और **प्रजापति** मिलकर ३३ देव हैं। इनका उल्लेख " **गिर्वणसः त्रयस्त्रिंशतं** " (मं. २) इस मंत्रमें किया है। अग्निदेव अपने रथपर इन तैंतीस देवोंको बिठलाकर यज्ञभूमिमें लाता है।

जैसे विश्वमें ये ३३ देवताएं हैं वैसीही अंशरूपसे प्रत्येक शरीरमें भी येही देवताएं हैं। यह शरीररूपी अग्निका रथ है, इसको इन्द्रियरूप घोडे जोते हैं। इस शरीररूपी रथमें ३३ देवताओंको बिठलाकर यह अग्नि इस विश्वरूपी यज्ञभूमिमें लाता है। और इस तरह मनुष्यकी पूर्ण आयुतक यह यज्ञ चलता है। रोगरूपी असुर इस यज्ञका नाश करते हैं और देव इसकी सुरक्षा चाहते हैं, संक्षेपसे यह रूपक यहां है।

देवोंके लिये यज्ञ

वसून्, रुद्रान्, आदित्यान् इह यज । (मं. १) वसु, रुद्र और आदित्योंके लिये यहां यजन कर। अर्थात् इनकी प्रसन्नताके लिये यज्ञ करनेकी यहां आज्ञा है। प्रसन्नताका अर्थ संतुष्टि, संतोष, खुशी, प्राप्ति है। जल वायु प्रसन्न है इसका अर्थ जलवायु रोगरहित, उपद्रवरहित हैं। यही अर्थ यहां अभीष्ट है। पृथ्वी, आप, तेज, वायु, आकाश, सूर्यप्रकाश, चन्द्रप्रकाश, ओषधियां, अन्न, प्राण, दिन, रात ये सब प्रसन्न रहेंगे तोही मनुष्यको सुख मिल सकता है। यज्ञ इसीलिये किये जाते हैं।

तथा **जनं यज** । (मं. १) मनुष्यमात्रके हितके लिये यज्ञ कर। यज्ञका मुख्य उद्देश्य मानवका हित ही है। मानव यहां न हो, तो यज्ञ कोई करेगाही नहीं। मनुष्य सुखी होनेके लियेही ये सब यज्ञ हैं, और इसीलिये वेद आदि शास्त्र हैं और सब जपतप आदि इसीलिये है। धर्म इसीके लिये है। इसलिये यहां कहा है ' मनुके वंशजों अर्थात् मानवोंके हित करनेके लिये यज्ञ करना चाहिये। ' (मं. १) मनुष्य सदा आनन्द प्रसन्न रहे, वह उन्नत होता रहे, उसके अन्दरके दिव्यभाव प्रकट होते रहें, वह नरका नारायण बने, जीवका शिव बने, देवका महादेव बने, इन्द्रका महेन्द्र बने, इसके लिये यज्ञ आवश्यक है।

दातृत्व-भाव

मनुष्यमें दातृत्वका भाव रहे। ' **अ-दाता** ' को शत्रु माना है। **अ-राति** (अ-दाता)का अर्थ वेदमें चोर, शत्रु, डाकू है। यह समाजका दुश्मन् है। इसीको समाजका शत्रु कहते हैं, ' दाता ' ही समाजका संगठन करता है, दाताही यज्ञ करता है और यज्ञसे ' देवपूजा, संगतिकरण (संगठन) और दान ' होता है। इसमें दान मुख्य है। दान न होगा, तो यज्ञ नहीं होगा। दानही यज्ञका जीवन है। इसीलिये कहा है कि—

विचेतसः दाशुषे श्रुष्टीवानो हि । (मं. २)

' विशेष ज्ञानी दाताकी सहायता हरप्रकारसे करते हैं। ' विशेष ज्ञानी वे हैं कि जो समाजकी संगठना किस तरह सुदृढ होती है, इसका शास्त्र जानते हैं। ' **श्रुष्टिः** ' का अर्थ ' सहायता, मदत, उन्नति, प्रगति ' है। दाता जो होते हैं उनकी सहायता तथा उन्नति विज्ञानी करते हैं। इसका कारण यह है कि दाताके दानसेही समाज बलवान् और समर्थ होता है, इसलिये उसकी सहायता करना ज्ञाताओंका कर्तव्यही है।

सूक्तका द्रष्टा प्रस्कण्व

इस सूक्तका द्रष्टा प्रस्कण्व ऋषि है। इसका नाम तृतीय मन्त्रमें है। (**प्रस्कण्वस्य हवं श्रुधि** । मं. ३) प्रस्कण्व ऋषिकी प्रार्थना सुनो, ऐसा अग्निसे कहा है। इस मन्त्रमें प्रस्कण्वके पूर्व समयके चार ऋषियोंका उल्लेख है। प्रियमेधा, अत्रि, विरूप और अङ्गिरा इन ऋषियोंकी प्रार्थना जैसी सुनी थी, वैसी प्रभु मेरी (प्रस्कण्वकी) प्रार्थना सुने, यह इस मन्त्रका आशय है।

प्रियमेध (आंगिरसः) ऋ. ८।२।१-(४०); ६८-(१९); ६९-(१८); ८७-(६); ९।२८-(६) कुलमन्त्र ८९

अत्रिः (भौमः) ऋ. ५।२७-(६), ३७-४३-(७९); ७६-(५); ७७-(५); ८३-८६-(२७); ९।६७।१०-१२ (३); ८६।४१-४५ (५) कुलमंत्र १३०

विरूप (आङ्गिरसः) ८।४३-(३३); ४४-(३०); ७५-(१६), कुलमंत्र ७९

अङ्गिराः-अङ्गिरा ऋषिके मंत्र अथर्ववेदमें बहुत हैं, इसलिये अथर्ववेदका नाम ' अङ्गिरोवेदः ' ऐसा हुआ है।

ये चार ऋषि प्रस्कण्वके पूर्व समयके प्रतीत होते हैं। क्यों कि ' जैसी इनकी प्रार्थना सुनी गयी थी, वैसी मेरी सुनो ' ऐसा इस मंत्रमें कहा है।

मं. ४ में ' **प्रियमेध** ' ऋषिका नाम पुनः आया है। '**महि-केरवः**' अर्थात् उत्तमसे उत्तम बडे बडे यज्ञकर्म करनेवाले, महान् शुभकर्म करनेवाले प्रियमेध ऋषि जिस तरह (**अग्निं ऊतये अह्वषत** । मं. ४) अग्निदेवकी सबकी सुरक्षाके लिये प्रार्थना करते थे, उसी तरह मैं प्रस्कण्व भी उसी प्रभुकी प्रार्थना कर रहा हूं, इसलिये मेरी प्रार्थना सुननी चाहिये, ऐसा इसका कथन है।

सबकी सुरक्षा, सबकी उन्नति ही प्रार्थनाका विषय होता है। इसमें ' **ऊति** ' शब्द ही प्रमाण है। इसका अर्थ— बुनना, सीना, संरक्षण, सुरक्षा, आनंद, मर्दानी खेल, प्रीति, सहायता, इच्छा, कामना, भला करना, शुभ कार्य, उत्साह यह है। इसमें सबकी सुरक्षा, सबकी उन्नति, सबकी भलाईही मुख्य है; क्योंकि यज्ञके लियेही यह सब है और यज्ञ तो संगठन करनेके लियेही होता है। इसलिये वेदमें जहां ' ऊति ' पद आवेगा वहां ' सबकी संगठनपूर्वक सुरक्षा ' ऐसाही अर्थ लेना चाहिये।

पांचवे मन्त्रमें प्रस्कण्व ऋषि अपना गोत्र कहता है, (**कण्वस्य सूनवः** । मं. ५) कण्वके पुत्र जिन मंत्रोंसे तुम्हारी प्रार्थना करते थे, वे ही ये मंत्र हैं। (**याभिः हवन्ते इमा गिरः**) जिन वाक्योंसे कण्वके पुत्र प्रभुकी प्रार्थना करते थे, वेही ये मन्त्र हैं। वैसीही प्रार्थनाएं हम करते हैं, इसलिये इनको सुनो। यहां बताया है कि हमने परंपरा नहीं छोडी है, जैसी प्रार्थनाकी परंपरा चली आयी है, वैसीही हमने रखी है। परंपरासे सभ्यता सुरक्षित रहती है, इसलिये परंपराका आदर करना चाहिये। इस मन्त्रमें ' **अवसे** ' पद है, जिसका अर्थ पूर्वोक्त ' ऊति ' के समानही सबकी सुरक्षा, सबकी भलाई, सबकी उन्नति है। इसलिये जैसी प्रार्थना करनेकी रीति पहिलेसे चली आती है वैसीही प्रार्थना हम कर रहे हैं। इसलिये हे प्रभो ! तुम हमारी प्रार्थना सुनो, अर्थात् सबको उन्नत करो।

(**विक्षु जन्तवः हवन्ते** । मं. ६) बडे जनसंमर्दमें बैठे ज्ञानी लोग तेरी प्रार्थना करते हैं। यहां यह मंत्रभाग सामुदायिक उपासनाका वर्णन कर रहा है। (**विक्षु**-प्रजासु) प्रजाजनोंमें, सभामें, बडी परिषदमें बैठे (जन्तव.) ज्ञानीजन (हवन्ते) प्रभुकी प्रार्थना करते हैं, (अवसे) सबकी सुरक्षा तथा उन्नतिके लिये वैसीही प्रार्थना सब करते जायँ।

इस सूक्तका सर्वसाधारण उपदेश यह है।

' **दैव्यं जनं बर्हिः आसादय** । (मं. ९) **यक्ष्व** । (मं. १०) दिव्य विबुधोंको आसनोंपर बिठलाओ और उनका सत्कार करो। यह एक बडा भारी, अच्छा आदेश इस सूक्तमें दोवार दिया है। सर्व साधारण जनोंकी पूजा नहीं कही, परन्तु दिव्य जनोंकी अर्थात् दैवी संपत्तिसे युक्त ज्ञानियोंकीही पूजा यहां कही है। सज्जनोंकी ही पूजा समाजमें होनी चाहिये। जहां दुर्जन पूजे जायंगे, वहां अधोगति होगी इसमें संदेह ही नहीं है।

आदर्श पुरुष

इस सूक्तमें जिस आदर्श पुरुषका वर्णन हुआ है, वह निम्नलिखित विशेषणोंसे यहां वर्णित हुआ है—

१ **रोहिदश्वः**- लाल रंगोंके घोडोंपर सवार होनेवाला, लाल रंगके घोडे जिसके रथको जोते हैं,

२ गिर्वणाः- स्तुतिके योग्य, प्रशंसनीय, भाषाका ज्ञानी (मं. २)

३ महिव्रतः- महान् व्रतोंका पालन करनेवाला, बडे, बडे कर्म करनेवाला, प्रचण्ड कर्म करनेवाला, (मं. ३)

४ महिकेरुः- महान् कारीगर, कुशल कारीगर, हरएक कार्य कुशलतापूर्वक करनेवाला,

५ शुक्रेण शोचिषा राजन्- पवित्र तेजसे तेजस्वी, बलवर्धक प्रकाशसे प्रकाशनेहारा, (मं. ४)

६ सन्त्यः- दाता, (मं. ५, ९)

७ चित्रश्रवस्तमः— जिसका यश चारों ओर फैल रहा है।

८ पुरुप्रियः— बहुतोंके लिये प्रिय,

९ शोचिष्केशः- शुद्ध प्रकाशसे युक्त (मं. ६)

१० ऋत्विज् (ऋतु-यज्)- ऋतुके अनुसार यज्ञ करनेहारा।

११ वसुवित्तमः— अत्यंत धनवान्,

१२ श्रुत्कर्णः— जो प्रार्थना सुनता है, अर्थात् जो सुनकर वैसा करता है,

१३ सप्रथस्तमः— सर्वत्र अत्यंत प्रसिद्ध, (मं. ७)

१४ बृहत् भाः — अत्यंत तेजस्वी, (मं. ८)

१५ सहस्कृतः — शक्तिका निर्माण करनेवाला, बल उत्पन्न करनेवाला,

१६ वसुः- सबको वसानेवाला, (मं. ९)

अन्य पद जो इनके साथ मनन करनेयोग्य हैं—

१७ रुद्रः- जो शत्रुओंको रुलाता है, प्रबल वीर,

१८ आदित्यः— जो स्वीकार करता है, अपनी ओर खींचता है। (मं. १)

अन्य पद भी यहां विचार करने योग्य हैं। इन गुणोंसे जैसे पुरुषका बोध होता है, वह इस सूक्तका आदर्श पुरुष है।

सूचना

इस सूक्तके मन्त्र ३,४ और ५ में वैदिक ऋषियोंके नाम आये हैं ऐसा हमारा मत है। 'प्रियमेधाः, अत्रिः, विरूपः, अङ्गिराः, प्रस्कण्वः, प्रस्कण्वस्य सूनवः' ये पद ऋषियोंके सूचक हैं। तथापि कई लोग इन पदोंका अर्थ इनको विशेषण रूपमें मानकर करते हैं, उनके मतसे इनका अर्थ ऐसा होता है—

१ प्रियमेधाः— बुद्धिके कार्य करना जिसे प्रिय है,

२ अत्रिः (अतति)- जो भ्रमण करता है, (अत्ति) जो खाता है,

३ विरूपः- विशेष रूपवान्, कुरूप,

४ अङ्गिराः (अङ्गि-रस्)- अंगरस-चिकित्सा-विद्याका ज्ञाता, अंगीयरसका चिकित्सक,

५ प्रस्कण्वः (प्र-कण्वः)- विशेष व्याख्याता (कण्-शब्दे), विशेष दुःखके कारण दुःखी होकर कहरनेवाला,

इस तरह अर्थ मानकर ये ऋषिवाचक पद नहीं हैं ऐसा इनका मत ये बताते हैं। हमारे मतसे ये पद ऋषिवाचक हैं। पाठक इसका विचार करें।

(१५) वीर

(ऋ.१।४६) प्रस्कण्वः काण्वः। अश्विनौ। गायत्री।

एषो उषा अपूर्व्या व्युच्छति प्रिया दिवः । स्तुषे वामश्विना बृहत् १

या दस्रा सिन्धुमातरा मनोतरा रयीणाम् । धिया देवा वसुविदा २

अन्वयः- एषो प्रिया अपूर्व्या उषाः दिवः व्युच्छति। हे अश्विना! वां बृहत् स्तुषे॥ १॥

अर्थ— यह प्रिय अपूर्व उषा आकाशसे अन्धकारको दूर करती है। हे अश्विदेवों! आप दोनोंकी (मैं) बहुत बडी स्तुति करता हूं॥ १॥

या दस्रा सिन्धुमातरा रयीणां मनोतरा धिया वसुविदा देवा (तौ स्तुषे)॥ २॥

जो शत्रुमर्दनकर्ता, सिन्धु जिनकी माता है ऐसे, धनोंके दाता, मनोहर, और कर्म करनेवालोंको निवासस्थान देनेवाले दो देव हैं। (उनकी मैं स्तुति करता हूं) ॥२॥

वच्यन्ते वां ककुहासो जूर्णायामधि विष्टपि । यद् वां रथो विभिष्पतात् ३
हविषा जारो अपां पिपर्ति पपुरिर्नरा । पिता कुटस्य चर्षणिः ४
आदारो वां मतीनां नासत्या मतवचसा । पातं सोमस्य धृष्णुया ५
या नः पीपरदश्विना ज्योतिष्मती तमस्तिरः । तामस्मे रासाथामिषम् ६
आ नो नावा मतीनां यातं पाराय गन्तवे । युञ्जाथामश्विना रथम् ७
अरित्रं वां दिवस्पृथु तीर्थे सिन्धूनां रथः । धिया युयुज्र इन्दवः ८
दिवस्कण्वास इन्दवो वसु सिन्धूनां पदे । स्वं वव्रिं कुह धित्सथः ९
अभूदु भा उ अंशवे हिरण्यं प्रति सूर्यः । ब्यख्यज्जिह्वयासितः १०
अभूदु पारमेतवे पन्था ऋतस्य साधुया । अदर्शि वि स्रुतिर्दिवः ११

वां रथः जूर्णायां अधि विष्टपि यत् विभिः पतात्, वां ककुहासः वच्यन्ते ॥ ३ ॥

आप दोनोंका रथ प्रशंसित स्वर्गधाममें जब पक्षियोंके वेगसे दौंडता जाता है, (तब) आपकी उत्कृष्ट स्तुतियां कहीं जाती हैं ॥ ३ ॥

हे नरा ! पपुरिः पिता कुटस्य चर्षणिः अपां जारः हविषा पिपर्ति ॥ ४ ॥

हे नेताओं ! सबको परिपूर्ण करनेवाला, पालक, कृतकर्मका दर्शक, जलोंका शोषक (सूर्यदेव) अन्नसे (आपको) तृप्त करे ॥ ४ ॥

हे मतवचसा नासत्या ! वां मतीनां आदारः सोमस्य धृष्णुया पातम् ॥ ५ ॥

हे स्तुतिप्रिय सत्यपालकों ! आपकी बुद्धियोंका द्वार खोलनेवाले (इस) सोमका (अपनी) शक्तिके अनुसार पान करो ॥५॥

हे अश्विना ! ज्योतिष्मती या तमः तिरः नः पीपरत् तां इषं अस्मे रासाथाम् ॥ ६ ॥

हे अश्विदेवों ! प्रकाश देता हुआ जो हमें अन्धकारके परे पहुंचाता है, वह अन्न हमें प्रदान करो ॥ ६ ॥

हे अश्विना ! पाराय गन्तवे मतीनां नावा नः आयातम् । रथं युञ्जाथाम् ॥ ७ ॥

हे अश्विदेवों ! (दुःखरूप समुद्रके) पार जानेके लिये बुद्धियोंकी नौकाके साथ हमारे पास आइये । अपने रथको भी जोतो ॥ ७ ॥

वां दिवः पृथु अरित्रं सिन्धूनां तीर्थे, रथः (भूमौ), इन्दवः धिया युयुज्रे ॥ ८ ॥

तुम्हारा द्युलोकके (समान) विस्तृत नौकायान नदियोंसे पार होनेके लिये उतारके स्थानपर (खडा है, तुम्हारा) रथ (भूमिपर खडा है । अब तुम) सोमरस (अपनी) बुद्धिसे किये कर्मके साथ संयुक्त करो ॥ ८ ॥

हे कण्वासः ! दिवः इन्दवः सिन्धूनां पदे वसु, स्वं वव्रिं कुह धित्सथः ॥ ९ ॥

हे कण्ववंशके उपासकों ! द्युलोकसे (यह) सोमरस (आया है,) सिन्धुओंके स्थानमें (यह) धन (रहा है, अब) अपने देहको, स्वरूपको, कहां रखोगे ? ॥ ९ ॥

भाः उ अंशवे अभूत् उ । सूर्यः हिरण्यं प्रति, असितः जिह्वया व्यख्यत् ॥ १० ॥

(उषाके) किरण सूर्यके लिये (प्रकाशित) हुए हैं । (यह) सूर्य सुवर्णरूप (ही उग रहा है । अब अग्नि) निस्तेज (सा होकर) ज्वालाओंसे प्रकाशितसा दीख रहा है ॥ १० ॥

पारं एतवे ऋतस्य पन्थाः साधुया अभूत् उ । दिवः स्रुतिः वि अदर्शि ॥ ११ ॥

(दुःखके) पार जानेके लिये सत्यका मार्ग (अब) निश्चयसे सरल हुआ है । दिव्य प्रकाश भी दीखने लगा है ॥ ११ ॥

तत्तदिदश्विनोरवो जरिता प्रति भूषति । मदे सोमस्य पिप्रतोः १२
वावसाना विवस्वति सोमस्य पीत्या गिरा । मनुष्वच्छंभू आ गतम् १३
युवोरुषा अनु श्रियं परिज्मनोरुपाचरत् । ऋता वनथो अक्तुभिः १४
उभा पिबतमश्विनोभा नः शर्म यच्छतम् । अविद्रियाभिरूतिभिः १५

सोमस्य प्रिपतोः मदे अश्विनोः तत् तत् इत् अवः जरिता प्रति भूषति ॥ १२ ॥

सोमपानके आनन्दमें (किये हुए) अश्विदेवोंके उन उन (प्रसिद्ध) संरक्षणके कार्योंकी स्तोता लोग बारंबार प्रशंसा करते हैं ॥ १२ ॥

शंभू ! मनुष्वत् विवस्वति ववसाना, सोमस्य पीत्या गिरा आ गतम् ॥ १३ ॥

हे सुखदायी अश्विदेवों ! (आप दोनों) जैसे मनुके यज्ञ-स्थानमें जाकर बैठे थे, (वैसेही) सोमपान करनेके लिये (तथा हमारे द्वारा की गई) स्तुति सुननेके लिये यहां आओ ॥ १३ ॥

परिज्मनोः युवोः श्रियं अनु उषाः उपाचरत् । अक्तुभिः ऋता वनथः ॥ १४ ॥

चारों ओर परिभ्रमण करनेवाले तुम दोनोंकी शोभाके साथ साथ उषा भी आ रही है। रात्रियोंसे सिद्ध किये यज्ञ (के हविष्यान्नका तुम दोनों) स्वीकार करो ॥ १४ ॥

हे अश्विना! उभा पिबतम् उभा अविद्रियाभिः ऊतिभिः नः शर्म यच्छतम् ॥ १५ ॥

हे अश्विदेवों ! तुम दोनों रसपान करो। तथा तुम दोनों अविच्छिन्न संरक्षणोंसे हमें सुख दो ॥ १५ ॥

आदर्श वीर

इस सूक्तमें आदर्श वीरोंका वर्णन है, उनके ये गुण इस सूक्तमें वर्णित हुए है—

१ **दस्रौ**— शत्रुका नाश करनेवाले शूरवीर,

२ **सिन्धु-मातरौ**- सिन्धुदेश, सिंधु नदीका देश अथवा नदी प्रदेशको अपनी मातृभूमि माननेवाले,

३ **रयीणां मनोतरौ**— धनोंकी खोज करनेवाले, धनोंका प्रबंध करनेवाले, धनोंसे सम्मान करनेवाले, धनोंके दाता, धनोंके कारण मनोहर,

४ **धिया वसुविदा**- उत्तम कर्म और बुद्धिके अनुकूल धन या स्थान देनेवाले, (मं. २)

५ **मतवचसौ**- मननपूर्वक मननीय भाषण करनेवाले,

६ **नासत्यौ** (न-अ-सत्यौ)–कभी असत्य भाषण या अयोग्य कर्म न करनेवाले, (मं. ५)

७ **अश्विनौ**- घोडोंकी पालना करनेवाले (मं. ७)

८ **शं-भू**- सुख देनेवाले, (मं. १३)

९ **परि-ज्मानौ**- चारों ओर परिभ्रमण करके सबकी स्थितिका निरीक्षण करनेवाले, (मं. १४)

इनमें '**सिन्धु-मातरौ**' यह पद इन वीरोंके जन्मस्थानकी सूचना देता है। 'सिन्धु' पदसे आजके सिंधदेशकी ही कल्पना करनी चाहिये ऐसी कोई बात नहीं है। यह सिंधुदेश नदीके पासका कोई प्रदेश होगा।

वीरोंके वाहन

इस सूक्तमें अश्विदेवोंके विमानका स्पष्ट उल्लेख है-

१ **वां रथः अधि विष्टपि विभिः पतात्**- आप दोनोंका रथ आकाशमें पक्षियोंसे उडता जाता है। ' विभिः ' पदसे तीन या तीनसे अधिक पक्षियोंका बोध होता है। विमानको पक्षी जोते जाते थे, ऐसा इससे पता लगता है। गरुड, गीध आदि पक्षी हैं और उत्तरी ध्रुवके पास इनसे भी बडे प्रतिघण्टेमें ३०० मीलोंके वेगसे उडनेवाले पक्षी हैं। ऐसेही पक्षी जोते जाते होंगे। (मं. ३)

१ **वां दिवः पृथु अरित्रं सिन्धूनां तीर्थे रथः युयुज्रे**- आपका द्युलोकके समान विस्तृत आरोंसे चलाया जानेवाला रथ नदियोंके उतारके स्थानपर सज्ज होकर खडा है। यहांका ' अरित्र ' पद बता रहा है कि यह नौका है। अन्य स्थानोंके वर्णनोंसे पता ऐसा लगता है कि अश्विदेवोंका रथ आकाशमें विमानोंके समान, जलमें नौकाके समान तथा भूमिपर रथके समान चल सकता था। जलमें आरोंसे चलाया जाता था, भूमिपर घोडोंसे और आकाशमें वेगवान् पक्षियोंसे। ' **तीर्थ** ' का अर्थ ' उतारका स्थान ' है। (मं. ८)

२ पाराय गन्तवे नावा नः आयातं (मं. ७)- पार जानेके लिये नौकाद्वारा हमारे पास आओ। यहां नौकाका उल्लेख है। वेदमें ' रथ ' शब्द विमान, नौका और रथके लिये समानतया प्रयुक्त होता है। आगेपीछेके वर्णनसे यहां कौनसा अर्थ है यह पाठक जान सकते हैं।

सूक्तका ऋषि

मंत्र ९ में ' **कण्वासः** ' पद है। यह मन्त्रद्रष्टा ऋषिका सूचक है। प्रस्कण्व ऋषि कण्व गोत्रोत्पन्न अनेक ऋषियोंको संबोधन करके बुला रहा है। एक गोत्रके लोग मिलकर यज्ञ कर रहे थे ऐसा इससे पता लग सकता है। ' कण्व ' पद दुःखसे कराहनेवालेका भी वाचक है। इस अर्थका स्वीकार करनेसे इसका कण्वगोत्रके साथ संबंध नहीं रहता। यहां दोनों मत वाचकोंके सामने रखे हैं। पाठक विचार करके उचित बोध लेनेका यत्न करें।

सात्त्विक अन्न

छठे मन्त्रमें ' तेजस्वी अन्नका ' वर्णन है। ' **ज्योतिष्मती तमः तिरः, इषं रासाथाम्।** ' (मं. ६) तेजस्वी, तमोगुणसे दूर रहनेवाला, (**पीपरत्**) पुष्टि करनेवाला अन्न हमें चाहिये। यहां अन्नका जो वर्णन है वह निःसंदेह सात्त्विक भोजन है। जिससे तमोगुण दूर रहता है, जो तेजस्विता बढाता है और पुष्टि करता है, वह अन्न सात्त्विकही हो सकता है।

सत्यका मार्ग

ऋतस्य पन्थाः पारं एतवे साधुया अभूत्। (मं. ११) ' सत्यका मार्ग दुःखके पार होनेके लिये साधुताके साथ तैयार हुआ है। ' यह यज्ञका मार्ग अथवा धर्मका मार्ग है। इस सूक्तने यह सीधा यज्ञमार्ग बताया है। इससे जाकर मनुष्य सुख प्राप्त करे।

सोमरस

इस सूक्तमें सोमका जो वर्णन है वह देखनेयोग्य है—

१ मतीनां आदारः (मं. ५)- बुद्धियोंको खोलनेवाला, बुद्धिका विकास करनेवाला, मननशक्तिकी वृद्धि करनेवाला,

२ मतीनां नावा (मं. ७)- मतियोंकी नौका, सोमका रस मानो बुद्धिकी नौकाही है,

३ इन्दवः धिया युयुज्रे (मं. ८)- सोमरस बुद्धिके साथ जुड जाते हैं, बुद्धियोंको उत्तेजना देते हैं,

४ दिवः इन्दवः सिन्धूनां पदे वसु (मं. ९)- द्युलोकसे पर्वत शिखरपरसे लाये हुये ये सोमरस नदियोंके तीरोंपर यज्ञोंमें रखे जाते हैं। सोमरसमें जल मिलाकर यज्ञोंमें पान करते हैं।

५ सोमस्य मदः (मं. १२)- सोमसे आनन्द मिलता है,

इस सूक्तमें जो अन्य वर्णन है वह मंत्रोंके अर्थोंमें स्पष्ट हो चुका है।

(१६) वीर

(ऋ. १।४७) प्रस्कण्वः काण्वः। अश्विनौ। प्रगाथः- विषमा बृहत्यः, समाः सतोबृहत्यः।

अयं वां मधुमत्तमः सुतः सोम ऋतावृधा।
तमश्विना पिबतं तिरोअह्न्यं धत्तं रत्नानि दाशुषे　　१
त्रिवन्धुरेण त्रिवृता सुपेशसा रथेना यातमश्विना।
कण्वासो वां ब्रह्म कृण्वन्त्यध्वरे तेषां सु शृणुतं हवम्　　२

अन्वयः— हे ऋतावृधा अश्विना ! वां अयं मधुमत्तमः सोमः सुतः तिरोअह्न्यं तं पिबतम्। दाशुषे रत्नानि धत्तम्॥ १॥

हे अश्विना ! त्रिवन्धुरेण त्रिवृता सुपेशसा रथेन आ यातम्। कण्वासः वां अध्वरे ब्रह्म कृण्वन्ति, तेषां हवं सु शृणुतम्॥ २॥

अर्थ— हे सत्यका संवर्धन करनेवाले अश्विदेवों ! आप दोनोंके लिये यह अत्यंत मधुर सोमरस निचोडकर कलही रखा है, इसका पान करो। दाताको रत्नोंका दान करो॥१॥

हे अश्विदेवों ! तीन आसनोंसे युक्त, त्रिविध वेष्टनोंसे वेष्टित, सुंदर रूपवाले रथसे आओ। कण्वपुत्र आप दोनोंके लिये इस हिंसारहित कर्ममें स्तोत्र कर रहे हैं, उनकी प्रार्थना सुनो॥ २॥

अश्विना मधुमत्तमं पातं सोममृतावृधा ।
अथाद्य दस्रा वसु बिभ्रता रथे दाश्वांसमुप गच्छतम् ३
त्रिषधस्थे बर्हिषि विश्ववेदसा मध्वा यज्ञं मिमिक्षतम् ।
कण्वासो वां सुतसोमा अभिद्यवो युवां हवन्ते अश्विना ४
याभिः कण्वमभिष्टिभिः प्रावतं युवमश्विना ।
ताभिः ष्व१स्माँ अवतं शुभस्पती पातं सोममृतावृधा ५
सुदासे दस्रा वसु बिभ्रता रथे पृक्षो वहतमश्विना ।
रयिं समुद्रादुत वा दिवस्पर्यस्मे धत्तं पुरुस्पृहम् ६
यन्नासत्या परावति यद् वा स्थो अधि तुर्वशे ।
अतो रथेन सुवृता न आ गतं साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ७
अर्वाञ्चा वां सप्तयोऽध्वरश्रियो वहन्तु सवनेदुप ।
इषं पृञ्चन्ता सुकृते सुदानव आ बर्हिः सीदतं नरा ८

हे ऋतावृधा ! मधुमत्तमं सोमं पातम् । हे दस्रा अश्विना ! अथ अद्य रथे वसु बिभ्रता दाश्वांसं उप गच्छतम् ॥ ३ ॥

हे विश्ववेदसा ! त्रिषधस्थे बर्हिषि मध्वा यज्ञं मिमिक्षतम् । हे अश्विना ! वां सुतसोमाः अभिद्यवः कण्वासः युवां हवन्ते ॥ ४ ॥

हे अश्विना ! युवं याभिः अभिष्टिभिः कण्वं प्र अवतम् । हे शुभः पती ! ताभिः अस्मान् सु अवतम् । हे ऋतावृधा ! सोमं पातम् ॥ ५ ॥

हे दस्रा अश्विना ! सुदासे रथे वसु बिभ्रता पृक्षः वहतम् ! समुद्रात् उत वा दिवः परि पुरुस्पृहं रयिं अस्मे धत्तम् ॥ ६ ॥

हे नासत्या ! यत् परावति स्थः, यत् वा अधि तुर्वशे (स्थः), अतः सूर्यस्य रश्मिभिः साकं सुवृता रथेन नः आ गतम् ॥ ७ ॥

अध्वरश्रियः सप्तयः सवना इत् उप अर्वाञ्चा वां वहन्तु। हे नरा ! सुकृते सुदानवे इषं पृञ्चन्ता बर्हिः आ सीदतम्॥८॥

हे सत्यके संवर्धक देवों ! अत्यंत मधुर सोमरसका पान करो । हे शत्रुनाशक अश्विदेवों ! और आज रथपर धन रखकर दाताके पास आओ ॥ ३ ॥

हे सर्वज्ञाता ! तीन स्थानोंमें (फैलाये) कुशासनपर (बैठकर) मधुररससे यज्ञको भरपूर करो । हे अश्विदेवो ! आप दोनोंके लिये सोमरस निकालकर तेजस्वी कण्वपुत्र तुम्हें बुला रहे हैं ॥ ४ ॥

हे अश्विदेवों ! तुम दोनोंने जिन अभीष्ट सुरक्षाके साधनोंसे कण्वकी सुरक्षा की थी, हे शुभके पालनकर्ता ! उनसे हमारी सुरक्षा करो । हे सत्यके रक्षकों ! सोमरस पीओ ॥ ५ ॥

हे शत्रुविनाशक अश्विदेवों ! सुदासके लिये रथमें धन रखकर (तुमने लाया था और) अन्न भी लाया था। समुद्रसे अथवा आकाशसे अत्यंत प्रशंसनीय धन हमारे लिये लाकर दो ॥ ६ ॥

हे सत्यके पालकों ! यदि तुम दूर हो, अथवा तुर्वशके पास (ही हो, वहांसे) सूर्यके किरणोंके साथ अपने सुंदर रथसे हमारे पास आओ ॥ ७ ॥

हिंसारहित कर्मकी शोभा बढानेवाले घोडे सोमयागके पास तुम्हें ले जाँय । हे नेता वीरों ! उत्तम कर्म करनेवाले दाताके लिये अन्न देते हुए (तुम दोनों) आसनोंपर आकर बैठो ॥ ८ ॥

तेन नासत्या गतं रथेन सूर्यत्वचा ।
येन शश्वदूहथुर्दाशुषे वसु मध्वः सोमस्य पीतये　　९
उक्थेभिरर्वागवसे पुरूवसू अर्कैश्च नि ह्वयामहे ।
शश्वत् कण्वानां सदसि प्रिये हि कं सोमं पपथुरश्विना　　१०

हे नासत्या ! सूर्यत्वचा तेन रथेन आ गतम् । येन दाशुषे शश्वत् वसु मध्वः सोमस्य पीतये ऊहथुः ॥९॥

पुरूवसू अवसे उक्थेभिः अर्कैः च अर्वाक् नि ह्वयामहे । हे अश्विना ! कण्वानां प्रिये सदसि शश्वत् कं सोमं पपथुः हि १०

हे सत्यपालकों ! सूर्यके समान तेजस्वी रथसे आओ । जिससे दाताके लिये सदा धन (देनेके लिये और) मधुर सोमरस पीनेके लिये (तुम दोनों) लाये जाते हैं ॥ ९ ॥

बहुत धनवाले (आप दोनोंको हम अपनी) सुरक्षाके लिये स्तोत्रों और काव्योंसे स्तुति करते हैं । हे अश्विदेवों ! कण्वों-की प्रिय सभामें सदा आनन्ददायक सोमका पान तुमने किया ही है ॥ १० ॥

सूक्तका ऋषि

इस सूक्तमें सूक्तकर्ता ऋषिका और उसके पूर्वजोंका वर्णन आया है, वह देखिये—

१ कण्वासः वां ब्रह्म कृण्वन्ति (मं. २)- कण्वपुत्र या कण्वगोत्रमें उत्पन्न ऋषि तुम्हारा स्तोत्र करते हैं। यहां (कृण्वन्ति) 'करते हैं' पद है ।

२ सुतसोमाः कण्वासः युवां हवन्ते (मं. ४)- सोमरस निकालकर कण्वगोत्रके ऋषि तुम्हें बुलाते हैं, तुम्हारी प्रार्थना करते हैं ।

३ कण्वानां सदसि सोमं पपथुः (मं. १०)- कण्वोंकी सभामें सोमपान तुम दोनोंने किया था ।

४ युवं कण्वं प्रावतं (मं. ५)- तुम दोनोंने कण्वकी सुरक्षा की थी ।

इस तरह कण्व ऋषिका और कण्वके गोत्रमें उत्पन्न हुए ऋषियोंका उल्लेख इस सूक्तमें है ।

वीरोंके गुण

इस सूक्तमें आये हुवे वीरोंके गुणोंका विवरण इससे पूर्व हो चुका है, इसलिये उसके दुहरानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। **ऋतावृधौ**= सत्यको, यज्ञको फैलानेवाले, **अश्विनौ**= घोडोंको साथ रखनेवाले (मं. १), **शुभस्पती**= शुभ कार्य करनेवाले, (मं.५), **विश्ववेदसौ**=सब ज्ञान जाननेवाले, विद्वान्, बहुश्रुत, (मं. ४), **दस्रौ**= शत्रुविनाशक, (मं. ६), **नासत्यौ** = सत्यके पालनकर्ता (मं. ७), **नरौ** = नेता (मं. ८), **पुरूवसू** = बहुतोंको बसानेवाले (मं. १०) ये गुण यहां प्रमुख-स्थान रखते हैं ।

सोमरस

' **तिरो-अह्न्यं सोमं पिबतं** ' (मं. १) = कल निचोडा हुआ सोमरस पीओ। इससे पता लगता है कि सोमसे रस निकाल-कर १२ या २४ घण्टे हो जानेके बाद भी वह पीया जाता था। उसी समय पीया जाता था और कलका आज भी पीया जाता था। ' **मधुमत्तम** ' (मं. ३) उसमें = शहद मिलाया जाता था, अति मधुर बनाया जाता था। '**मध्वा यज्ञं मिमिक्षतं** ।' (मं. ४)= इसकी मधुरिमासे यज्ञ भरपूर हो। अर्थात् याजकोंको भरपूर मीठा रस पीनेके लिये मिले और उपस्थित देवोंको भी मिले

रथ

अश्विदेवोंके रथमें (**त्रि-वन्धुरः** । मं. २) तीन स्थानों-पर तीन बैठकें, तीन वीर बैठनेके लिये तीन स्थान थे। (**त्रिवृतः** मं. २) तीन वेष्टनोंसे यह रथ वेष्टित था। तीन चर्मोंके वेष्टन, अथवा सबसे बाहरका वेष्टन सोने चांदीका भी होता था। गेंडेका चर्म भी अधिक सुरक्षाके लिये बर्ता जाता था। (**सुपेशसा**) उस रथपर सुन्दर चमक दमक रहती थी। (**सुवृतः** । मं. ७) अच्छी तरह कवचसे वेष्टित होनेसे रथ सुरक्षित रहता था (**सप्तयः वहन्तु** । मं. ८) रथको घोडे जाते जाते थे । (**सूर्य-त्वचा** । मं. ९) सूर्यके समान सुनहरी चमक रथपर रहती थी । इससे स्पष्ट होता है कि यह रथ बडी कारीगरीसे बनाया जाता था ।

अध्वरः

यहां यज्ञका नाम ' अ-ध्वर ' आया है जिसमें हिंसा, कुटिलता, कपट, छल, मिथ्याचार, ढोंग न हो वही अध्वर है। इसी यज्ञका वर्णन यहां किया है। अर्थात् हिंसा न होनेवालाही यज्ञ अध्वर कहलाता है।

(१७) उषा

(ऋ. १।४८) प्रस्कण्वः काण्वः। उषाः। प्रगाथः=विषमा बृहत्यः, समाः सतोबृहत्यः।

सह वामेन न उषो व्युच्छा दुहितर्दिवः।
सह द्युम्नेन बृहता विभावरि राया देवि दास्वती १
अश्वावतीर्गोमतीर्विश्वसुविदो भूरि च्यवन्त वस्तवे।
उदीरय प्रति मा सूनृता उषश्चोद राधो मघोनाम् २
उवासोषा उच्छाच्च नु देवी जीरा रथानाम्।
ये अस्या आचरणेषु दध्रिरे समुद्रे न श्रवस्यवः ३
उषो ये ते प्र यामेषु युञ्जते मनो दानाय सूरयः।
अत्राह तत् कण्व एषां कण्वतमो नाम गृणाति नृणाम् ४
आ घा योषेव सूनर्युषा याति प्रभुञ्जती।
जरयन्ती वृजनं पद्वदीयत उत्पातयति पक्षिणः ५

अन्वयः— हे दिवः दुहितः उषः ! नः वामेन सह वि उच्छ। हे विभावरि ! बृहता द्युम्नेन सह (वि उच्छ)। हे देवि ! दास्वती राया (वि उच्छ) ॥ १ ॥

अश्वावतीः गोमतीः विश्व-सुविदः (उषाः) वस्तवे भूरि च्यवन्त। हे उषः ! मा प्रति सूनृताः उदीरय। मघोनां राधः चोद ॥ २ ॥

रथानां जीरा, अस्याः आचरणेषु ये दध्रिरे, श्रवस्यवः समुद्रे न, उषाः देवी उवास, च नु उच्छात् ॥ ३॥

हे उषः ! ते यामेषु ये सूरयः दानाय मनः प्र युञ्जते, एषां नृणां तत् नाम कण्वतमः कण्वः अत्र अह गृणाति ॥४॥

वृजनं जरयन्ती उषाः प्रभुञ्जती आ याति घ। सूनरी योषा इव। पद्वत् ईयते, पक्षिणः उत् पातयति ॥ ५ ॥

अर्थ— हे द्युलोककी पुत्री उषा। हमारे पास सुन्दर धनके साथ प्रकाशित हो। हे तेजस्वी उषा ! बडे प्रकाशके साथ (प्रकाशित हो), हे देवी ! दातृत्व गुणके साथ धन देकर (प्रकाशित हो) ॥ १ ॥

घोडों, गौओं और सब धनोंके साथ (रहनेवाली उषा) सबके उत्तम निवासके लिये बहुत रीतिसे प्रकट होती है। हे उषा ! मेरे लिये सत्ययुक्त होकर उदित हो। धनवानोंके धनको (हमारे पास) प्रेरित कर ॥ २ ॥

रथोंको प्रेरणा करनेवाली (उषा है), अतः इसके आनेपर ये (रथ वैसे) आगे बढाये जाते हैं, जैसे धनके अभिलाषी वीर समुद्रमें नौका छोडते हैं। यह उषा (जैसी पहिले) प्रकाशित होती रही (वैसी भविष्यमें भी) प्रकाशित होती रहेगी ॥ ३ ॥

हे उषा ! तेरे आगमन होनेपर ज्ञानी लोग अपना मन दानमें लगा देते हैं, उन (दानी) मनुष्योंका वह (यशस्वी) नाम कण्वोंमें विद्वान् कण्व ऋषि यहां (उषःकालमेंही) लेता है॥४॥

पापका नाश करनेवाली, उषा देवी, (सबको) खिलाती हुई आती है। जैसी साध्वी स्त्री (घरका पालन करती है)। पांववालोंको चलाती है, और पक्षियोंको उडाती है ॥ ५ ॥

वि या सृजति समनं व्य१र्थिनः पदं न वेत्योदती ।
वयो नकिष्टे पप्तिवांस आसते व्युष्टौ वाजिनीवति ६

एषायुक्त परावतः सूर्यस्योदयनादधि ।
शतं रथेभिः सुभगोषा इयं वि यात्यभि मानुषान् ७

विश्वमस्या नानाम चक्षसे जगज्ज्योतिष्कृणोति सूनरी ।
अप द्वेषो मघोनी दुहिता दिव उषा उच्छदप स्रिधः ८

उष आ भाहि भानुना चन्द्रेण दुहितर्दिवः ।
आवहन्ती भूर्यस्मभ्यं सौभगं व्युच्छन्ती दिविष्टिषु ९

विश्वस्य हि प्राणनं जीवनं त्वे वि यदुच्छसि सूनरि ।
सा नो रथेन बृहता विभावरि श्रुधि चित्रामघे हवम् १०

उषो वाजं हि वंस्व यश्चित्रो मानुषे जने ।
तेना वह सुकृतो अध्वराँ उप ये त्वा गृणन्ति वह्नयः ११

या समानं वि सृजति, अर्थिनः वि (सृजति), ओदती पदं न वेति । हे वाजिनीवति ! ते व्युष्टौ पप्तिवांसः वयः नकिः आसते ॥ ६ ॥

एषा शतं अयुक्त । सुभगा इयं उषाः परावतः सूर्यस्य उदयनात् अधि मानुषान् अभि रथेभिः वि याति ॥ ७ ॥

विश्वं जगत् अस्याः चक्षसे ननाम । सूनरी ज्योतिः कृणोति । मघोनी दिवः दुहिता उषाः द्वेषः अप उच्छत् स्रिधः अप (उच्छत्) ॥ ८ ॥

हे दिवः दुहितः उषः ! चन्द्रेण भानुना दिविष्टिषु भूरि सौभगं अस्मभ्यं आवहन्ती व्युच्छन्ती आ भाहि ॥ ९ ॥

हे सूनरि ! विश्वस्य प्राणनं जीवनं त्वे हि, यत् वि उच्छसि । हे विभावरि ! सा (त्वं) नः बृहता रथेन (आ याहि) । हे चित्रामघे । (नः) हवं श्रुधि ॥ १० ॥

हे उषः ! यः चित्रः मानुषे जने (तं) वाजं हि वंस्व । तेन ये वह्नयः त्वा गृणन्ति (तान्) सुकृतः अध्वरान् उप आ वह ॥ ११ ॥

जो समान (कर्मचारी) को बाहर (कर्म करनेके लिये) निकालती है, धन चाहनेवालोंको (भी बाहर लाती है) । यह जलयुक्त उषा (क्षणभर भी) विश्राम नहीं करती । हे धनयुक्त देवी । तेरे उदय होनेपर उड सकनेवाले पक्षी (अपने घोंसलोंमें) नहीं बैठते ॥ ६ ॥

यह (उषा) सैकडों रथोंको जोतती है । यह धनवाली उषा देवी दूरसे सूर्यके उदयस्थानसे मनुष्योंके पास रथोंके साथ आती है ॥ ७ ॥

सब जगत् इस (उषा)के प्रकाशके लिये प्रणाम करता है । (क्योंकि यही) उत्तम प्रेरणा करनेवाली ज्योति (प्रकाश) करती है । धनवाली द्युलोककी पुत्री उषा द्वेष करनेवालोंको दूर करती है, और हिंसक शोषकोंको भी (दूर भगाती है)॥८॥

हे द्युलोककी पुत्री उषा देवी ! आल्हाददायक प्रकाशके साथ यज्ञोंमें अखण्ड सौभाग्य हमें देती हुई, और अन्धकारको दूर करती हुई प्रकाशित हो ॥ ९ ॥

हे उत्तम नेत्री ! सबका प्राण और जीवन तुम्हारेमेंही है, क्योंकि (तुम) अन्धकारको दूर करती हो । हे तेजस्विनी ! वह (तुम) हमारे पास बडे रथसे (आओ) । हे विलक्षण धनवाली ! (हमारी) प्रार्थना सुनो ॥ १० ॥

हे उषा ! जो विलक्षण (अन्न) मनुष्यके पास है, उसे तुम स्वीकार करो । और जो आपि तुम्हें स्वीकारते हैं उनके द्वारा यहां उत्तम रीतिसे किये यज्ञोंको संपन्न करो ॥११॥

विश्वान् देवाँ आ वह सोमपीतयेऽन्तरिक्षादुषस्त्वम् ।
सास्मासु धा गोमदश्वावदुक्थ्य१मुषो वाजं सुवीर्यम् ॥ १२
यस्या रुशन्तो अर्चयः प्रति भद्रा अदृक्षत ।
सा नो रयिं विश्ववारं सुपेशसमुषा ददातु सुग्म्यम् ॥ १३
ये चिद्धि त्वामृषयः पूर्व ऊतये जुहूरेऽवसे महि ।
सा नः स्तोमाँ अभि गृणीहि राधसोषः शुक्रेण शोचिषा ॥ १४
उषो यदद्य भानुना वि द्वारावृणवो दिवः ।
प्र नो यच्छतादवृकं पृथु च्छर्दिः प्र देवि गोमतीरिषः ॥ १५
सं नो राया बृहता विश्वपेशसा मिमिक्ष्वा समिळाभिरा ।
सं द्युम्नेन विश्वतुरोषो महि सं वाजैर्वाजिनीवति ॥ १६

हे उषः ! त्वं सोमपीतये अन्तरिक्षात् विश्वान् देवान् आ वह । हे उषः ! सा (त्वं) गोमत् अश्वावत् उक्थ्यं सुवीर्यं वाजं अस्मासु धाः ॥ १२ ॥

हे उषे ! (तुम) सोमपानके लिये अन्तरिक्षसे सब देवोंको ले आओ । हे उषा ! गौओं और घोडोंसे युक्त प्रशंसनीय उत्तम वीर्य बढानेवाले अन्नको हम सबमें धारण करो ॥१२॥

यस्याः अर्चयः रुशन्तः भद्राः प्रति अदृक्षत, सा उषाः नः विश्ववारं सुपेशसं सुग्म्यं रयिं ददातु ॥ १३ ॥

जिसकी ज्योतियां प्रकाशित और कल्याण करनेवाली दीखती हैं, वह उषा हमारे लिये सब प्रकार वरणीय सुरूप और सुखदायी धन देवे ॥ १३ ॥

हे महि ! त्वां ये चित् हि पूर्वे ऋषयः ऊतये अवसे जुहूरे। हे उषः ! सा (त्वं) राधसा शुक्रेण शोचिषा नः स्तोमान् अभि गृणीहि ॥ १४ ॥

हे बडी उषा ! तुम्हें जिन प्राचीन ऋषियोंने अपनी सुरक्षाके लिये और पालनाके लिये बुलाया था । हे उषा ! वह तू पवित्र तेजसे युक्त सिद्धिके साथ हमारे स्तोत्रोंकी प्रशंसा कर ॥ १४ ॥

हे उषः ! अद्य यत् भानुना दिवः द्वारौ वि ऋणवः, नः अवृकं पृथु च्छर्दिः प्र यच्छतात् । हे देवि ! गोमतीः इषः प्र (यच्छतात्) ॥ १५ ॥

हे उषा ! आज अपने तेजसे द्युलोकके दोनों द्वारोंको खोल दिया है । इसलिये हमें क्रूरतारहित विस्तृत घर प्रदान करो । हे देवी ! गौओंसे युक्त अन्न (हमें दो) ॥१५॥

हे उषः ! नः बृहता विश्वपेशसा राया सं मिमिक्ष्व । इळाभिः आ सं (मिमिक्ष्व) । हे महि ! विश्वतुरा द्युम्नेन सं (मिमिक्ष्व) । हे वाजिनीवति ! वाजैः सं (मिमिक्ष्व) ॥ १६ ॥

हे उषा ! हमें बडे अनेक रूपोंवाले धनसे युक्त करो । गौवें हमें (दो) । हे पूजनीय उषा ! सब शत्रुओंका नाशक धन दो । हे बलवाली उषा ! हमें बल दो ॥१६॥

उषाके साथ गौवें

इस सूक्तमें उषाका उत्तम काव्यमय वर्णन हैं । जो पाठक अर्थज्ञानपूर्वक इसका पाठ करेंगे, वेही इस काव्यकी रमणीयताको जान सकते हैं । उषाके साथ गौवों और घोडोंके होनेका वर्णन इस सूक्तमें है–

१ **अश्वावतीः गोमतीः** (मं. २)- घोडों और गौवोंसे युक्त उषा है ।

२ **रथानां जीरा** (मं. ३)— रथोंको प्रेरणा करनेवाली उषा है,

३ **पद्वत् ईयते, पक्षिणः उत् पातयति** (मं. ५)- पांववाले प्राणियोंको-मनुष्यों और पशुओंको-चलनेके लिये प्रेरित करती है, पक्षियोंको उडनेके लिये उत्साहित करती है ।

४ **सम्नं अर्थिनः वि सृजति** (मं. ६)— धन चाहनेवाले उद्यमी पुरुषोंको कर्म करनेके लिये प्रेरणा देती है ।

५ **पतिवांसः वयः नकिः आसते** (मं. ६)- उड सकनेवाले पक्षी अपने घोसलोंमें नहीं ठहरते ।

६ **एषा शतं अयुक्त, रथेभिः वि-याति** (मं. ७)- यह उषा सैकडों रथोंको जोतती और रथोंके साथ चलती है ।

७ **गोमत् अश्वावत् वाजं धाः** (मं. ११)- गौओं और घोडोंसे युक्त अन्न हमें दो।

८ **गोमतीः इषः प्र यच्छतात्** (मं. १५)- गौओंसे युक्त अन्न हमें दो।

यहां गौवें, घोडे, रथ, पक्षी, पशु, कर्मचारी ये सब उषाके साथ रहते हैं ऐसा वर्णन है। अर्थात् उषःकालमें गौवें चरनेके लिये गोशालासे खुली की जाती हैं, वे हम्भारव करती हुई नगरसे वनमें जाती हैं, घोडे भी इसी तरह जाते हैं और बैल तथा अन्य पशु भी। पक्षी अपने घोसलोंको छोडकर भक्ष्य ढूंढनेके लिये आकाशमें उडते है, वीर अपने रथोंको जोतकर दूर देशमें अपने कार्य करने जाते हैं, कर्मचारी अपने अपने काम करनेके लिये जानेकी तैयारी करते हैं, इस तरह उषाके साथ सभी विश्व जाग उठता और अपने कर्ममें लग जाता है। हरएक उषःकालमें ऐसाही होता है। यह उषःकालका स्वाभाविक काव्यमय वर्णन है। उषःकालमें उठकर अपने व्यवहार करनेसे सबको धन, रत्न आदि मिलते हैं।

दान धर्म

९ **सूरयः मनः दानाय प्रयुञ्जते** (मं. ४)- ज्ञानी जन अपना मन दान देनेके कार्योंमें लगाते हैं अर्थात् उषःकालसे दान धर्म और यज्ञ शुरू होते हैं।

नामजप

१० **कण्वतमः कण्वः नाम गृणाति** (मं. ४)- कण्ववंशजोंमें जो विशेष विद्वान् है, वह श्रेष्ठ पुरुषोंके नामका जप करता है।

यहां 'नामजप' का भी वर्णन है और श्रेष्ठसे श्रेष्ठ कण्व वंशज का भी नाम है। इससे स्पष्ट है कि कण्वगोत्रमें कई ऋषि बडे भारी विद्वान् हुए थे और कई साधारण थे।

उषाको प्रणाम

११ **विश्वं जगत् अस्याः चक्षसे ननाम** (मं. ८)- सब विश्व इस उषाके दृश्यको नमस्कार करता है, सूर्यको प्रणाम करता है।

सूर्य, उषा आदि देवताओंको उदयके समय नमस्कार करनेकी वैदिक प्रथा यहां दिखाई देती है। आज भी उदयके समय सूर्यको प्रणाम करनेवाले हिंदुओं और पार्सीयोंमें बहुत हैं। दीप लगातेही दीपको प्रणाम करते हैं। नदी, सागर आदिको प्रणाम करते हैं। इस मंत्रमें उषाको प्रणाम करनेकी रीतिका उल्लेख है।

शत्रुको दूर करना

१२ **उषाः द्वेषः स्निधः अप उच्छत्** (मं. ८)- उषा शत्रुओं, हिंसकोंको दूर करती है। अर्थात् रात्रीके समय चोर-डाकू, लुटेरे, घातक घूमते रहते हैं, उषःकाल होतेही वे अपने गुप्त स्थानमें जाकर छिपकर रहते हैं। इस तरह उषा इनको दूर करती है।

पूर्व ऋषि

१३ **त्वां (उषसं) पूर्वे ऋषयः जुहूरे** (मं. १४)— प्राचीन ऋषियोंनें उषाका काव्य किया था। वैसाही काव्य हम कर रहे हैं, अतः—

१४ **नः स्तोमान् अभि गृणीहि** (मं. १४)- हमारे स्तोत्रोंको भी सुनो और उनकी प्रशंसा करो।

यहां जैसा पूर्व ऋषियोंने उषा देवताका काव्य किया था वैसा हम नूतन ऋषि भी स्तोत्र कर रहे हैं ऐसा कहा है।

इस सूक्तके अन्यभाव मंत्रोंके अर्थमें स्पष्ट हुए हैं।

(१८) उषा

(ऋ. १।४९) प्रस्कण्वः काण्वः । उषाः । अनुष्टुप् ।

उषो भद्रेभिरा गहि दिवश्चिद् रोचनादधि । वहन्त्वरुणप्सव उप त्वा सोमिनो गृहम् ॥ १

अन्वयः- हे उषः भद्रेभिः दिवः चित् रोचनात् आ-गहि। अरुणप्सवः सोमिनः गृहं त्वा उप वहन्तु॥ १॥

अर्थ- हे उषा! कल्याणकारक द्युलोकके तेजस्वी मार्गसे (यहाँ) आओ। अरुण रंगवाले किरण (घोडे या गौवें) सोमयाजकके घरमें तुम्हें ले आवें॥ १॥

सुपेशसं सुखं रथं यमध्यस्था उषस्त्वम् । तेना सुश्रवसं जनं प्रावाद्य दुहितर्दिवः २
वयश्चित् ते पतत्रिणो द्विपच्चतुष्पदर्जुनि । उषः प्रारन्नृतूँरनु दिवो अन्तेभ्यस्परि ३
व्युच्छन्ती हि रश्मिभिर्विश्वमाभासि रोचनम् । तां त्वामुषर्वसूयवो गीर्भिः कण्वा अहूषत ४

हे उषः ! त्वं यं सुपेशसं सुखं रथं अध्यस्थाः। हे दिवः दुहितः ! तेन अद्य सुश्रवसं जनं प्र अव ॥ २ ॥

हे उषा ! तुम जिस सुन्दर सुखदायी रथपर बैठती हो, हे द्युलोककी पुत्री ! उससे आज सुयशवाले जनकी सुरक्षा करो ॥ २ ॥

हे अर्जुनि उषः ! ते ऋतून् अनु द्विपत् चतुष्पत् पतत्रिणः वयः चित् दिवः अन्तेभ्यः परि प्र अरन् ॥ ३ ॥

हे शुभ्र वर्णवाली उषा ! तेरे (आगमनके) समयमें द्विपाद मानव, चतुष्पाद पशु और उडनेवाले पक्षी द्युलोकके अन्ततक गमन करते हैं (और अपने कर्ममें दत्तचित्त होते हैं) ॥ ३ ॥

हे उषः ! व्युच्छन्ती रश्मिभिः विश्वं रोचनं आ भासि। हि तां त्वां वसूयवः कण्वाः गीर्भिः अहूषत ॥ ४ ॥

हे उषा ! अन्धकारको दूर करती हुई अपने किरणोंसे सब जगत्को प्रकाशित करती हो। धनकी इच्छा करनेवाले कण्व अपने स्तोत्रोंसे उस तुम्हारा यश गाते हैं ॥ ४ ॥

ऋषिनाम

इस सूक्तके अन्तिम मंत्रमें ऋषिनामका उल्लेख है- **'कण्वाः गीर्भि अहूषत (मं. ४)'** कण्व ऋषि अपनी वाणियोंसे उषाके काव्य गाते हैं।

' अर्जुनि उषः '(मं. ३)- श्वेत वर्णवाली उषा। प्रातः-कालकी उषाकाही वर्णन है। श्वेतवर्ण दिनका है वह जिसमें क्षण क्षणमें अधिकाधिक मिलता जाता है वह प्रभात समयकी ही उषा है।

इस समय मनुष्य, पशु, पक्षी, अपने अपने कार्यमें लगते हैं। यह भी प्रभात समयही है। इसके विपरीत शामके समयमें होता है। पशु पक्षी घोसलोंमें आते हैं, मानव घरमें आते हैं, अपने कार्योंसे शामके समय निवृत्त होते हैं।

(१९) सूर्यसे आरोग्य

(ऋ. १।५०) प्रस्कण्वः काण्वः। सूर्यः (११-१३ रोगघ्न्य उपनिषदः, १३ अन्त्योऽर्धर्चः द्विषद्घ्नश्च)। गायत्री, १०-१३ अनुष्टुप्।

उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् १
अप त्ये तायवो यथा नक्षत्रा यन्त्यक्तुभिः । सूराय विश्वचक्षसे २
अदृश्रमस्य केतवो वि रश्मयो जनाँ अनु । भ्राजन्तो अग्नयो यथा ३

अन्वयः— केतवः त्यं जातवेदसं देवं सूर्यं विश्वाय दृशे उत् उ वहन्ति ॥ १ ॥

अर्थ— किरण उस वेदके प्रकाशक दिव्य सूर्यको विश्वके दर्शन करानेके लिये ऊपर उठाते हैं ॥ १ ॥

त्ये तायवः यथा, नक्षत्रा अक्तुभिः, विश्वचक्षसे सूराय अप यन्ति ॥ २ ॥

चोरोंके समान, वे नक्षत्र रात्रीके साथ, जगत्प्रकाशक सूर्यका (आगमन होनेपर) दूर भाग जाते हैं ॥ २ ॥

अस्य केतवः रश्मयः जनान् अनु वि अदृश्रम्, यथा भ्राजन्तः अग्नयः ॥ ३ ॥

इस (सूर्यके सूचक) किरण लोगोंको अनुकूलतापूर्वक विशेष निरीक्षण करके देखते हैं। वे तेजस्वी अग्नि जैसे दीखते हैं ॥ ३ ॥

तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य । विश्वमा भासि रोचनम् ४
प्रत्यङ् देवानां विशः प्रत्यङ्ङुदेषि मानुषान् । प्रत्यङ् विश्वं स्वर्दृशे ५
येना पावक चक्षसा भुरण्यन्तं जनाँ अनु । त्वं वरुण पश्यसि ६
वि द्यामेषि रजस्पृथ्वहा मिमानो अक्तुभिः । पश्यञ्जन्मानि सूर्य ७
सप्त त्वा हरितो रथे वहन्ति देव सूर्य । शोचिष्केशं विचक्षण ८
अयुक्त सप्त शुन्ध्युवः सूरो रथस्य नप्त्यः । ताभिर्याति स्वयुक्तिभिः ९
उद् वयं तमसस्परि ज्योतिष्पश्यन्त उत्तरम् । देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् १०
उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवम् । हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय ११
शुकेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि । अथो हारिद्रवेषु मे हरिमाणं नि दध्मसि १२

हे सूर्य ! (त्वं) तरणिः विश्वदर्शतः ज्योतिष्कृत् असि । रोचनं विश्वं आ भासि ॥ ४ ॥

(त्वं) देवानां विशः प्रत्यङ् उत् एषि । मानुषान् प्रत्यङ्, (तथा) विश्वं स्वः दृशे (प्रत्यङ् उत् एषि) ॥ ५ ॥

हे पावक वरुण ! त्वं जनान् भुरण्यन्तं येन चक्षसा अनु पश्यसि ॥ ६ ॥

हे सूर्य ! (त्वं) पृथु रजः द्यां, अहा अक्तुभिः मिमानः, जन्मानि पश्यन् वि एषि ॥ ७ ॥

हे विचक्षण सूर्य देव ! सप्त हरितः शोचिष्केशं त्वा रथे वहन्ति ॥ ८ ॥

सूरः रथस्य नप्त्यः शुन्ध्युवः सप्त अयुक्त । ताभिः स्वयुक्तिभिः याति ॥ ९ ॥

वयं तमसः परि ज्योतिः, उत्तरं देवत्रा देवं सूर्यं पश्यन्तः, उत्तमं ज्योतिः उत् अगन्म ॥ १० ॥

हे सूर्य मित्रमहः ! अद्य उद्यन्, उत्तरां दिवं आरोहन्, मम हृद्रोगं हरिमाणं च नाशय ॥ ११ ॥

मे हरिमाणं शुकेषु रोपणाकासु दध्मसि । अथो हारिद्रवेषु मे हरिमाणं नि दध्मसि ॥ १२ ॥

हे सूर्य ! (तू आकाशमें) तैरता है, सबका दर्शन करता है, प्रकाशको फैलाता है। दीप्तिमान् विश्वको भी प्रकाशित करता है ॥ ४ ॥

(तुम) देवोंकी प्रजाके सामने उदित होते हो। मनुष्योंके सामने, (तथा) सब प्रकाशके दर्शन होनेके लिये प्रत्यक्ष उदित होते हो ॥ ५ ॥

हे पवित्रता करनेवाले वरणीय देव ! तुम सब जनोंको और इस गतिमान् जगत्को जिस प्रकाशसे (कृपासे) देखते हो, (वही हम चाहते हैं) ॥ ६ ॥

हे सूर्य ! (तुम) विस्तृत रजोलोकसे और द्युलोकसे, दिवसको रात्रियोंके साथ मापन करते हुए और सबके जन्मोंका निरीक्षण करते हुए जाते हैं ॥ ७ ॥

हे प्रकाशक सूर्य देव ! सात किरणरूप घोडे, शुद्ध किरणवाले तुम्हें रथमें उठाकर ले जाते हैं ॥ ८ ॥

सूर्यने रथको ले जानेवाली, शुद्धि करनेवाली सात (घोडियोंको रथके साथ) जोत दिया है। उन स्वयं जोती हुई (घोडियोंसे सूर्यदेव) जाते है ॥ ९ ॥

हम सब अन्धकारसे ऊपर उठी ज्योतिको (देखकर), उससे भी अधिक तेजस्वी देव सूर्यको देखते हुए, अन्तमें उत्कृष्टसे उत्कृष्ट ज्योतिको प्राप्त करते हैं ॥ १० ॥

हे मित्रसदृश महनीय सूर्य ! तू आज उदित होता हुआ, उत्तर दिशाके द्युलोकपर चढता हुआ, मेरे हृदयरोग और पीलक रोगका नाश कर ॥ ११ ॥

तू मेरा हरिमा (पीलक) रोग शुक (तोते) नामक पक्षीमें तथा शारिकाओंमें रख देता है। और हरे वृक्षोंपर मेरे हरिमा रोगको रख देता है ॥ १२ ॥

उद्गादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह । द्विषन्तं मह्यं रन्धयन् मो अहं द्विषते रधम्॥१३

अयं आदित्यः विश्वेन सहसा सह उत् अगात् । मह्यं द्विषन्तं रन्धयन्, अहं द्विषते मो रधम् ॥ १३ ॥

यह सूर्य सब बलके साथ उदित हुआ है । यह मेरे लिये शत्रुका नाश करे, पर मैं अपने द्वेषीके अधीन कभी न हो जाऊं (ऐसा भी वही करे) ॥ १३ ॥

सूर्यकिरणोंसे रोगोंकी चिकित्सा

इस सूक्तका देवता सूर्य है और सूर्यकिरणोंसे रोग दूर करनेकी सूचना इस सूक्तमें है । विशेष कर हृद्रोग, हृदयकी दुर्बलता और पीलक रोग, पाण्डु रोग आदिको दूर करनेका इसमें निःसंदेह उल्लेख है । '**रोगघ्न्य उपनिषदः**' ऐसा इस सूक्तका संकेत सूत्रकारने दिया है वह योग्यही है । रोग दूर करनेकी यह विद्या है ।

मन्त्र १ से ७ तक सूर्यका वर्णन है । आठवें मन्त्रमें '**शोचिष्-केशं**' पद सूर्यका विशेषण है जिसमें सूर्य-प्रकाशमें शुद्धता करनेका गुण है ऐसा सूचित हुआ है । शुद्धता करनेका ही अर्थ रोगबीजोंका नाश करके आरोग्य देना है । सूर्यके किरणोंमें सात रंगोंके किरण होते हैं । सूर्यकिरण श्वेत रंगका है, उसको काचसे विभिन्न किया तो सात रंग स्पष्ट दीखते हैं । इनमें रोग दूर करनेकी शक्ति है । वर्ण-चिकित्साका इस तरह संबंध आता है ।

आगे ९ म मन्त्रमें किरणोंका नाम '**शुन्ध्युवः**' है यह भी किरणोंका शोधक गुण बता रहा है । शोधनसेही शुद्धता होकर रोग दूर होते हैं ।

मन्त्र ११ और १२ में '**हृद्रोग, हरिमा**' इन रोगोंके दूर करनेका उल्लेख है । हरिमा रोगको शुकों और वृक्षोंमें फेंकनेका भाव यहां है कि यह हरिमा यदि किसी स्थानपर रहनाही है तो वह मनुष्योंके शरीरमें न रहे, वृक्षों और तोतोंके शरीरमें रहे । हरिमा, हरापन रहनेके लिये परमेश्वरने प्राणियोंमें तोतोंका शरीर और स्थावरोंमें वृक्ष बनाये हैं । मनुष्यमें हरिमाके लिये स्थान नहीं होना चाहिये । शुद्ध रक्त न होनेसे हरिमा मनुष्य शरीरपर दिखाई देता है, सूर्यकिरणोंसे वह हरिमा दूर होता है और मनुष्य हृष्टपुष्ट और आरोग्यसंपन्न हो जाता है ।

सूर्यकिरणमें (**विश्वेन सहसा सह** । मं. १३) सब प्रकारका बल रहता है । सूर्यकिरणसे शरीरको योग्य समयमें तपानेसे वह बल प्राप्त होता है । भोजन पूर्व या उत्तर एक घण्टा सूर्यकिरणोंको शरीरपर रखना योग्य नहीं है । सबेरे शीत जलसे स्नान करके सूर्यकिरणोंमेंही संध्या, उपासना, ध्यान, गायत्री जप, सूर्योपस्थान आदि घण्टा डेढ घण्टा खुले शरीरसे करनेसे पर्याप्त प्रमाणमें सूर्यकिरण-स्नान होता है और लाभ भी अच्छा होता है । अतिशीत जहां होता है वहां सूर्यकिरण-स्नानके लिये सुबह ९।१० बजेका समय या सायं ३।४ बजेका समय निकालना योग्य होगा । यह शरीरका अभ्यास युक्तिपूर्वक अपने शरीरकी शक्ति देखकर शनैः शनैः करना उचित है ।

' मेरे शत्रु मरें, पर मैं शत्रुके अधीन न होऊं, ' यह इस सूक्तका आन्तिम संदेश स्मरण रखनेयोग्य है ।

(अष्टम मण्डल)

अथ वालखिल्यम्

(२०) प्रभावी वीर

(ऋ. ८।५१) प्रस्कण्वः काण्वः । इन्द्रः । प्रगाथः= (विषमा बृहती, समा सतोबृहती)

अभि प्र वः सुराधसमिन्द्रमर्च यथा विदे ।
योः जरितृभ्यो मघवा पुरूवसुः सहस्रेणेव शिक्षति १

अन्वयः— वः सुराधसं इन्द्रं, यथा विदे (तथा), अभि प्र अर्च । यः मघवा पुरुवसुः जरितृभ्यः सहस्रेण इव शिक्षति ॥ १ ॥

अर्थ- आपके लिये उत्तम सिद्धि देनेवाले इन्द्रकी, जिस तरह विधि-प्रसिद्ध है (उस तरह), पूजा करो । जो वह धनवान् इन्द्र बहुतही धनवाला होनेके कारण उपासकोंके लिये सहस्रोंकी संख्यामें (धन) देता है ॥ १ ॥

शतानीकेव प्र जिगाति धृष्णुया हन्ति वृत्राणि दाशुषे ।
गिरेरिव प्र रसा अस्य पिन्विरे दत्राणि पुरुभोजसः २
आ त्वा सुतास इन्दवो मदा य इन्द्र गिर्वणः ।
आपो न वज्रिन्नन्वोक्यं१ सरः पृणन्ति शूर राधसे ३
अनेहसं प्रतरणं विवक्षणं मध्वः स्वादिष्ठमीं पिब ।
आ यथा मन्दसानः किरासि नः प्र क्षुद्रेव त्मना धृषत् ४
आ नः स्तोममुप द्रवद्धियानो अश्वो न सोतृभिः ।
यं ते स्वधावन्त्स्वदयन्ति धेनव इन्द्र कण्वेषु रातयः ५
उग्रं न वीरं नमसोप सेदिम विभूतिमक्षितावसुम् ।
उद्रीव वज्रिन्नवतो न सिञ्चते क्षरन्तीन्द्र धीतयः ६
यद्ध नूनं यद्वा यज्ञे यद्वा पृथिव्यामधि ।
अतो नो यज्ञमाशुभिर्महेमत उग्र उग्रेभिरा गहि ७

धृष्णुया शतानीका इव प्र जिगाति, (यः) दाशुषे वृत्राणि हन्ति । पुरुभोजसः अस्य दत्राणि प्र पिन्विरे, गिरेः रसाः इव ॥ २ ॥

हे गिर्वणः इन्द्र ! ये मदाः इन्दवः सुतासः (सन्ति), हे वज्रिन् शूर ! ओक्यं त्वा राधसे आ अनु पृणन्ति, आपः सरः न ॥ ३ ॥

प्रतरणं विवक्षणं मध्वः स्वादिष्ठं अनेहसं ईं पिब । मन्दसानः नः यथा आ किरासि, धृषत् त्मना क्षुद्रा इव प्र (ददाति) ॥ ४ ॥

हे इन्द्र ! नः सोतृभिः स्तोमं आ उप द्रवद्, हियानः अश्वः न । हे स्वधावन् ! ते धेनवः कण्वेषु रातयः यं स्वदयन्ति ॥ ५ ॥

हे इन्द्र ! विभूतिं अक्षितवसुं वीरं नमसा उप सेदिम, उग्रं न । हे वज्रिन् ! सिञ्चते धीतयः उद्री इव अवतः न, क्षरन्ति ॥ ६ ॥

हे महेमते ! यत् ह नूनं, यत् वा यज्ञे, यत् वा पृथिव्यां अधि (वर्तसे), अतः उग्रः उग्रेभिः आशुभिः नः यज्ञं आ गहि ॥ ७ ॥

इन्द्र धैर्यसे, सौ सेनाओंका स्वामी होनेके समान, आगे बढता है । वह दाताकी (सुरक्षा करनेके) लिये घेरनेवाले शत्रुओंका वध करता है । अनेकोंको भोजन देनेवाले इस इन्द्रको अर्पण करनेके लिये सोमरस, पर्वतसे निकलनेवाले झरनोंके समान, बढते जाते हैं ॥ २ ॥

हे स्तुत्य इन्द्र ! जो आनन्दवर्धक सोमरस निचोडकर(तैयार किये हैं वे), हे वज्रधारी शूर ! तेरे घरको तेरी प्रसन्नताके लिये परिपूर्ण करते हैं (तुम्हें समर्पित होते हैं)। जैसे जल-प्रवाह सरोवरको (भर देते हैं) ॥ ३ ॥

विशेष तारक, वर्णनीय, मधुरताके कारण स्वादिष्ट, और निष्पाप रसका पान करो । जिससे आनन्दित, प्रसन्न होकर तुम हमें बहुत दान दोगे, (क्योंकि तुम्हारे) धैर्यमय उत्साहसे युक्त होकर क्षुद्र स्त्री भी बहुत (दान देती है) ॥ ४ ॥

हे इन्द्र ! हमारे स्तोताओंके साथ हमारे यज्ञके पास आओ, जैसा हिनहिनानेवाला घोडा आता है । हे अपनी शक्तिसे युक्त वीर ! तेरी गौवें कण्वोंके (सोमरसके) दानोंमें इस (सोमरसको) स्वादु बना देती हैं ॥ ५ ॥

हे इन्द्र ! विभूतिरूप, अक्षय्य धनवाले वीर (इन्द्र)के पास हम नमस्कारके साथ जाते हैं, जैसे शूरके पास (पहुंचते हैं) । हे वज्रधारी, वृष्टि करनेवाले (तुम्हारे) लिये सब स्तोत्र, प्रवाह हौजको भरनेके समान, प्रवाहित होते हैं ॥६॥

हे महाबुद्धिमान् ! जहां भी तुम हो, यज्ञमें अथवा भूमिपर (हो), वहांसे उग्रवीर होकर अपने उग्र घोडोंके साथ हमारे यज्ञमें आओ ॥ ७ ॥

अजिरासो हरयो ये त आशवो वाताइव प्रसक्षिणः ।
येभिरपत्यं मनुषः परीयसे येभिर्विश्वं स्वर्दृशे ८

एतावतस्त ईमह इन्द्र सुम्नस्य गोमतः ।
यथा प्रावो मघवन्मेध्यातिथिं यथा नीपातिथिं धने ९

यथा कण्वे मघवन्त्रसदस्यवि यथा पक्थे दशव्रजे ।
यथा गोशर्ये असनोर्ऋजिश्वनीन्द्र गोमद्धिरण्यवत् १०

ये ते हरयः, वाता इव, प्रसक्षिणः अजिरासः आशवः, येभिः मनुषः अपत्यं परि ईयसे, येभिः विश्वं स्वः दृशे, (तैः आगहि) ॥ ८ ॥

जो तुम्हारे घोडे, वायुके समान शत्रुभञ्जक, वेगवान् और शीघ्रगामी हैं, जिनसे तुम मनुष्योंके पास पुत्रवत् जाते हो, और जिनसे सब विश्वका निरीक्षण करते हो, (उनसे) तुम आओ ॥ ८ ॥

हे मघवन् इन्द्र ! धने यथा मेध्यातिथिं प्र आवः, यथा नीपातिथिं (प्र आवः), एतावतः ते गोमतः सुम्नस्य ईमहे ॥ ९ ॥

हे धनवान् इन्द्र ! युद्धमें जैसी तुमने मेध्यातिथि ऋषिकी सुरक्षा की थी, जैसी नीपातिथिकी (की थी), वैसी सुरक्षा हमें गौओंके साथ धन (मिलकर) तुमसे मिले ॥९॥

हे मघवन् इन्द्र ! यथा कण्वे गोमत् हिरण्यवत् असनोः। यथा त्रसदस्यवि, यथा पक्थे, दशव्रजे, यथा गोशर्ये, ऋजिश्वनि (असनोः) ॥१०॥

हे धनवान् इन्द्र ! जैसा तुमने कण्वके लिये गौवें और सुवर्णमय धन दिया था, जैसा त्रसदस्यु, पक्थ, दशव्रज, गोशर्य, और ऋजिश्वाको दिया था (वैसा हमें दो) ॥ १०॥

सूक्तमें ऋषियोंके नाम

इस सूक्तके मंत्र ५ और १३ में ' **कण्व** ' का नाम आया है। यह इसी सूक्तके ऋषि प्रस्कण्वका पिता या गोत्रप्रवर्तक है। इस कण्व ऋषिके मंत्र इसी ग्रंथमें प्रारंभमें दिये हैं। ' **मेध्यातिथि** और **नीपातिथि** ' ये भी कण्वके गोत्रमें ही उत्पन्न हुए ऋषि हैं। **मेध्यातिथि**के मंत्र ऋ. ८।१। ३-२९ (मंत्र २७), ८। ३ में मंत्र २४ हैं, ८। ३३ में मंत्र १९ है मिलकर ७० मंत्र हुए।

नीपातिथि के मंत्र ऋ. ८।३४।१-१५ कुलमंत्र १५है। इसके अतिरिक्त त्रसदस्यु, पक्थ, दशव्रज, गोशर्य, ऋजिश्वा ये नाम इस सूक्तके १० वें मंत्रमें हैं। इनके ऋग्वेदमें ये स्थान है-

ऋजिश्वा भारद्वाजः— ऋ. ६।४९-५२ (मंत्र ६३); ९।९८ (मं. १२); ९।१०८।६,७ (मं. २) कुलमन्त्र ७७ हैं।

त्रसदस्युः पौरुकुत्स्यः— ऋ. ४।४२ (मं. १०), ५।२७ (मं. ६), ९।११० (मं. १२) कुलमंत्र २८ हैं।

पक्थ, दशव्रज, गोशर्यके मंत्र मिलते नहीं है। ये ऋषि प्रस्कण्व ऋषिके पूर्व समयके प्रतीत होते हैं। क्योंकि ' जैसा इनको तुमने दान दिया था वैसा हमें दो। ऐसी प्रार्थना यहां है। इसलिये इन ऋषियोंका प्रस्कण्वके पूर्व समयमें होना सिद्ध है।

आदर्श पुरुष

इस सूक्तमें इन्द्रको आदर्श पुरुष बताते हुए इस तरह वर्णन किया गया है—

१ **सुराधसः**— उत्तम धनवान्, उत्तम सिद्धि देनेवाला,

२ **मघवा, पुरुवसुः**— धनवान्, (मं. १)

३ **शतानीकः**— सैकडों सेना-विभागोंको तैयार रखनेवाला,

४ **दाशुषे वृत्राणि हन्ति**— दाताके हित करनेके लिये शत्रुओंका नाश करता है।

५ **पुरुभोजाः**- बहुत भोजन देनेवाला, (मं. २)

६ **मन्दसानः**— आनन्द प्रसन्न, (मं. ३)

७ **विभूतिः**- विशेष प्रभावी,

८ **अक्षितवसुः**— अक्षय धनवाला,

९ **उग्रः**— शूरवीर,

१० **वज्री**- वज्र-धारी, (मं. ६)

११ **महेमतिः**— महा बुद्धिमान् (मं. ७)

इस सूक्तका आदर्श मानव इन गुणोंसे युक्त है। अन्य गुण सूक्तके अर्थमें पाठक देख सकते हैं।

(नवम मण्डल)

(२१) सोमरस

(ऋ. ९।९५) प्रस्कण्वः काण्वः । पवमानः सोमः । त्रिष्टुप् ।

कनिक्रन्ति हरिरा सृज्यमानः सीदन्वनस्य जठरे पुनानः ।
नृभिर्यतः कृणुते निर्णिजं गा अतो मतीर्जनयत स्वधाभिः　　१
हरिः सृजानः पथ्यामृतस्येयर्ति वाचमरितेव नावम् ।
देवो देवानां गुह्यानि नामाऽऽविष्कृणोति बर्हिषि प्रवाचे　　२
अपामिवेदूर्मयस्तर्तुराणाः प्र मनीषा ईरते सोममच्छ ।
नमस्यन्तीरुप च यन्ति सं चाऽऽच विशन्त्युशतीरुशन्तम्　　३
तं मर्मृजानं महिषं न सानावंशुं दुहन्त्युक्षणं गिरिष्ठाम् ।
तं वावशानं मतयः सचन्ते त्रितो बिभर्ति वरुणं समुद्रे　　४

अन्वयः— सृज्यमानः हरिः आ कनिक्रन्ति । पुनानः वनस्य जठरे सीदन् । नृभिः यतः गाः निर्णिजं कृणुते । अतः मतीः स्वधाभिः जनयत ॥ १ ॥

सृजानः हरिः ऋतस्य पथ्यां वाचं इयर्ति, अरिता नावं इव । देवः देवानां गुह्यानि नाम बर्हिषि प्रवाचे आविः कृणोति ॥ २ ॥

अपां इव ऊर्मयः इत् तर्तुराणाः मनीषाः सोमं अच्छ प्र ईरते । नमस्यन्तीः उप यन्ति च सं (यन्ति) च । उशतीः च उशन्तं आ विशन्ति ॥ ३ ॥

मर्मृजानं, महिषं न, सानौ उक्षणं गिरिष्ठां तं अंशुं दुहन्ति। तं वावशानं मतयः सचन्ते । त्रितः वरुणं समुद्रे बिभर्ति ॥४॥

अर्थ— धोया जानेवाला हरेरंगवाला सोम शब्द करता है। शुद्ध होता हुआ (सोम) पात्रके पेटमें जा बैठता है। मनुष्यों-द्वारा तैयार किया गया (सोम) गौ (के दुग्धका) रूप धारण करता है । इसके लिये मनन करनेयोग्य (स्तोत्र) अपनी शक्तिके अनुसार बनाओ ॥ १ ॥

निचोडा जानेवाला हरेरंगका सोम सत्यमार्गके प्रचारकी भाषा बोलता है, जैसे नाविक नौका (चलाता है) । यह सोम देव देवताओंके गुह्य नाम, आसनपर बैठे प्रवचनकारके लिये (उसके प्रवचनमें) प्रकट करता है ॥ २ ॥

जलतरङ्गोंके समान त्वराशील कवियोंकी बुद्धियाँ सोमके पासही (वर्णन करनेके लिये) दौडती हैं । नमन करनेवाली (बुद्धियाँ, सोमके पास) जाती हैं और उस (के वर्णनमें रमती हैं) । इच्छा करनेवाली (मतियाँ) अभीष्ट (सोमके वर्णनमें) प्रविष्ट होती हैं ॥ ३ ॥

धोते हुए, भैसेके समान, पर्वत-शिखरपर रहनेवाले बैलके (समान बलवर्धक) उस दीप्तिमान् (सोमको याजक) दुहते हैं । उस इष्ट (सोम) को (सबकी) बुद्धियाँ चाहती है (प्राप्त करती हैं) । तीन स्थानों (में रहकर लडने) वाला (इन्द्र) वरणीय (सोम) को जलमें धारण करता (और धोता है) ॥ ४ ॥

इष्यन्वाचमुपवक्तेव होतुः पुनान इन्दो वि ष्या मनीषाम् ।
इन्द्रश्च यत्क्षयथः सौभगाय सुवीर्यस्य पतयः स्याम

हे इन्दो ! वाचं इष्यन्, होतुः उपवक्ता इव, पुनानः मनीषां वि ष्य । इन्द्रः च यत् क्षयथः, सौभगाय सुवीर्यस्य पतयः स्याम ॥ ५ ॥	हे सोम ! स्तुतिको चाहनेवाला (तुम), होताके (सहायक) उपवक्ताके समान, शुद्ध होता हुआ (स्तोताओंकी) बुद्धियोंको प्रेरित करो । इन्द्रका जब यजन होगा, (तब हम सब) सौभाग्य-युक्त उत्तम वीर्यके स्वामी हों ॥ ५ ॥

सोमरसकी तैय्यारी

सोमवल्ली पर्वतके शिखरपरसे लायी जाती है, पत्थरोंसे कूटी जाती है, वह चूरा जलसे बारंवार धोया जाता है, फिर वह छाना जाता है, उस रसमें गौका दूध मिलाया जाता है । सोमका रंग हरा रहता है, रसका भी वैसाही रंग होता है, उसमें दूधका श्वेतसा रंग आनेके लिये जितना मिलाया चाहिये उतना दूध मिलाया जाता है । तब देवताओंको अर्पण करके पीया जाता है।

छाना जानेके समय जब वह नीचेके कलशमें गिरता है तब उसका एक भान्तीका शब्द होता रहता है । इस समय कवियों-को काव्यकी स्फूर्ति होती है, सोमपर काव्य किये जाते हैं और गाये भी जाते हैं ।

भैंस जैसी पानीमें बारबार डुबकी लगाती है, वैसाही सोम बारबार जल ले लेकर धोया जाता है । सोमवल्लीमें तथा सोम-रसमें कुछ चमकसी होती होगी, अतः इसका चांदकी चांदनीके समान वर्णन किया जाता है, और चन्द्रमाके सभी नाम इसको दिये होते हैं ।

यह पेय बडाही उत्साह लानेवाला होगा और इसीलिये इससे कवियोंको नानाविध काव्य करनेके लिये प्रेरणा मिलती है । मन्त्रोंके अर्थमें काव्यकी माधुरीका रस पाठक ले सकते हैं।

यहां कण्व-मंत्रोंका यह विभाग
समाप्त होता है ।

प्रस्कण्वके अथर्ववेदमें मन्त्र

अथर्ववेदमें ऋषि प्रस्कण्वके ११ मंत्र है । इनके ७ सूक्त हैं । दो दो मंत्रोंके ४ सूक्त हैं और एक एक मंत्रके तीन सूक्त हैं । इस तरह ११ मंत्रोंके सात सूक्त हैं ।

२० वे काण्डमें (अथर्व २०।४७।१३-२१ के ९ मंत्र और २०।५१।१-२ ये २ मंत्र ऐसे कुल) ११ मंत्र प्रस्कण्वके हैं । पर ये ऋग्वेदकेही मंत्र है इसलिये इनका विचार पृथक् करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है ।

अब ऋग्वेदमें न आये प्रस्कण्वके मंत्रोंका अर्थ देते हैं-

(२२) आपः

(अथर्व. ७।३९) प्रस्कण्वः । आपः, सुपर्णः, वृषभः । त्रिष्टुप् ।

दिव्यं सुपर्णं पयसं बृहन्तमपां गर्भं वृषभमोषधीनाम् ।
अभीपतो वृष्ट्या तर्पयन्तमा नो गोष्ठे रयिष्ठां स्थापयाति १

(२३) सरस्वान्

(अथर्व. ७।४०) प्रस्कण्वः । सरस्वान् । २ भुरिक्, त्रिष्टुप् ।

यस्य व्रतं पशवो यन्ति सर्वे यस्य व्रत उपतिष्ठन्त आपः ।
यस्य व्रते पुष्टपतिर्निविष्टस्तं सरस्वन्तमवसे हवामहे १
आ प्रत्यञ्चं दाशुषे दाश्वंसं सरस्वन्तं पुष्टपतिं रयिष्ठाम् ।
रायस्पोषं श्रवस्युं वसाना इह हुवेम सदनं रयीणाम् २

(२४) सुपर्णः

(अथर्व. ७।४१) प्रस्कण्वः । श्येनः । १ जगती, २ त्रिष्टुप् ।

अति धन्वान्यत्यपस्ततर्द श्येनो नृचक्षा अवसानदर्शः ।
तरन्विश्वान्यवरा रजांसीन्द्रेण सख्या शिव आ जगम्यात् १

(सू. ७।३९।१)= (दिव्यं पयसं सुवर्णं) दिव्य जल धारण करनेवाले उत्तम वर्णवाले, (अपां बृहन्तं वृषभं) जलकी बडी वृष्टि करनेवाले, (ओषधीनां गर्भं) औषधियोंका गर्भ बढानेवाले, (अभीपतो वृष्ट्या तर्पयन्तं) सब प्रकारसे वृष्टिसे तृप्ति करनेवाले, मेघको देव (नः गोष्ठे आ स्थापयतु) हमारी गोशालाकी ओर स्थापन करे ।

अर्थात् हमारी गोशालाके चारों ओर अच्छी तरह वृष्टि हो जावे और गाइयोंको हरा घास पर्याप्त प्रमाणमें खानेको मिले।

(सू. ७।४०।१-२)= (सर्वे पशवः यस्य व्रतं यन्ति) सब पशु जिसके नियमानुसार चलते हैं, (यस्य व्रते आपः उपतिष्ठन्त) जिसके नियममें जल रहते हैं, (यस्य व्रते पुष्टपतिः निविष्टः) जिसके नियममें पोषणकर्ता रहता है, (तं सरस्वन्तं अवसे हवामहे) उस रसवान् देवकी हम अपनी सुरक्षाके लिये प्रार्थना करते हैं ॥ १ ॥

दाताको प्रत्यक्ष दान देनेवाले, पोषण और पालन करनेवाले, रसवान्, धनदाता, धनके पोषक, यशके दाता, धनका स्थान जैसे इस देवकी हम यहां रहकर प्रार्थना करते हैं ॥ २ ॥

यह भी मेघदेवकीही प्रार्थना है । मेघकेही आधारपर पशु जीवित रहते हैं, उसीकी वृष्टिसे नदियाँ बहती हैं, उसीसे धान्य फळफूल उत्पन्न होकर सबकी पुष्टि होता है, यह रसवान् देवही सबका पोषणकर्ता है।

(सू. ७।४१।१-२)= (अवसान-दर्शः, नृचक्षाः श्येनः) अन्तिम अवस्थाको जाननेवाला, मनुष्योंको जाननेवाला, श्येन पक्षी जैसा आकाशमें घूमनेवाला, (धन्वानि अति अपः ततर्द) रेतीले देशोंपर अति वृष्टि करता है, तथा (विश्वानि अवरा रजांसि) सब अवर भूमियोंपर भी वृष्टि होती है, इन्द्र नामक मित्रके साथ (शिवः) कल्याणरूप होकर (तरन्) सबको दुःखोंसे पार करता है और (आ जगम्यात्) सबको प्राप्त होता है ।।१।।

*

श्येनो नृचक्षा दिव्यः सुपर्णः सहस्रपाच्छतयोनिर्वयोधाः ।
स नो नि यच्छाद्वसु यत्पराभृतमस्माकमस्तु पितृषु स्वधावत् २

(२५) पापमोचनम्

(अथर्व. ७।४२) प्रस्कण्वः । सोमारुद्रौ । त्रिष्टुप् ।

सोमारुद्रा वि वृहतं विषूचीममीवा या नो गयमाविवेश ।
बाधेथां दूरं निर्ऋतिं पराचैः कृतं चिदेनः प्र मुमुक्तमस्मत् १
सोमारुद्रा युवमेतान्यस्मद्विश्वा तनूषु भेषजानि धत्तम् ।
अव स्यतं मुञ्चतं यन्नो असत्तनूषु बद्धं कृतमेनो अस्मत् २

(२६) वाक्

(अथर्व. ७।४३) प्रस्कण्वः । वाक् । त्रिष्टुप् ।

शिवास्त एका अशिवास्त एकाः सर्वा बिभर्षि सुमनस्यमानः ।
तिस्रो वाचो निहिता अन्तरस्मिन्तासामेका वि पपातानु घोषम् १

(नृचक्षाः दिव्यः सुपर्णः) मनुष्योंका निरीक्षक, दिव्य सुपर्ण जैसा (सहस्रपात् शतयोनिः) सहस्रों किरणोंसे युक्त और सैकडों प्रकारकी उत्पत्तियोंकी शक्तिसे संपन्न, (वयोधाः श्येनः) अन्न देनेवाला श्येन जैसा आकाशमें संचार करनेवाला, यह मेघ देव श्रेष्ठ धन हमें देवे । हमारे पितरोंको भी यही अन्न देता है ।।२।।

यह सूक्त भी विशेष कर मेघकाही वर्णन करता है । मेघ वृष्टि करके अन्न उत्पन्न करता है, उस अन्नसे सबका पोषण होता है । पिता माता और पुत्र पौत्रोंका भी वही पोषण करता है । यही रेतीली भूमिपर, उर्वरा तथा हीन भूमिपर वृष्टि करता है और सबका पोषण करता है ।

(सू. ७।४२।१-२)= (या अमीवा) जो रोग (नः गयं आ विवेश) हमारे घरोंमें प्रविष्ट हुआ है, उस (विषूचीं वि वृहतं) विषूचिका रोगको दूर करो, (निर्ऋतिं पराचैः दूरं बाधेथां) दुर्गतिको नीचेसे दूर कर दो । (कृतं चित् एनः) हमारा किया पाप (अस्मत् मुमुक्तं) हमसे छुडाओ ॥ १ ॥

(युवं अस्मत् तनूषु) तुम दोनों हमारे शरीरोंमें (एतानि विश्वा भेषजा धत्तं) ये सब औषध धारण करो । (यः नः तनूषु बद्धः एनः असत्) जो हमारे शरीरोंमें बंधा पाप है उससे हमारा (अव स्यतं) बचाव करो । हमें उस पापसे छुडाओ ।। २ ॥

आमसे रोग

यहां ' अमी-वा ' पद है, आम अपचित अन्न है, इससे रोग होते हैं । रोगका यह प्रमुख कारण है । ' रुद्र और सोम ' ये दो देवता इस सूक्तके है । ' सोम ' औषधियोंका प्रतीक है और रुद्र प्राणशक्ति बढानेवाले वैद्यका सूचक है । सब प्रकारकी शुद्धि करनेद्वारा रोग दूर करनेकी सूचना यहां है । शरीरकी दुर्गति न हो, शरीरमें दोष न हों और शरीर नीरोग रहे । इस कार्यके लिये अनेक औषधियोंका प्रयोग करना चाहिये । नीरोगिताके संपादन करनेमें यह सूक्त बडा उपयोगी है । हरएक पदका पाठक विशेष विचार करें और नीरोगिता प्राप्त करनेका बोध लें ।

(सूक्त ७।४३)— एक प्रकारके शब्द (शिवाः) कल्याणकारक होते हैं, दूसरे प्रकारके शब्द (अशिवाः) अशुभ होते हैं। (सु-मनस्यमानः) उत्तम शुभ विचारवाला उन सब शब्दोंको धारण करता है । इस पुरुषमें (तिस्रः वाचः) तीन वाणियां, परा पश्यन्ती, मध्यमा ये पुरुषके अन्दर गुप्त रहीं है । उनमेंसे एक वाणी (घोषं अनु वि पपात) घोषणा रूपको धारण करती है।

यह मंत्र ' वाणी ' के विषयमें है । परा, पश्यन्ती, मध्यमा ये वाणियां गुप्त हैं । चौथी वैखरी भाषारूपसे प्रकट बोली है । मनुष्यको जानना चाहिये कि ये शब्द शिव और अशिव रूपमें बोले जाते हैं । अशुभ रूप शब्द उच्चारण करना योग्य नहीं है, जो शुभ शब्द हैं उनकाही प्रयोग मानवोंको करना चाहिये ।

सब प्राणियोंमें वक्तृत्व शक्ति मनुष्यमेंही है । किसी दूसरे प्राणीमें यह शक्ति नहीं है। आत्माकीही यह शक्ति वाणीद्वारा प्रकट होती है । वाणीमें आत्माकी शक्ति है । यदि वाणी व्यर्थ उच्चारी जायगी तो आत्माकी शक्ति व्यर्थ खर्च होगी । इसलिये कहा है कि अशिव शब्दोंका बोलना उचित नहीं है, अनर्थकारी भाषण करना योग्य नहीं है । यह मंत्र बडाही मनन करनेयोग्य है ।

(२७) इन्द्राविष्णू

(अथर्व. ७।४४) प्रस्कण्वः । इन्द्र, विष्णुः । भुरिक् त्रिष्टुप् ।

उभा जिग्यथुर्न परा जयेथे न परा जिग्ये कतरश्चनैनयोः ।
इन्द्रश्च विष्णो यदपस्पृधेथां त्रेधा सहस्रं वि तदैरयेथाम् ॥ १

(२८) ईर्ष्यानिवारणम्

(अथर्व. ७।४५) प्रस्कण्वः, २ अथर्वा । ईर्ष्यापनयनं, भेषजम् । अनुष्टुप् ।

जनाद्विश्वजनीनात्सिन्धुतस्पर्याभृतम् । दूरात्त्वा मन्य उद्भृतमीर्ष्याया नाम भेषजम् ॥ १
अग्नेरिवास्य दहतो दावस्य दहतः पृथक् । एतामेतस्येर्ष्यामुद्नाग्निमिव शमय ॥ २

(सू. ७।४४।१)— दोनों इन्द्र और विष्णु (वि जिग्यथुः) विजय करते हैं । वे कभी (न परा जयेथे) पराजित नहीं होते । इनमेंसे कोई भी पराजित नहीं होता। हे इन्द्र और विष्णो! जब तुम दोनों (अपस्पृधेथां) शत्रुके साथ स्पर्धा करते हैं तब (तत् सहस्रं) वह शत्रुका सैन्य (त्रेधा वि ऐरयेथां) तीन प्रकारसे भगा देते हैं ।। १ ।।

यहां कहा है कि अपनी तैयारी ऐसी करो कि सदा शत्रुका पराभव और अपना जय होता रहे । शत्रुका बल अनेक विभागोंमें विभक्त होकर तितरबितर होकर भाग जावे ।

(सू. ७।४५।१-२)= (विश्वजनीनात् जनात्) सब जनताके हित करनेवाले जनोंसे (सिन्धुतः परि आभृतं) सिन्धुके भी पारसे यह (ईर्ष्यायाः नाम भेषजं) ईर्ष्याका प्रसिद्ध औषध है, दूरसे तुझे लाया है यह मैं जानता हूं ॥ १॥

हे औषधे ! तू इस ईर्ष्याकी अग्निको, इस दावानलको अर्थात् (एतस्य एतां ईर्ष्या) इसके इस ईर्ष्याकी अग्निको (शमय) शान्त कर ॥ २ ॥

ईर्ष्या, स्पर्धा, अर्थात् बुरी स्पर्धाको शान्त करना चाहिये । इस सूक्तमें औषधिका नाम नहीं है । यहां कौनसी औषधि कही है इसकी खोज करनी चाहिये ।

यहां प्रस्कण्वके अथर्ववेदके मंत्र समाप्त हैं ।

कण्व दर्शनका द्वितीय विभाग समाप्त ।

कण्व ऋषिके दर्शनकी

विषय-सूची



पाकिस्तानकी स्कीम

(लेखक— श्री० गणपतराव गोरे, कोल्हापूर)

अनुवादक तथा उद्धरण-कर्ताकी भूमिका।

१० मई १९४५ को श्री पं. श्रीपाद दामोदर सातवळेकर-जीने, मुझे एक हस्तलिखित-उर्दू-पुस्तकके पृष्ठ पढकर हिंदी अनुवाद करनेको दिए।

'पंजाब मुस्लिम स्टूडन्ट्स फिडरेशन' ने हिजरी सन १३५८में [७ डिसेंबर १९४५ को हि. १३६५ आरंभ होगा] 'खिलाफत-पाकिस्तान स्कीम्'का विधान LION PRESS LAHOREसे छपवाकर, 'केन्द्रीय कार्यालय पंजाब मुस्लिम स्टूडन्ट्स फिडरेशन' पैसा अखबार स्ट्रीट लाहोरसे प्रकाशित कराया है, जिसका मूल्य ॥) रखा गया है। उक्त हस्तलिखित पृष्ठ इसी विधानकी नकल हैं।

विधान [Sheme]में बताया गया है कि उक्त स्कीम् १६ जुलै १९३९को Civil & Military Gazette, Lahore, तथा १८ जुलै १९३९को Times of India Bombay तथा अन्य वर्तमान पत्रोंमें प्रकाशित हो चुकी है। पश्चात् यह स्कीम उर्दू भाषामें पुस्तकाकारमें छपवा कर 'मुस्लिम लीग'को विचारार्थ भेजी गई है।

आंग्ल भाषाके उक्त दो दैनिकोंमें प्रकाशित स्कीम् अक्षरशः वही थी, जो कि मुस्लिम लीगके विचारार्थ अब छपवाकर भेजी गई है, अथवा उसका रूप कुछ अन्यही था, यह हम कह नहीं सकते। जिन्हें उक्त अंक उपलब्ध हों वे तुलना कर देखें। मुस्लिम लीगने इसपर कुछ विचार किया है अथवा नहीं, यहभी हम नहीं जानते। परन्तु आद्योपांत पढनेके पश्चात हम तो केवल इतनाही कह सकते हैं, कि 'यह स्कीम् सभी मुस्लिमेतरों और विशेषकर हिन्दुओंके लिए तो अत्यंत घातक और स्वयं ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध भी विद्रोहसूचक है!!! यही नहीं! हमारा मत तो ऐसा है, कि प्रकाशक अपनेको मुसलमान कहलाते हुए भी इस्लाम तथा कुर्आनसे कोसों दूर हैं!

इसी लिए उन्हें इस्लामके सिद्धान्त समझानेके लिए हमने अनेकों प्रमाण कुर्आन तथा हदीसके उपस्थित किए हैं और स्थानाभावके कारण कईयोंके केवल पतेही बताए हैं कि जिज्ञासु सन्मार्ग प्राप्त कर सकें।

खिलाफत-पाकिस्तान स्कीम्की विशेषताएं।

१. खि. पा. प्राप्तिके लिए गुप्त तथा कानूनविरुद्ध साधनोंसे जिहाद् अथवा युद्ध तथा क्रान्ति करना।

२. मुसलमानोंकी मुक्ति मजहब [संप्रदाय]के आधार-पर अलग रहनेमें है।

३. कोई व्यक्ति मुसलमान हुए बिना पूर्ण मनुष्य नहीं बन सकता, और न उसमें कुलीनता आ सकती है।

४. सभी मुस्लिमेतर पशुसमान हैं।

५. अज्ञानी तथा निकृष्ट मुसलमान भी वर्धा और लंडनके सर्वोत्तम मुस्लिमेतरोंसे उत्कृष्ट है।

६. खि पा. में साधारण प्रश्न-कर्ताको भी लडकर उत्तर दिया जायगा।

७. मुसलमानके लाभके लिए मुस्लिमेतरके लाभको नष्ट भ्रष्ट करना, अन्याय नहीं अपितु पूर्ण उपकार है।

८. खि. पा. की प्राप्तिके लिए मुस्लिमेतरोंकी शक्तियोंका मलियामेट तथा अपनी शक्तियोंका उत्थान करना चाहिये।

९. हिंदुस्थान खि. पाकिस्तानियोंके खुदाकी भूमि है, और वे उसके अधिकारी हैं।

१०. ब्रिटिश सरकार- [हिन्दुस्तानपर अधिकार जमानेके कारण] खुदाकी विद्रोही है।

११. मुसलमान पूर्ण-पुरुष है, अतः खि० पाकिस्तानमें वोट [vote = मत] देनेका अधिकार केवल उसीको रहेगा।

१२. मुसलमानका प्रत्येक कर्म उसका कर्तव्य है।

१३. सारी पृथ्वी अल्लाहकी होनेके कारण, अल्लाहके खलीफाकी समझी जायगी [मुस्लिमेतरोंसे पृथ्वी छीन ली जायगी !]

१४. मुस्लिमेतर हमारे पथ–भ्रष्ट छोटे भाई हैं [ऊपर उन्हें पशु कहा था ! !]

१५. युद्धसेवा न देनेवाले मुस्लिमेतर ' जिजिया ' देंगे। ' जिजिया ' इन्कमटॅक्ष है ! ! !

१६. मुसलमान कांग्रेसी आदि मुस्लिमेतरोंको तुच्छ समझकर उनसे शत्रुता करें और उन्हें सतावें।

१७. म० गांधीजी खिलाफतकी हलचलको नष्ट करके मुसलमानोंको हिन्दू बना रहे हैं ! ! !

हमने ' उक्त उर्दू पुस्तकके केवल आवश्यक भागोंका ' हिन्दी अनुवादही नहीं किया अपितु उक्त १७ धाराओंपर अपनी अल्प बुद्ध्यनुसार पाद–टीपोंमें यथाशक्ति प्रकाश भी डाला है। शब्दोंके अर्थ आदि भी इस [ ] प्रकारके कँसोंमें हमने लिखे हैं। अर्थात् इन कंसों तथा पादटीपोंके समस्त लेख अनुवादकके हैं, ऐसा समझना चाहिए।

पंजाब मुस्लिम स्टूडन्ट्स फिडरेशन द्वारा प्रकाशित खिलाफत-पाकिस्तान स्कीमकी भूमिकासे उद्धरण

...यद्यपि मुस्लिम लीग इस समय हिन्दी मुसलमानों की सबसे बडी और अद्वितीय प्रतिनिधि है, तथापि वह भी अबतक उन तत्वों तथा मन्तव्योंसे पूर्ण स्वतन्त्र नहीं हो सकी जो हमारे पूर्वकी गलतियों और वर्तमानकी अपकीर्तिका कारण बने हुए हैं। वर्तमान गिरावट तथा भविष्यके भयसे बचनेके लिए मुस्लिम लीगकी कार्य-प्रणालि अभीतक प्रकट शक्तियोंपर विश्वास तथा यूरोपिअन लोकराजके तत्वोंपर कानूनी यत्न करना रही है। यदि कभी प्रत्यक्ष आचरणकी इच्छा कीभी तो अधिकसे अधिक गांधी तत्वज्ञानके अनुसार अहिन्सा और सत्याग्रह करके बडी सभा बुलाकर सन्तुष्ट रह गई।

इसके विपरीत हमारा उद्देश इन विचारोंसे ' सर्वथा विद्रोह करने पर आश्रित है। हमारी कार्य प्रणाली है टकर लेना और क्रांति करना, न कि प्रकट और कानूनी [पथ] (१)।' हम समझते हैं कि स्वतन्त्रता, अधिकारोंकी रक्षा तथा जातिकी प्रतिष्ठा कोई ऐसा दान नहीं जो दूसरोंके द्वारोंपर चिल्लानेसे मिल सके। न यह किसीके बापदादाकी जायदाद (वारसा) है, जोकि कानूनी अभियोग लडनेसे मिल सके। यह तो रास्तेकी बहिया है। जिस प्रकार पानी पल्लालमें स्वयमेव एकत्र हो जाता है, इसी प्रकार ' स्वतन्त्रता तथा राज्य प्राप्त करनेकी योग्य जातियां भी बिना किसीको पूछे ताछे, बिना किसीको लाञ्छन लगाए, बिना किसीसे अधिकार सुरक्षित कराए वा किसीसे दयाकी याचना किए स्वयमेव स्वतन्त्र होकर राज्य प्राप्त कर लेती हैं।

मुस्लिम लीग जैसी संस्था जिसने प्रकटतया अपना कायिद [सेनापति] स्थापित कर दिया है, उसका प्रथम कर्तव्य अन्तरीय पवित्रता, सर्व साधारणका संगठन, तथा ' जिहाद करनेवालों-का एकत्रीकरण ' होना चाहिए था। परन्तु इसके विपरीत वहांके विज्ञानियोंने अभीतक कोई ऐसा पथ नहीं पकडा जिससे उनके मानस प्रवृत्तियों तथा शारीरीक सत्वका ज्ञान साधारण मुसलमानोंको हो सके, अथवा जिससे अविज्ञ और अपढ जनता भी उनके पथ पर चलनेकी आवश्यकताको समझ सके।......

... अन्तिम दो बातोंने हमें अपनी स्कीम मुस्लिम लीगके सामने रखने पर उभारा है। ...... मुस्लिम लीग हिन्दी मुसलमानोंकी सबसे बडी तथा एकही प्रतिनिधि संस्था है। उससे ऐसा व्यवहार करना कि उसे अपने आमंत्रणसे भी वाञ्छित रखा जाए, यह कदापि योग्य नहीं। दूसरा यह कि हमारी फीडरेशनके कुछ युवकोंने अपनी आयु खिलाफतकी भावनाको अर्पण कर दी है। विद्यासमाप्तिके पश्चात् उन्होंनें कर्तव्यके रणमें आना है। और यदि मुस्लिम लीगपर उस समय भी उन्हीं लोगोंका राज्य रहा, जो ' सर्व साधारणके क्रान्तिकारक भावनाओंको भडकाने तथा उनके धार्मिक जोशको गरमानेसे घबराते हैं, तो कदाचित हमें अपने

(१) अवतरण चिन्ह हमारे हैं। अर्थात् खिलाफत–पाकिस्तानी स्कीमका उद्देश है, गुप्त रीतिसे युद्ध और क्रान्ति करके खि० पाकिस्तान प्राप्त करना। प्रकट रीतिसे नैतिक साधनों द्वारा खि० पाकिस्तान प्राप्त करना इसका उद्देश्य नहीं ! ! !

हार्दिक भावोंको दबाकर उनसे टक्कर लेना भी स्वीकार करना पड़े। ......

पृ० १३ पर लिखा है:- 'जातियोंकी आयु और प्रतिष्ठा निर्बंधों अनुष्ठानों तथा सन्धियोंपर निर्भर नहीं रहती, अपितु उनकी ईमानी, सदाचरण तथा यौद्धिक बलपर अवलंबन रहती है।......ईमानी शक्ति निर्बंधों और दस्तूरों [कायदों] को बदल सकती है, परंतु राज्यके कायदे कानून और दस्तूर ईमानको ठीक नहीं कर सकते। मुसलमानोंकी गिरावट तभीसे आरंभ हुई है, जबसे उनका ईमान कमजोर हो गया है। और जब तक ऐसे लोग उपस्थित हैं जिनका विश्वास हमसे अधिक दृढ है, तब तक हमें उनके सामने असफलही रहना पड़ेगा।(१)

अतः दूसरी सभी स्कीमोंके विपरीत हमारी स्कीमका प्राथमिक उद्देश पृथिवीका बंटवारा तथा कानूनी-बचाव नहीं। अपितु-हमारी स्कीमका प्राथमिक उद्देश वह ईमानी शक्ति है जो पृथिवीका बंटवारा, कानूनी-बचाव और मेहरबानिया (Concessions) और इनसे भी बडे चढे पदार्थ अर्पण करा सकती है।'(२)

पृ० १४ पर है—

'हमारी स्कीमसे बाहर रह जानेवाले मुसलमानोंकी रक्षा कैसे होगी।

इस्लामी मन्तव्यके अनुसार पंजाबी, बंगाली, चीनी, तथा अफरीकाके मुसलमानमें कोई भेद नहीं। फिर हम कृतिमें हिन्दुस्थानके मुसलमानकाही विचार क्यों करते हैं? केवल इस कारण कि वह हमारे अधिक समीप है; समीपके मुसलमानोंकी रक्षा करना अधिक सुगम भी है।...यदि यह नियम हिंदुस्थानपर लगाया जाय तो सर्वप्रथम हमें उन प्रान्तोंकी व्यवस्था करनी चाहिए जहां हमारी संख्या अधिक है और जहांकी अधिक भूमि भी हमारे ही हाथमें है। यदि हमने यहां पांव जमा लिये(३) तो फिर हमारे शेष भाईबंदोंसे भी सांप्रत 'लावारस मुसलमान' कासा व्यवहार न किया जायगा, अपितु उनसे वही व्यवहार होगा, जो संसारकी अन्य शक्तिशाली राज्योंकी प्रजाके साथ किया जाता है।...'

स्कीम

'हमारी स्कीमकी तिथि':- इस प्रकार देखा जाय तो मुसलमानोंके पृथक अस्तित्वका विचार इस्लामकी घुट्टीमें पडा है' यथा 'दारुल्-इस्लाम' (४) तथा 'दारुल्-कुफ्र' (५) 'दारुल्-सलाम' (६) तथा 'दारुल्- हरब (७) ये शब्द इस्लामके इतिहासके उस समयके स्मारक शब्द हैं, जब न हिंदुस्थानमें मुसलमानोंकी कोई पीडित-अल्पसंख्या थी और न ही मुसलमानोंको दूसरी जातियोंसे किसी प्रकारके भयकी प्रतीति हुआ करती थी। इसप्रकार इस मतके अनुसार तो हमारी स्कीम तेरह सौ वर्षोंकी पुरानी है, परन्तु यूं भी हमारे फीडरेशनके जिस मुखियाने यह

(१) यहां मुस्लिमोंमें ईमानकी अल्पता, तथा मुस्लिमेतरोंमें ईमानकी विपुलताको खुले दिलसे स्वीकार किया है, अर्थात् मुसलमानोंसे तुलना करते हुए मुस्लिमेतरोंकी धार्मिक उत्कृष्टताको मान्य किया है। परन्तु आगे चलकर अपनी इस प्रतिज्ञाका खण्डन करते हुए स्कीमवालोंने मुस्लिमेतरोंको पशुओंसे तुलना देते हुए उनके साथ पशुओंकासा व्यवहार करना न्यायोचित समझा है!!!

(२) अर्थात् मुस्लिमेतरोंसे जिहाद = युद्ध करके सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है!

(३) प्रान्तोंमें बहु संख्य होते हुए और प्रान्तोंके भूमिके अधिक भागके स्वामी होते हुए भी उन प्रान्तोंमें अबतक मुसलमानोंके पांव नहीं जम सके, इसका अर्थ यही है कि उन प्रान्तोंसे ब्रिटिश राज्य निकल कर खिलाफत राज्य अबतक कायम नहीं हुआ! इसी भावको अगली पंक्तियोंमें खिलाफत राज्यकी प्रजाको 'शक्तिशाली राज्योंकी प्रजा'से तुलना देकर बोला है।

(४) इस्लामका घर।

(५) काफिरोंका घर।

(६) सलामती वा सुरक्षितताका स्थान।

(७) वह स्थान जहां अल्लाहकी उपासना करना मना हो, अर्थात् 'काफिरोंका देश'।

स्कीम तैयार की है, उसे सन १९१८-१९में यह अनुभव आया था कि ' हमारी मुक्तिका एकमेव मार्ग, मजहब [संप्रदाय = Religion]के आधार पर अपनी पृथकता सुरक्षित रखनेमें ' है। ... (१) जून, १९३९ को अपने इस मुखियाके परामर्शसे हमने ' खिलाफत-पाकिस्तान स्टूडन्ट्स फिडरेशन'का उद्दिष्ट बना लिया। १६ जुलै १९३९ को लाहोरके [दैनिक] Civil and Military Gazette ने इसे प्रकाशित किया। १८ जुलै १९३९ को यह स्कीम Times of India तथा अन्य वर्तमानपत्रोंमें छपी। अब प्रथम बार इस रूपान्तरमें यह स्कीम पंजाब मुस्लिम स्टूडन्ट्स फिडरेशनकी ओरसे इस पुस्तिकाके आकारमें मुस्लिम लीगकी Constitution Committee के सामने उपस्थित की जा रही है।

' हमारी स्कीममें न्यायका विचार- ... हमारा विश्वास है कि इस्लाम पर ईमान लाए बिना न कोई व्यक्ति पूर्ण मनुष्य बन सकता है, और न ही उसमें पूर्ण कुलीनता आ सकती है। मुस्लिमेतर तथा मुस्लिमोंकी तुलना वही है जो मनुष्य तथा ऐसे पशुओंकी है जिनकी आकृति, चित्र और गुण मनुष्यसे मिलते जुलते हैं ' (२) कदाचित् बन्दर और मनुष्यका बहुतांशोंमें साम्य है......

परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि बंदर इस अवस्थाको प्राप्त किये बिनाही मनुष्य और अशरफुल् मखलूकात [सृष्टोंमें सर्वोत्तम] कहलाने लगें (३)। ' इसी प्रकार कुछेक पढेलिखों और बाहरी रूपमें सुधरे हुए मुस्लिमेतरोंके ईमानमें थोडीही कमी होती है, परन्तु मुसलमान हुए बिना वह मुकम्मल इन्सान [पूर्ण मनुष्य] कदापि कहला नहीं सकता, और नहीं उसमें पूरी शराफत [कुलीनता] आसकती है(४)।' अब रही यह बात कि कई मुस्लिमेतर

---

(१) अवतरण चिन्ह हमारे।

(२) अवतरण चिन्ह हमारे। राज्य तथा भूमिकी प्राप्तिकी लालसा रखनेवाले मुसलमान इस्लाम तथा कुर्आनसे कितने विमुख हो चुके हैं यह देखकर आश्चर्य होता है! इन्होंने बाइबल तथा कुर्आनकी इस शिक्षाको ठुकरा दिया है कि आदम तथा हव्वासे उत्पन्न होनेके कारण संसारके सभी मनुष्य एक दूसरेके भाई हैं!! कुर्आन ४९।१३ की आज्ञा है:-

" ऐ मनुष्यो! हमने तुम (सब)को एक पुरुष (आदम) व एक स्त्री (हव्वा)से निर्माण किया और (फिर) तुम्हारी जातियां और कुल भी ठहराए, इसलिए कि तुम एक दूसरेको पहिचान सको।......"

इसपर श्री मौ. मुहम्मदअली M. A., LL. B., ने आंग्लभाषाके कुर्आनमें जो टीप सं. २३३१ लिखी है, वह इस प्रकार है:-

' The principle of the brotherhood of man laid down here is on the broadest basis. The address here is not to believers, as in the two previous verses, but to men in general, who are told that they are all, as it were, members of one family, and their divisions into nations tribes and families, should not lead to estrangement from, but to a better knowledge of each other.

कुर्आनकी इस स्पष्ट आज्ञाके विपरीत मुस्लिमेतरोंको पशु समझना, केवल ऐसों नामधारी मुसलमानोंसेही संभव है, जो कुर्आन और इस्लामके नामसे अनभिज्ञ होते हुए भी सदैव मुसलमान कहलानेके दावेदार बने रहते हैं! क्या मुस्लिमेतरोंको पशु कहना मुस्लिमेतरोंकी भावनाओंको दुखाना तथा मुसलमानों तथा मुस्लिमेतरोंमें वैमनस्य उत्पन्न करना नहीं है? परंतु यह प्रश्न पूछना सरकारका काम है।

(३) इस बातमें तो सभी हिन्दु आपसे सम्मत हैं कि मनुष्य-योनिको प्राप्त किए बिना कोई बन्दर मनुष्य नहीं कहला सकता। स्वयं कुर्आनके अनुसार भी जब मनुष्यसे बंदर बन सकता है (देखो २।६५) तो बंदरसे मनुष्य बनना क्यों असम्भव है?

(४) अवतरण चिन्ह हमारे। इसके विपरीत कुर्आनका सिद्धान्त है कि संसारका जो भी मनुष्य परमात्मासे डरकर अपने कर्तव्य करता है वही अल्लाहके समीप सबसे अधिक मान-प्रतिष्ठा पाता है!!! ऊपर हमने ४९।१३के अन्तिम शब्द छोड दिये थे। इनका मौ० मु० अलीकृत आंग्ल अनुवाद ऐसा है:-

कई बातोंमें कई मुस्लिमोंसे उत्कृष्टता रखते हैं, अथवा कईमें मुस्लिमेतर मुस्लिमोंकी तुलनासे अधिक सांसारिक पदार्थों तथा शक्तियोंके स्वामी हैं, तो उसका उदाहरण ऐसा है, कि बंदर दीवारपर चढ सकता है, परन्तु मनुष्य प्रायः ऐसा नहीं कर सकता। तो भी यह विचार किसीको [आजतक] उत्पन्न नहीं हुआ कि केवल दीवार फांदनेके कारण बंदरको मनुष्यसे अच्छा समझा जाय। (१) ... रही शक्तिकी बात, तो हाथी मनुष्यसे अधिक बलवान होनेपर भी पशुही कहलाता है। फिर यदि इन पशुओंके कई बातोंमे उत्कृष्ट होनेपर भी मनुष्यका केवल मनुष्य होना [मनुष्यत्व] ही उसे उनसे उत्तम सिद्ध करनेकी पर्याप्त युक्ति है, तो मुसलमानके लिए केवल उसका इस्लाम उसे समष्टि रूपसे बेहतर सिद्ध करनेकी पर्याप्त युक्ति है (२)। ... ' इस प्रकार एक निकम्मा मुसलमान, एक अज्ञानी तथा मौकूफ [Dismissed] मुसलमान, यहांतक कि हिन्दुस्थानका आजका निकृष्ट मुसलमान भी हमारी दृष्टियोंमें वरधा और लंडनके सर्वोत्तम मुस्लिमेतरोंसे उत्कृष्ट है(३)।' क्योंकि मुसलमानकी जातिको केवल शिक्षा, पालन पोषण, तथा व्यवस्थाकी आवश्यकता है, परंतु 'मुस्लिमेतर अभी पशुत्वके उस दरजेमें हैं जहां मनुष्यत्वकी पदवी प्राप्त करनेके लिए कबूल-इस्लामकी कमी शेष होती है (४)।'......

' ...... Surely the most honorable of you with Allah is the one among you most careful (of his duty); Surely Allah is Knowing, Aware. '

इसपर टीप २३३१ में लिखा हैः-

' Superiority of one over another in this vast brotherhood does not depend on nationality, wealth or rank, but on the careful observance of duty-moral greatness.'

(१) जब खिलाफत-पाकिस्तानरूपी मतान्धता आपकी आंखोंसे दूर होगी, तब आपको कुर्आन तथा मुस्लिमेतरोंके समान संसारके सभी मनुष्योंमें समता दीख पडेगी। और तभी आपको अपना अज्ञान भी दिखाई देगा कि मुस्लिमकी तुलना मुस्लिमेतरसे करते करते मुस्लिमेतरकी तुलना बंदरसे करना कितना युक्तियुक्त था। तुलना सदा सजातीय पदार्थोंकी आपसमें हुआ करती है !

(२) यहां भी आपने विजातीय हाथी तथा मनुष्यकी तुलनाको सजातीय मुस्लिम तथा मुस्लिमेतरों अथवा मनुष्यों-की तुलनापर घटाया है ! अज्ञानकी पराकाष्ठा है ! !

(३) अवतरण चिन्ह हमारे। यहां वरधाके मुस्लिमेतरसे म. गांधी, और 'लंडनके सर्वोत्तमसे चक्रवर्ती महाराज जार्ज६'से अभिप्राय है ! मरहूम मौ. मुहम्मद अलीने जब लोकमान्य तिलककी अर्थीको कन्धा लगाया, तो मुसलमानोंने शोर मचाया कि हाय ! मुहम्मदअली गांधीजीका शिष्य तो पहलेही था, अब पूरा काफिर बन गया ! तब मुसलमानोंको शान्त करनेके लिए स्वर्गीय मुहम्मदअलीजीने भी ऐसा कह कर महात्मा गांधीका अपमान किया था कि ' मैं एक फासिक [पापी] और फाजिर [स्त्रैण = Fornicator] मुसलमानको महात्मा गांधीसे बदर्जहा [कई अंशोंमें] अच्छा समझता हूं।' इसी अभिप्रायको अन्य शब्दोंमें इस स्कीममें व्यक्त किया गया है। क्या मुस्लिमलीगसे समझौता करने-वाले कांग्रेसी हिन्दू इस मुस्लिम मनोवृत्तिसे कुछ बोध लेंगे ?

(४) अवतरण चिन्ह हमारे। यह जो वारंवार मुस्लिमेतरोंको पशुजातिमें गिना जा रहा उसका कारण क्या यह है कि मुस्लिम साहित्यमें 'जाति' वा 'जात'का लक्षण नहीं समझाया गया? यदि ऐसा हो तो आर्य शास्त्रोंसे समझा लीजिएः- ' समानप्रसवात्मिका जातिः ' ॥ न्याय सूत्र २।२।६७ ॥

भावार्थः- ' एकही प्रकारके पुरुष तथा स्त्रीके संयोगसे जो सन्तान उत्पन्न होती है, वह उसी प्रकारकी जाति कहलाती है। तदनुसार मनुष्य पुरुष-स्त्रीसे उत्पन्न बालक मनुष्य जातिका, और बंदर-बंदरीसे उत्पन्न बच्चा ' बंदर जाति 'का है। इतनी बात यदि खि. पाकिस्तानियोंकी समझमें आजाय, तो उन्हें प्रत्यक्ष होगा कि ' मनुष्यत्वकी पदवी

कोई प्रश्न करे कि नेकी क्यों अच्छी है और बुराई क्यों बुरी, तो इसका उत्तर तर्कसे नहीं अपितु कृतिसे दिया जायगा। इसी प्रकार मुसलमानकी काफिरसे उत्कृष्टता किसी लेजिस्लेटिव् हाल वा किसी गोल-मेज (Round Table) पर सिद्ध नहीं की जा सकती, अपितु इस प्रकारके शास्त्रार्थ पानीपतके विस्तृत मैदानमें पहिले भी कई बार हो चुके हैं और अब भी अन्तिम रूपमें किसी ऐसीही जगह समाप्त होंगे (१)।

हमारे उपर्युक्त मन्तव्यको पढ लेनेके पश्चात, यह शीघ्रही समझा जायगा कि जिस प्रकार अशरफुल्-मखलूकात [मनुष्य]की सेवा तथा अभ्युत्थानके लिये समस्त पशुओं तथा वनस्पतियोंकी बली देनेका विधान है, 'इसी प्रकार इस्लामी लाभके लिए मुस्लिमेतरोंको हर प्रकार कार्यमें लाना पूर्ण न्याययुक्त है (२)।' जिस प्रकार पशुओंको काममें लाते हुए बेरहमी [निर्दयता] करना मना है, इसी प्रकार मुस्लिमेतरोंको व्यर्थही दुःख पहुंचाना कदापि प्रशंसनीय नहीं। परन्तु 'जहां हमारे और उनके लाभमें टक्कर हो, वहां इस्लामी लाभोंकी रक्षाके लिए इनके लाभोंको नष्ट भ्रष्ट करना किसी प्रकार भी न्यायसे विसंगत नहीं। मुरगीका गला घोंटना मना है। परन्तु यदि मनुष्यको भूख लगी हो तो मुरगीकी आयुका विचार उसे काट डालनेमें मना नहीं कर सकता।' (३)

प्राप्त करनेके लिए मनुष्य पिता-माताके द्वारा उत्पन्न होनाही पर्याप्त है, कबूल-इस्लामकी कोई आवश्यकता नहीं!!! आपकी स्थूल बुद्धिमें यह बात न समाए, परन्तु आज मुस्लिमेतर संसारके १॥ अरब प्राणी इसी नीतिसे एक दूसरेको मनुष्यत्वकी पदवी दे रहे हैं!!!

१ हिन्दुओं, इसाइयों, और सिक्खों! सावधान! लि. पाकिस्तानमें आप लोगोंसे कैसा व्यवहार किया जायगा, इसकी सूचना मिल रही है। 'नेकी क्यों अच्छी और बुराई क्यों बुरी' यदि यह सीधा सादा प्रश्न भी आपने पूछा तो मुसलमान पानीपतके मैदानमें आपसे लडनेको कमर कस लेंगे!! लि. पाकिस्तान राज्यमें इस सीधे साधे प्रश्नका विचार भी लेजिस्लेटिव् असेम्बली, न्यायालय, अथवा गोलमेज कान्फरन्समें नहीं हुआ करेगा! हो भी क्यों? मुसलमान हैं मनुष्य और मुस्लिमेतर सब पशु! मनुष्य और पशुओंका क्या मेल? धन्य है वैदिक धर्म, जिसने 'यः पश्यति स पशुः' अर्थात् 'जो भी देख सकता है, सो पशु है,' ऐसा कहकर प्राणिमात्रके साथ मनुष्योंका संबंध जोड दिया!!

२ मुस्लिमेतरोंकी तुलना यहां भी पशुओं तथा करेला, भिंडी आदि भाजियोंसे की जा रही है। क्या कांग्रेसी हिन्दू इससे बोध लेंगे?

३ मुरगीपर निर्दयता करना वा उसका गला घोंटना मना, परंतु उसके अण्डे बच्चे खाते रहना, और क्षुधा लगे तो स्वयं मुरगीको भी काट खाना मुसलमानके लिए जिस प्रकार पूर्ण न्याययुक्त है, इसी प्रकार हिन्दू आदि मुस्लिमेतरोंका भी सर्वस्व-सन्तान, धन, संपत्ति, भूमि आदि और स्वयं उनके शरीर और जीवन पाकिस्तानी राज्यमें मुसलमानोंके अधिकारमें रहेंगे!!!

जिस पाकिस्तानमें हिन्दुओंकी ऐसी दुर्दशा होगी, उसको म. गांधी आदि कांग्रेसियोंने मुस्लिम लीगको देना स्वीकार कर लिया है!! 'इसी प्रकार म. गांधीजीने भूलाभाई देसाई और लियाकतअलीखांकी इस स्कीमको भी मान्यता दे दी है, कि मध्यवर्ति नियम-निर्माणसभामें ब्रिटिश इण्डियामें रहने वालों २७ प्रतिशत मुसलमानोंको ४० प्रतिशत जगह दी जाय!!!' अर्थात् कांग्रेस हिन्दूघातक मुसलमानोंको उनकी हिन्दूघातक स्कीमोंमें हर प्रकारसे सहायता दे रही है!!! अतः हिन्दुओंको सचेत होना चाहिए।

मुस्लिमेतरोंसे मुसलमान पशुओंकासा बर्ताव क्यों करते हैं, इसका उत्तर कई ईसाई लेखक इस प्रकार देते हैं:-

1. I wonder sometimes, whether Mohamedans will ever learn that their best interests lie in realizing the great truth of the brotherhood of humanity. There can be no peace,no prosperity and no real happiness until the feelings of cruel religious 'fanaticism nurtured by the Quran,'

यदि ये बातें, किन्हीं लोगोंको 'ज़ालिमाना' [क्रूरतासे पूर्ण] तथा 'वहशियाना' [असभ्यतापूर्ण] प्रतीत होती हैं, तो उसका कारण केवल यह है कि पाश्चात्य शिक्षाने इनके स्वभाव तथा उत्कंठाकी रगको मार दिया है, और उनकी प्रतिष्ठा, आत्मा, तथा घाव लगानेवाले विचारोंपर ख़ियोंकी रवादारी [सहिष्णुता तथा सद्व्यवहार] का जंग (Rust) लग चुका है। (१) ...... यदि प्राकृतिक जगतपर विचार किया जाय, तो जिस

---

have been replaced by feelings of brotherly sympathy and love for all nations and peoples." Studies in Mohamadanism ' by Iohn Pool p. 373.

2. ' This hatred towards all other religionists, which is the very element of Islam, is continually nourished by thy reading of the Koran ' wich is filled with threatenigs and curses against unbelievers. It is also the necessary cansequence of a doctrine which teaches that ' the sword is the sanctified means of conversion.. "–' Isham and Christianity by M. Arnold D. D. P. 205,

३. इसी प्रकारके भाव स्वयं 'मिरज़ा गुलाम अहमद सा. कादियानी 'ने स्वरचित उर्दू पुस्तक 'अजाला औहाम 'के पृष्ठों ९००,९०४–९०७ तकमें लिखे हैं, जो विस्तारभयसे हम यहाँ उद्धरित नहीं कर सकते। परन्तु ये लेख ईसाई समाचारपत्र नूर अफशाँके ३ जनवरी १९३० तथा 'प्रकाश' लाहोरके १२ जनवरी १९३०के अंकोंमें प्रकाशित हो चुके हैं। तो भी कुछ भाग देखिए:–

'तो फिर स्वीकार करना पड़ेगा कि सम्पूर्ण कुर्आन शरीफ गालियोंसे पूर्ण है, क्योंकि जो कुछ मूर्तियोंके अपमान व मूर्तिपूजकोंसे घृणा और उनके संबंधमें शाप और अपवादके कटु शब्द कुर्आन शरीफमें प्रयोग किये गए हैं, वे कभी भी ऐसे नहीं हैं, जिनके सुननेसे मूर्तिपूजकोंके मन प्रसन्न हुए हों...।... क्या कुर्आन शरीफमें कुफ्फार [काफिरों]को 'शर्रुल् बरीया' [श्रेष्ठ पदार्थोंमें नीचतम] ठहराना और सब नीच और निकृष्ट योनियोंमें अत्यंत नीच प्रकट करना, यह आक्षेप–कर्ताके विचारानुसार गाली देनेमें शामिल नहीं होगा? क्या खुदा तआला [परब्रह्म]ने कुर्आन शरीफमें 'वग्लुज अलैहिम' [उनपर सख्ती वा कठिनता करो] नहीं कहा? क्या मोमिनोंके चिन्होंमें 'अशिदाए अलल् कुफ्फार' [काफिरों पर अत्याचार करने वाले] नहीं कहा गया?– अजाला औहाम पृ. ९००.

...प्रकट है कि किसी मनुष्यको पशु कहना भी एक प्रकारकी गाली है, परन्तु कुर्आन शरीफ न केवल 'हैवान' [पशु] किन्तु कुफ्फार तथा 'मुनकिरीन' [इस्लामसे विमुख लोगों]को संसारके सारे जीव-धारियोंसे नीच ठहराता है, जैसा कि कहता है कि 'इन शरद्दवाबिब इन्दल्लाहिल्लजीना कफरू' [जो अविश्वासी है वह अल्लाहके निकट सब प्राणियोंमें अत्यंत नीच व अधम है]'... अजाला औहाम पृ. ९०४–०७के बीच-

यह कुर्आनके संबंधमें एक मुस्लिम विद्वानका मत है। अब वैदिक धर्म [Hinduism] तथा इस्लामकी तुलना एक निरपेक्ष ईसाई विद्वानने कैसे की है सोभी देखिए:–

4. ' Hinduism is the most tolerent religion of the world. Islam is very different being ferociously intolerent. '— ' Everybody's Political-What is What by George Bernard Shaw P. 227-8

टीप–धाराएं १,२,४ हमने 'आर्य-कोल्हापूर १६.१.४५ 'से, और धारा ३ 'सत्य निर्णय' श्री पं. ज्ञानचन्द्रजी आर्य-कृत पुस्तकके पृ. २८-३० तकसे संक्षेपतः उद्धरित की हैं।

(१) बाइबलकी पश्चात्य शिक्षाही नहीं अपितु वैदिक धर्मकी प्राचीनतम प्राच्य शिक्षा भी सहिष्णुता तथा सद्व्यवहारको स्त्रियोंकाही नहीं अपितु बडे बडे शूरवीर पुरुषोंका सद्गुण बताते हैं। अतः पाश्चात्य शिक्षाका कुछ दोष नहीं। रवादारी सत्पुरुषोंका स्वाभाविक गुण है। इस्लामके प्रवर्तकोंमें यह गुण भलेही न हों, परन्तु शेख सादी, मौलाना रूम

प्रकार बकरीके लिए घास खाना जुल्म [अन्याय] नहीं, अपितु पूर्ण शफ्कत [मेहरबानी] है, क्योंकि वह मरी हुई घास अब जीवित शरीरका अंश बन जायगी। और जिस प्रकार बकरीका मनुष्यके लिए काटा जाना जुल्म नहीं अपितु पूर्ण मेहरबानी है, क्योंकि अब वह एक ज्ञानवानके शरीरका अंश हो जायगी। (और जिस प्रकार बकरीका इन्सानके लिए) उसी प्रकार काफिरोंके देश तथा उनकी जान और मालका इस्लामी लाभोंके निमित्त विलीन हो जाना जुलुम नहीं अपितु ठीक मेहरबानी तथा उपकार है, क्योंकि इस प्रकार वे अपनेसे एक उच्चतर धर्म तथा जातिके वैभवका अंश बनेंगे।(२)

'अश्रते कतरा है दरियामें फना हो जाना।'

आदि अनेक मुस्लिम विद्वान पूर्ण सद्व्यवहारी सहिष्णु और मुस्लिमेतरोंसे मेल-मिलाप रखनेवाले हो गुजरे हैं, जैसा कि उनकी कविताओंसे आज भी प्रकट होता है, यथा—

मा बराए वस्ल कर्दन आमदेम। न बराए फस्ल कर्दन आमदेन॥

अर्थ–हम [इस जगत्में] एकता करनेके लिए आये हैं, परस्पर फूट डालनेके लिए नहीं।

हाफिजा गर वस्ल ख्वाही सुलह कुन बा खासो आम्।
बा मुसलमाँ अल्ला अल्ला बा ब्रह्मन् राम् राम्॥

अर्थ– हे हाफिज [कुर्आनको कंठस्थ रखने वाले]! यदि तेरी इच्छा [संसारके लोगोंसे] एकता करनेकी है, तो सभी छोटों बड़ोंसे सन्धि करले। और मुसलमानसे अल्ला अल्ला और ब्राह्मण [हिन्दू]से राम राम करना आरंभ कर दे॥

मुस्लिमेतरोंसे पशुओंकासा व्यवहार करनेवाले मुसलमानोंके लिए क्याही सुंदर उपदेश है!!! अब मुसलमान बताएँ कि मौलाना रोमने कौनसी पाश्चात्य शिक्षासे प्रभावित होकर उक्त श्लोक रचे? और संबोधन कुर्आनके कंठस्थ करनेवालेको क्या इसी लिए नहीं किया कि वे ही कुर्आनकी शिक्षासे अधिक प्रभावित होकर अनपढ मुसलमानोंको मुस्लिमेतरोंके विपरीत भड़काया करते हैं? यदि यह सत्य है, तो क्या मौलाना रूमी तथा मिरजा गुलाम अहमदके कुर्आन संबंधी मतमें समानता प्रतीत नहीं होती? और क्या उक्त तीन ईसाई विद्वानोंके मत इन दो मुसलमान विद्वानोंके विचारोंसे नहीं मिलते जुलते?

(१) बकरीका घास खाना तथा सिंहका पशुओंको खाना इसलिए अन्याय नहीं, कि ये उनके स्वाभाविक अर्थात् प्राकृतिक अथवा ईश्वर-नियोजित खाद्य पदार्थ हैं। निर्जीव घासका न बकरीका अन्याय समझ सकता है और न उसकी मेहरबानीका भान होता है। इसके विपरीत सजीव बकरी मनुष्यके लिए काटा जाना कदापि पसंद नहीं करती, और इसी लिए वह काटे जानेसे घबराती, भागती, और कटते समय दुःखसे चिल्लाती और तड़पती है!!! मेहरबानी मानती होती तो प्रसन्नतासे गला कटा लेती। क्या लि. पाकिस्तानी मुसलमानोंने कियामतको मानना छोड़ दिया है?

कुर्आन ६।३८ के अनुसार कियामत [पुनरुत्थान]के दिन मनुष्यों, पशुओं, पक्षियोंको अपने पूर्व रूपमें फिर उठ खड़े होना है। अब जिस मुसलमानने अपनी आयुमें पचासों बकरियों, मुरगियों आदि पशु पक्षियोंको 'खाकर अपने शरीरका अंश बना लिया है' वे कियामतमें कैसे उठ सकेंगे? क्या मांसाहार करके मुसलमान कुर्आन और अल्लाहसे विमुख नहीं हो रहे? मांसाहारी लोग क्या शैतानके अनुयायी नहीं बन रहे? कुर्आन ४।११९में शैतान अल्लाहको कहता है कि मैं तेरे मनुष्योंको बहकाऊंगा और वे जानवरोंके कान चीरते और अल्लाहकी बनाई हुई सूरतों [आकृतियों]को बिगाड़ते रहेंगे। अर्थात् अल्लाहकी बनाई पशु पक्षियोंकी मूर्त्तियोंको मांसाहारी लोग शैतानके बहकावेमें आकर नष्ट कर रहे हैं!!! शैतानके इस कथनका कुर्आन ३०।३०में भी समर्थन किया गया है, जिसका मौ. मु. अली कृत आंग्ल अनुवाद इस प्रकार है:-

[बिन्दुकी प्रसन्नता नदीमें लीन हो जानेमें है](१)

यह न समझा जाय कि मुसलमान केवल दूसरोंकी कुरबानी [बलिदान]का मजा लेनेके लिए यह फिलसफा

[logic] उपस्थित कर रहे हैं, वे स्वयं भी इसी घाट उतरते हुए जहां दूसरोंको उतारा है, खिलाफतकी खातर जिहाद करते हुए मारा जाना शहादत [वीरगति]

"Then set your face upright for religion in the right state–the nature made by Allah, in which He has made men; there is no altering of Allah's creation: that is the right religion but most people do not know"—Quran 30:30.

उक्त दोनों प्रमाणोंसे यही निष्पन्न होता है, कि 'कुर्आन न मांस खानेका विधान करता है, न खतना [सुन्ता] करानेका ! ! ! कारण इन दोनों कृतियोंसे अल्लाहकी बनाई सूरत बिगड जाती है ! ! ! 'सालिम सूरत रब्ब दी भन्ने बेईमान' (गुरु ग्रंथ साहेब) क्या स्वार्थसाधना तथा निर्दयतामेंही मनुष्यका श्रेष्ठत्व है ? मुसलमान अपनेको 'अशरफल् मख्लूकात' अर्थात सृष्ट-प्राणियोंमें सर्वोत्तम समझते हैं, और साथही अपने लाभके लिए संसारके सभी प्राणियोंको दुःख पहुंचाना, और उन्हें मारकर खा जानातक न्याय तथा युक्तियुक्त समझते हैं। पशुओं पक्षियोंको जब्ह और नहर करके झटकेसे कई गुना अधिक दुःख पहुंचाकर मारते हैं। गले पर धीरे धीरे छुरी चलाना जबह कहलाता है। कुर्आन २२।२६ के अनुसार वे ऊंटकी कुर्बानी नहर करके करते हैं। इसमें ऊंटको खडा करके उसके पांव बांध दिये जाते हैं कि भाग न सके। ' फिर उसके छातीमें बरछा आदि चोंप दिया जाता है। भाग सकता नहीं, अतः बिचारा वहीं खडा खडा चिल्लाता रहता है, और लगभग १० मिनिटके पश्चात् रक्त निकल जानेके कारण शरीर निर्बल होकर बिचारा ऊंट पृथ्वीपर गिर पडता है ! ! ! ' बकरा मुरगी आदिका जबह होना तो प्रत्येकने देखा है। 'उनके गलेपर जरासी छुरी चलाकर उन्हें छोड दिया जाता है, जबतक कि वे तडप तडप कर ठंडे न हो जाएं !'

क्या ऐसे निर्दयी मनुष्य 'प्राणियोंमें सर्वोत्तम' कुर्आनके अनुसार भी कहला सकते हैं ? कदापि नहीं। देखियेः—

१ कुर्आन ११।६९-७०के पढनेसे पता लगता है कि अल्लाहके 'मलायक'=दूत मांस नहीं खाया करते ! अब बताइये कि निरामिष-भोजी हिंदू अल्लाहके दूतोंसे मिलते जुलते हैं वा नहीं ?

२ मनुष्योंके आदि–उत्पत्तिकर्ता ह. आदम और बीबी हव्वा निरामिष–भोजी होनेके कारणही अदनके उद्यानमें उतारे गए थे ! ! ! देखो कुर्आन २।३५॥

३ कुर्आन १७।४४में स्वयं अल्लाहका वचन है कि आकाश तथा पृथ्वीके समस्त प्राणी अल्लाहकी प्रशंसा तथा पवित्रताका वर्णन करते रहते और उसकी 'तस्बीह पढते' [उसका नामस्मरण करते] हैं। परन्तु हे मनुष्यों ! आप उन्हें नहीं समझते हो। अब बताइये कि अल्लाह अपने इन भक्तोंका गला कटवाना पसंद करता होगा ?

४ अब प्रश्न होगा कि कुर्आनने मुसलमानोंके लिए कौनसी 'रोजी' [उपजीविका = भक्ष्य = Sustenance = Subsistence] विधान की है ? कुर्आनके निम्न प्रमाणोंमें अल्लाह कहते हैं कि हमने आकाशसे वर्षा करके पृथ्वीपर प्रकार प्रकारके अन्न, भाजियाँ और मेवे उपजाए हैं, 'मनुष्यके' खानेके लिएः-

देखो कुर्आन २।२२॥८०।२५-३२॥१४।३२॥२०।५३-४॥२८।५७॥३६।३३-३५॥१६।१०-११॥४०।१३॥७।१०॥ इत्यादि विस्तार भयसे हमने केवल पतेही लिखे हैं, विवरण नहीं लिखा। परन्तु इनसे सिद्ध होता है, कि कुर्आनके अनुसार भी मुसलमानोंको फलाहारी और अन्न तथा शाकाहारी बनना चाहिए–मांसाहारी नहीं ! ! !

अतः जब मुसलमानोंके लाभके लिए पशुओंके मारे जानेकी भी सिद्धि कुर्आनसे नहीं होती, तो काफिरोंके माल अगर जानपर ताक लगानेका भ्रम इन खिलाफत-पाकिस्तानियोंके हृदयोंसे जितना शीघ्र दूर हो उतना अच्छा।

(१) नदीमें लीन होजानेमें बिन्दू इसलिए प्रसन्न होता है, कि एक तो नदी तथा बिन्दूके जल सजातीय हैं, घास तथा बकरी अथवा मनुष्य तथा बकरीके समान विजातीय नहीं ! ! सजातीय पदार्थको सजातीय पदार्थसे मिलनेमें आनंद होता है, जैसा अग्निके चिन्गारीको अग्निमें, और जीवात्माको परमात्मामें मिलनेसे होता है। इन अवस्थाओंमें

समझते हैं। इस भवनकी नींव किसीकी खराबी पर खडी है।

यह तो सिद्ध हो चुका कि इस्लामी लाभकी तुलनामें इस्लामेतर लाभ हमारे सामने तनिक भी मूल्य नहीं रखते। अब प्रश्न केवल यह उपस्थित होता है कि मुस्लिमेतर शक्तियोंका मलियामेट और अपनी शक्तियोंका उत्थान किस प्रकार किया जाय। क्योंकि यह प्रत्यक्ष है कि श्रेष्ठ होते हुए भी यदि मनुष्य भेडियोंके जंगलमें जा घुसे तो वे उसे फाड कर खाजाएं। इसी प्रकार यदि हिंदुस्तानके मुसलमानोंने बिना सोचे समझे, बिना किसी स्कीमके और बिना पर्याप्त युद्धके साधनोंके प्राप्त किये एकही समयपर समस्त इस्लामेतर शक्तियोंसे युद्ध आरंभ कर दिया, तो कामयाबी जरा कठिन है……

मजहब (संप्रदाय) और हुकूमत (राज्य)

राज्यप्राप्ति उद्देश्यकी पूर्ति नहीं अपितु वह उद्देश-पूर्तिका केवल एक साधन है। राज्यका काम यह है कि वह संसारमें मजहबकी उन्नतिकी व्यवस्था करे। … राज्य शिक्षाका प्रबन्ध करता है और जातिको विधर्मियोंसे बचानेके अतिरिक्त तबलीग [प्रचार]का ऐसा प्रबन्ध करता है, कि जिससे अन्तमें संसारमें केवल एक 'दीन-बर-हक' [सत्य-प्रतिष्ठित धर्म]को विजय प्राप्त हो।…

'हमारी स्कीमका हिन्दुस्थानका बंटवारा-हमारा बंटवारा किसी ऐसी न्यायदृष्टि पर अवलंबित न होना चाहिए, जिससे मुस्लिमेतर लाभोंको इस्लामी लाभोंके समान समझा जानेका सन्देह तक भी हो।' (१) न ही हमें दुखगथाओं [भिक्षुकों]के समान अपनी अल्पसंख्याका रोना रोते हुए और निर्बलताके दुःखसे बिलबिलाते हुए किसीसे भूमिकी भीख मांगनी चाहिए। अपितु हमें तो संसारके रक्षक और पृथिवी पर खुदाके दारोगे [अधिकारी] के रूपमें यह देखना है कि हमारे खुदाकी भूमिका वह जरखेज [सोना उगलनेवाला] त्रिकोणा टुकडा [हिंदुस्तान] जो एशियाके दक्षिणमें उपस्थित है-जिसे दोसौ वर्ष पहले तक हमारी ताबेदारी [आधीनता]का घमंड प्राप्त था, और जिसमें सन १८६० ई. तक हमारी शरीअत [इस्लामी कानून] सुख तथा रक्षा कायम रखती थी, उसके कितने भागको हम खुदाके विद्रोहियोंसे लौटा सकते हैं… (२)

I ………

II ………

III हिंदुस्थानी मुसलमानोंका अधिकसे अधिक भाग एक स्थान पर रहना चाहिए। यदि कुछ भाई बाहर रह जाएं तो वे अत्यंत विवशताकी अवस्थामें।… हिंदुस्थान पर दृष्टि डाली जाय तो दिखाई देता है कि दक्षिणमें हमारा संस्थान (३) हमारी बहुसंख्याके बलपर नहीं अपितु केवल पूर्वप्रतिष्ठा और एक संस्थान होनेके कारणही विद्यमान है। यदि हमने इस समय उसे किसी निजी इस्लामी रंगमें रंगनेका यत्न किया तो न केवल हमारे उत्थानके

छोटा पदार्थ बडे पदार्थमें मिलनेसे फना = नष्ट नहीं होता, अपितु अधिक सुरक्षित हो जाता है। बूंद नदीमें मिलकर सुरक्षाको प्राप्त होता है, जीव ब्रह्मको प्राप्त करके आनंदमय बनता है। क्या इसी प्रकार बकरी भी मुसलमानके पेटमें जाकर आनंद मनाती या रक्षा पाती है? यदि नहीं तो काटे जानेमें उसे क्या प्रसन्नता! दुःख है कि पाकिस्तानके मोहमें आपने अपनी बुद्धिको इतना भ्रष्ट कर दिया है, कि उदाहरण भी ठीक नहीं दे सकते!!

(१) अवतरण चिन्ह हमारे। कांग्रेसी हिन्दुओंको आंखें खोलनी चाहिएं! हिन्दुमहासभाका पाकिस्तानका विरोध करना समयोचितही है!!

(२) 'यहां ब्रिटिश सरकारको खुदाका विद्रोही कहा जा रहा है!' कि: पाकिस्तानी मनोभावका नमूना देखिए। हिन्दुस्तानके उत्तरीय भाग पर ६०० वर्ष राज्य करनेके कारण जो मुसलमान खुदाके स्वरूप वालेपे बन कर हिन्दुस्तान पर पुनः शासन करना चाहते हैं, परंतु जिन आर्यों [हिन्दुओं]की करोडों वर्षोंसे आत्माओं जन्मभूमि रह चुका है, और जिन्होंने यहां रहते हुए पृथ्वीका चक्रवर्ति राज्य किया, उनकी इस देशपर कोई सत्ताही नहीं!!! कदाचित् वे भी विद्रोहियोंमें गिने जा रहे हैं।

३ अर्थात् निजाम राज्य।

प्रारंभमें यह बोझ हमारे लिए कठिन सिद्ध होगा, अपितु स्वयं दक्षिणमें इस्लामके ढांचेको भी निर्बल कर देगा। अतः इस...को सुरक्षित रखनेकी सर्वोत्तम योजना यह है कि उसे न छोड़ा जाय और अपनी अवस्थापरही रहने दिया जाय, जबतक कि हम अपने पांव अपनी बहुसंख्या-वाले प्रान्तोंमें अच्छी प्रकार जमा लें।

मध्य-भारतमें भी हमारा अस्तित्व बिखरा हुआ है। अतः वहां विजय प्राप्त करनेके लिए हमें इस मात्रामें शक्ति लगानेकी आवश्यकता होगी जिससे प्रथम हम अपने खड़े होनेकी जगह बनालें। ...... यह हिस्सार, जहां गंगा जमनाकी सूरतमें विद्यमान है ... इस्लामिक संसारमें इसकी केन्द्रीय पोज़ीशन [position] हमारे लिए अगणित यौद्धिक कामोंका कारण हो सकती है। ...

खिलाफत पाकिस्तानका नकशा आप मुख-पृष्ठ पर देख सकते हैं। प्रश्न उत्पन्न होता है कि इस अच्छी भली दृढ श्रृङ्खलामें यू. पी. और बहारकी दो कमजोर कड़ियां क्यों मिलादी गईं? उत्तर यह है कि इनके बिना श्रृङ्खला बनतीही न थी। यह मानी हुई बात है कि बंगाल तथा पंजाबमें मुसलमान पृथक रहें तो वे केवल दो धागे हैं, परंतु यदि किसी प्रकार इनको मिला दिया जाय तो एक न टूटने वाली श्रृङ्खला। इसके अतिरिक्त यू. पी. में लखनउ हमारे खिलाफत पाकिस्तान की सरकारी भाषा उर्दूका उत्पत्ति-कर्ता है और आगरा हमारी ऐतिहासिक यादगारोंका केन्द्र और देहली हमारे राज्यका अनश्वर अंश है। (१)

'दस्तूर खिलाफत पाकिस्तान'-चूंकि केवल मुसलमान ही पूर्ण पुरुष (२) है इसलिए राज्य-कार्यमें राय (vote)

---

(१) लखनउ, आगरा [लखन = लक्ष्मण तथा आग्रह] दोनों नगरोंके नामही संस्कृतके हैं, फिर इनका मुसलमानोंसे क्या संबंध? यदि इनमें मुसलमान बादशाहोंकी यादगारें ३५० वर्षोंसे होनेके कारण समस्त ऐतिहासिक संयुक्तप्रान्त मुसलमान ले सकते हैं, तो समस्त प्रान्तमें हिन्दुओंकी पूज्य गंगा और यमुनाके बहने और उनपर काशी, हरिद्वार, मथुरा, वृन्दावन आदि अनेक पवित्र तीर्थस्थानोंके लाखों वर्षोंसे विद्यमान होनेके कारण हिन्दू भला इस प्रान्तको जीते जी क्योंकर छोड़ सकते हैं? हां! खि. पाकिस्तानमें मुस्लिमेतरोंसे न्याय तो करनाही नहीं!!! अतः जो चाहें सो कर लेना। कांग्रेसी हिन्दू आपको पाकिस्तान-प्राप्तिमें सहायता देही रहे हैं!

(२) १. मुसलमान पूर्ण-पुरुष नहीं, वह मुस्लिमेतरोंके समानही जैसा करेगा वैसा भरेगा! इनके पैगम्बरतक भी कर्मोंका फल पाएंगे-देखो कुर्आन ३।१६०

२. मुसलमान पूर्ण पुरुष नहीं, अपितु साधारण मनुष्य होनेके कारण जैसे कर्म करेगा, वैसेही फल पाएगा-देखो कुर्आन २।१३४,१४१,२१५,२८१ तथा ६।७०,१६५ इत्यादि।

३. केवल बाइबल अथवा कुर्आन इत्यादि पर मौखिक विश्वासका प्रदर्शन करनेमात्रसे कोई पूर्ण-पुरुष नहीं बन जाता। जो जैसा करेगा वैसा पाऐगा-देखो कुर्आन ४।१२३

४. मुसलमान पूर्ण-पुरुष नहीं क्योंकि ह. मुहम्मद सा. भी सिफारश [मध्यस्थी] करके उसे कुकर्मोंके फलसे छुड़ा नहीं सकेंगे-देखो कुर्आन २।४८,१२३॥ ६।७०,९५,१०५,१०८॥१०।१०८,१६५॥ इत्यादि।

५. सही 'बुखारी' जिल्द ३ हदीस १७८६में लिखा है कि अल्लाहके दिए हुए दंडको कोई भी मध्यस्थी करके टलवा नहीं सकता!!!

६. कुर्आन ७।१८१में अल्लाह स्वयं कहते हैं कि "हमने जो सृष्टि निर्माण की है, उसमें एक ऐसी जाति भी है जो लोगोंको सत्यकाही मार्ग दिखाती है, और तदनुसारही न्याय करती है।"

अब मुसलमानही बताएं कि हिन्दुओंके सिवा ऐसी और कौन जाति पृथ्वीपर है? किसी भी सारी जातिका पूर्णत्वको प्राप्त करना तो असंभव है, किन्तु पूर्ण-पुरुषकी अधिकता ऐसी सत्याग्रही और न्याय करनेवाली जातिमेंही संभव है-मुस्लिमेतरोंको पशु-तुल्य समझने वाले मुसलमानोंमें नहीं!!!

७. मुसलमान पूर्ण-पुरुष होते तो सभी बहिश्त [स्वर्ग]में जाते। परन्तु सही बुखारी जिल्द ३ हदीसों८०५,१५४१-२, तथा १५५३में स्वयं ह. मुहम्मद सा. का वचन है कि मेरे अनुयाइयोंमेंसे सत्तर हजार बहिश्तमें जाएंगे!!! आज

देनेका अधिकार भी केवल मुसलमानोंकोही प्राप्त होगा। हां, यदि वे कोई काम मुस्लिमेतरोंको सौंपना चाहेंगे तो वे ऐसा कर सकेंगे। हमारा दस्तूर हुकूमत अजमाए-उम्मत (Democracy) और इतायते अमीर (Dictatorship) का वह मिलान होगा, जिसका नाम खिलाफत है। ... हमारी हुकूमत का काइद एक [मुस्लिम] जातिका चुना हुआ अमीरुल् मौमनीन [मोमिनों वा मुसलमानोंका अमीर वा सरदार] होगा। ... उसे एक ही समयमें अमीर हुकूमत [राज्यका सरदार] तथा इमाम मजहब [संप्रदाय-का पेशवा] के अधिकार प्राप्त होंगे । He will be a Pope and a Caesar (कैसर ?) combined.

'सेना तथा जिहाद' [मुस्लिमेतरोंसे युद्ध] -मुसलमानकी हर हरकत [कर्म = Action] उसका अमल [कर्तव्य = Duty] है। (१) उसकी सम्पूर्ण आयु जिहाद है।... जिहाद हर मुसलमानका कर्तव्य है। हां, प्रत्येक व्यक्तिकी स्थिति तथा शक्तिके अनुसार जिहादके भिन्न भिन्न प्रकार हो सकते हैं। इसलामी सेनाके सिपाही मुजाहदीन [काफिरोंसे लडने वाले] होंगे (२)। जो लोग अपना व्यय स्वयं करनेकी शक्ति न रखते हों, उनका वेतन खिलाफतके जिम्मे होगा। माल गनीमत [लूटके माल]में हर मुसलमानका भाग है।...... खिलाफतका यत्न होगा कि जहां वह हर मुसलमानसे युद्ध-सेवाकी आशा रखे, वहां उसके व्यवसायका भी प्रबंध करे। जो मुस्लिमेतर युद्धसेवा करना चाहेंगे, उन्हें जातिया [मुस्लिमेतरों परका कर = Tax] न देना होगा।

............।

'तबलीग [प्रचार]'-प्रचारके लिए खिलाफत पाकिस्तानमें एक स्वतंत्र और शक्तिशाली विभाग होगा। इस विभागमें बडी व्यवस्थासे प्रचारक तैयार किये जावेंगे। प्रचारकोंकी पीठपर राज्यकी समस्त शक्तियां होंगी। राज्यका कर्तव्य होगा समस्त परदेशोंमें प्रचारकोंके लिए सहूलियतें पहुंचानेका प्रबंध करना।......

बैतुल्माल [राज्य-कोश, जिसमें लूटका माल रहता है] ...... लोगोंपर सिवाय जकूात (३) तथा 'जजिया' और दूसरे शरई मुहासिल [इस्लामी करों = Tasees]के और कोई टैक्स नहीं लगाया जायगा। ...... पृथिवी

पृथ्वीपर मुसलमानोंकी संख्या २८००००००० है। इनमेंसे यदि ७०,००० स्वर्गमें गए, तो ४००० मुसलमानोंमेंसे केवल एक मुसलमानही बहिश्तका अधिकारी होगा!!! इसके विपरीत सही बुखारी ३।१५३० तथा १५३१में हजरतका वचन है, कि ह. आदमके अनुयाइयोंमेंसे एक प्रतिशत बहिश्तमें जायगा।!! अर्थात् ह. आदमकी सन्तान [मुसलमानोंके सिवा] मुसलमानोंसे ४० गुना अधिक बहिश्तमें जाएगी!!! कारण क्या? सही बुखारी जिल्द ३ की हदीसों सं. १४३१-३२,१५७६से७९,१६४८तथा १६८८में स्वयं ह. मुहम्मद साहेबका वचन है कि मेरे समयके पश्चात् मुसलमान गिरते जाएंगे!!! 'हजरतका वचन सत्य हो रहा!' मुसलमानोंमेंसे मनुष्यत्व तथा सहिष्णुताके भाव निकल रहे हैं, और वे अन्याय तथा अत्याचारकोही धर्म समझ रहे हैं!!!

(१) अर्थात् मुसलमान पूर्ण-पुरुष होनेके कारण वह जो कुछ करे सो ठीक समझा जायगा!!! परन्तु हम ऊपर दिखा चुके हैं, कि स्वयं कुर्आन तथा हदीस भी इन विचारोंको भ्रान्ति-मूलक सिद्ध करते हैं!

(२) होंगे नहीं, आज भी हैं। हैद्राबाद दक्षिणमें सैनिक तो क्या स्वयं पुलीस भी बडेसे बडे हिन्दू व्यक्तिको मार पीट कर सकती है। ता. २४ एप्रिल १९४५ को पुलीस अधिकारियोंने किस प्रकार निम्न सज्जनोंको गुलबर्गाके पुलीस थानेमें बुलाकर पुलीस सिपाहियोंसे अधमरे हुएतक पिटवाया, वह 'आर्य लाहोरके' ३-६-४५के अंकमें छपा है। श्री पं. विनायकराव विद्यालंकार Bar at Law, प्रधान आर्य समाज। पं. गणपतराव B.A. LL. B., उप प्रधान तथा पं. नरेन्द्रजी, मंत्री आर्य-प्रतिनिधि-सभा हैद्राबाद जैसे प्रतिष्ठित पुरुषमेंसे हरेकको कमसे कम १५ लट्ठों और बंदूकोंके कुन्दोंकी चोटें लगी हैं!' क्यों? 'मुसलमानकी हर हरकत उसका अमल है! उसकी सम्पूर्ण आयु जिहाद है।' इस भ्रान्तियुक्त सिद्धान्तको घड लेनेके कारण।

(३) आयका चालीसवां भाग पुण्य कार्योंके लिए दान देना हर मुस्लिमपर कर्तव्य समझा जाता है। इसे जकूात कहते हैं।

समस्त अल्लाहकी होनेके कारण अल्लाहके खलीफेकी [खिलाफत-पाकिस्तानके बादशाहकी] समझी जायगी (१) और बैतुल्माळके हाथमें रहेगी।

'खिलाफत-पाकिस्तानमें मुस्लिमेतरोंसे क्या सलूक होगा'-एक ऍंग्लो-इन्डियन पत्रने हमारी स्कीम प्रकाशित करते हुए जिजियेका वर्णन इस प्रकारसे किया है जैसे कि मुस्लिमेतरोंके साथ हमें किसी प्रकारका वैमनस्य है, और जैसे कि खिलाफत-पाकिस्तानमें मुस्लिमेतरोंको नीचा दिखाया जायगा। हम इस आक्षेपका खण्डन बडे जोरसे करना चाहते हैं। मुस्लिमेतर हमारे छोटे भाई हैं, चाहे वें गुमराह [पथ-भ्रष्ट] छोटे भाईही हों (२)।...रहा जिजिया, तो मुसलमानोंको भी जकूवात देनी पडेगी, किन्तु मुसलमानोंको युद्ध-सेवा भी साथही देनी पडेगी। जिजिया केवल उन मुस्लिमेतरोंसे लिया जायगा जो युद्ध-सेवा न देंगे। (३)

'जकूवात्' और 'जिजिया' दोनों इन्कम टॅक्ष [आय पर कर]के इस्लामी नाम हैं, और एक विशेष अंकसे कम आय रखनेवाले लोगोंसे यह कर न लिया जायगा।

[जिजियाको इन्कम टॅक्ष बताना असत्य है। देखिये एक ईसाई कोशकारका मत—' जिजिया— खिराज [Tax] जो मुहम्मदी लोग काफिरोंपर लगाते थे।

A capitation tax levied by Mohammedens on infidels.'

The New Royal Dictionary by Rev. Thomas Craven M. A., B. D.

'Capitation' शब्दका अर्थ है कि 'शिर-गिनती'। अर्थात 'जिजिया' प्रत्येक काफिर = Infidel = मुस्लिमेतर पर लागू होनेवाला कर है, Income Tax नहीं!!! परन्तु जो खिलाफत-पाकिस्तानके पुरस्कर्ता 'नेकी क्यों अच्छी है और बुराई क्यों बुरी' इस सीधे सादे प्रश्नका उत्तर भी तर्कसे देना नहीं चाहते, उनसे सत्यासत्य विवेककी आशा रखनाही व्यर्थ है!]

तरीक-ए-कार (कार्य-प्रणाली)

....

५. जब संघका ईमान और उसकी शक्ति एक विशेष भूमिका प्राप्त कर ले, तो क्रमशः जिस प्रकार हमने पहले एक वार हिंदुस्तान पर अधिकार जमाया था, और जिस प्रकार वह हमसे छीना गया था, उसी प्रकार वह हमें पुनः भी प्राप्त हो सकता है...

....

'खिलाफत-पाकिस्तान स्थापित करनेकी धुन समाई है, तो मुसलमानोंकी घरकी फूट दूर करनेकी क्या व्यवस्था सोची है?'

....

इसी प्रकार हमारे नपुंसक विचारके नेताओंकी ओरसे हमें हर समय रवादारी [सभ्य बर्ताव] हिन्दू मुस्लिम दंगोंसे बचते रहने, तथा अमन पसंदी [शान्ति-प्रियता]के पाठ पढाए जानेका परिणाम यह हुआ है, कि जो द्वेषका विष दूसरे मनुष्योंके समान हमारे भीतर भी विद्यमान था, जब उसे अन्यमतावलंबियोंको डंक मारनेका अवसर न

---

(१) अर्थात् खिलाफत-पाकिस्तानका राज्य आरंभ होतेही हिन्दूओंका भूमिपर कोई अधिकार नहीं रहेगा। उनसे जमीन छीन ली जायगी।

(२) १३०० वर्षोंसे उत्पन्न हुए मुसलमान १९०० वर्षोंसे उत्पन्न हुए ईसाइयों, ५७०० वर्षोंसे उत्पन्न हुए यहूदियों तथा १९७,०००००० वर्षों अर्थात् सृष्टिके आरंभमें उत्पन्न हुए आर्योंके बडे भाई खिलाफत-पाकिस्तानके इस्लामी गणितके अनुसारही बन सकते हैं, अन्य किसी प्रकार नहीं!!! गुमराह छोटे भाई हैं वा बडे भाई, यह तो तर्क तथा शास्त्रार्थसे सिद्ध होनेवाली बात है, जिसके लिए मुसलमान तैय्यार नहीं! जिन मुस्लिमेतरोंको ऊपर पशु बनाया था, अब उन्हें छोटे भाई कहा जा रहा है!!!

(३) अर्थात् खिलाफत-पाकिस्तान स्कीमके अनुसार जो हिन्दू खिलाफती सेनामें प्रविष्ट होकर अपने हिन्दू भाईयोंके साथ युद्ध करेगा, उसका 'जिजिया' कर बडी कृपासे खिलाफत सरकार माफ कर देगी! आज कांग्रेसी लोग हिन्दुओंका गला काटनेपर उद्यत होनेके कारण हिंदूसभासे अधिक राज्यके प्रिय बने हुए हैं!!!

दिया गया, तो वह विष स्वयं हमारे शरीरमेंही फैल गया। इसकी चिकित्सा तथा विष-हरणका उपाय यह है कि हमारे हिकारत [तुच्छता] तथा खुसूमत [शत्रुता = Enmity]के स्त्रोतों [Fountains]का बहाव फिर मुस्लिमेतरोंकी उन जमाइतों [समूहों]की ओर फेर दिया जाय, जो हमारी बेखकुनी [जड उखाडने] पर उद्यत हैं (१)। इससे एक ओर तो हम अपनी फूटसे सुरक्षित होकर संसारमें उन्नति कर सकेंगे, और दूसरी ओर हमारे शत्रुओंको अपनी रक्षासे इतना समयही न मिल सकेगा, कि हमारे विपरीत मन्सूबे [Plots = कट] बांधते रहें।...

हिन्दुस्तानमें मुसलमानोंको परस्पर फूटसे युक्त करनेके लिए, पहिला लक्ष इस कांग्रेसके महात्मा कहलानेवाले [म० गांधी] पर लगाना चाहिए, जिसने खिलाफतकी हलचलको नष्ट करके हमें हिन्दू नेशनलिज्म् [Nationalism = राष्ट्रीयता]में विलीन कर लेनेकी ठान रखी है (२)। ...

---

(१) अन्यमतावलंबियोंको तुच्छ समझनेवाले, उनसे शत्रुता करनेवाले और उन्हें डंक मारनेवाले मुसलमानों! खि. पा. स्कीमके मुख-पृष्ठपर आपने कुर्आन ३।११० का निम्न वाक्य लिखकर मुसलमानोंका परिचय दिया है:- 'तुम उन सब जातियोंसे उत्तम हो, जो मनुष्योंमें प्रकट हो चुकी हैं, क्योंकि तुम नेकी की आज्ञा देते हो, बदीसे मना करते हो और अल्लाह पर ईमान रखते हो।'

आज जो जाति अपने रवादारी सिखानेवाले नेताओंको भी नपुंसक कहती है, वह उक्त वाक्यके अनुसार किस प्रकार मुसलमान कहला सकती है, यह वही जाने! ह. मुहम्मद सा. ने सत्यही कहा है कि 'मेरे बाद मुसलमान गिरते जाएंगे।'

(२) जो मुसलमान 'नेकी क्यों अच्छी और बुराई क्यों बुरी' इस सीधे सादे प्रश्न करने पर भी पानीपतके मैदानमें लडनेको तैय्यार हो जाते हैं, उनसे सत्यासत्यका विचार हो नहीं सकता। हां! इतिहासको जाननेवाले तथा सत्यको ग्रहण करनेवाले जानते हैं कि खिलाफतको जडसे उखाडकर फेंकनेवाले गाजी मुस्तफा कमाल पाशा और उनके अनुयायी तुर्क मुसलमानही थे! परन्तु मुसलमान जो करे सो ठीक इस इस्लामी [अ] न्यायके अनुसार मुस्लिमेतर गांधीजीपर व्यर्थका दोष-आरोपण किया जा रहा है।

इन खिलाफत-पाकिस्तानी मुसलमानोंने कदाचित 'गो-रक्षा'का अर्थ 'हिन्दू राष्ट्रीयता'में विलीन होना समझा है। परंतु इसमें भी वे भूले हैं; देखिए म. गांधीके लेख:—

१. "मैंने खिलाफतके कार्यको जो अपना कार्य बनाया है,' उसका कारण यही है कि उसकी रक्षाके द्वारा मुझे गायकी पूरी तरह रक्षा होनेकी 'संभावना' दीखती है। मैं मुसलमान भाइयोंसे यह नहीं कहता कि मेरी इस सेवाके कारण वे गायकी रक्षा करें...' (नवजीवन ७-१०-१९२१)

२. 'मैं कट्टर सनातनी हूं, परंतु एक मुसलमानको अधिकार दूंगा कि यदि उसका विश्वास है, तो निस्संदेह गायका वध करे। यद्यपि व्यक्तिगत रूपसे मैं गायकी पूजा करता हूं, परंतु मुसलमानोंके लिए मेरे हृदयमें सहिष्णुता विद्यमान है।...यदि कुरान किसी मुसलमानको गोवधः की शिक्षा देता है, तो मैं कौन हूं जो उसे जबरदस्ती मना करूं? अगर मैं ऐसा करूंगा तो अपने मजहबके खण्डनका कारण होऊंगा।' (प्रताप, लाहोर २९ दिसंबर १९२४ ई.)

३. 'मैंने मुसलमानोंके हाथमें अपनी गर्दन क्यों दे दी है? गोरक्षाके लिए! मुसलमानोंसे मैं गायकी रक्षा कराना चाहता हूं।......' मेरे निकट तो गोहत्या और मनुष्यहत्या दोनों एक वस्तु हैं।'

इन दोनोंको बंद करनेका यही उपाय है, कि हम अहिंसाका प्रचार करें, और गो-हत्या करनेवालेको प्रेमसे अपनावें। प्रेमकी परीक्षा तपश्चर्यासे होती है। मैं मुसलमानोंके निमित्त अत्यंत कष्ट सहनेके लिये जो तैय्यार हो गया, इसका कारण स्वराज्य तो था ही— और यह तो साधारण बात थी, परन्तु इसमें गायकी रक्षा करना भी था और यह बडी बात

थी। ...... इस लिए मैं आज मुसलमानोंका साथ दे रहा हूं कि उन्हें दुःख न पहुंचे। उनकी खुशामद करता हूं और वह इस हेतु कि उनमें ईमानका भाव उत्पन्न हो। '

(नवजीवन १९ जनवरी १९२५; प्रताप लाहोर ११-२-१९२५)

उक्त तीनों उद्धरण हमने श्री पं. ज्ञानचंद आर्य कृत ' सत्य निर्णय 'के पृ. १०८-१० से लिए हैं।

पाठकों! म. गांधीजीने अपने हृदयके भाव सरलतासे उक्त तीनों उद्धरणोंमें प्रकट किए हैं। उन्होंने तो स्वराज्य-प्राप्ति और गो-रक्षाको लक्ष करके खिलाफतके कार्यमें मुसलमानोंका साथ दिया था। फलस्वरूप सहस्त्रों हिन्दू, और कई श्री चांदकरण सारडा जैसे आर्यसमाजी भी जेलमें गए! लाखों रुपिया हिन्दुओंने खिलाफतके लिए दान दिया!! परन्तु हिन्दुओंके इन सारे बलिदानोंका फल उन्हें मलबार, मुलतान, कोहाट, मुम्बई, सहारनपूर, कलकत्ता आदि अनेक स्थानोंपर मुस्लिम दंगोंके रूपमें मिला, जिनमें हर प्रकारके अत्याचार हिन्दुओंपर किए, और अभी भी किए जा रहे हैं। ऐसा क्यों हो रहा है? इस लिए कि (१) मुसलमानोंका लक्ष अखण्ड हिन्दुस्थानकी स्वराज्यप्राप्ति नहीं है, उन्हें पाकिस्तान नामक अपनी स्वतंत्र सत्ता चाहिए।(२) वे मुस्लिमेतरों सभी जातियोंको पशु समान अर्थात् मनुष्यत्वसे गिरा हुआ समझते हैं, और उनके लाभोंको नष्ट करके मुसलमानोंकी भलाई करना इसलामी सत्य तथा न्याय समझते हैं!!! (३) वे सदा मुस्लिमेतरोंको डंक मारते रहने, तथा उनसे शत्रुता करनेसेंही अपनी सुरक्षितता मानते हैं!!! उनके मतमें गिरेसे गिरा मुसलमान भी वर्धांके गांधी तथा लंदनमें रहनेवाले चक्रवर्ती राजासे बेहतर है!!! ऐसे लोगोंसे नेकी करना स्वयं हिन्दुओंसे बदी करना सिद्ध हो चुका है। मौलाना शेख सादीने ठीक कहा है:—

' निकुई बा बदां कर्दन चुनांऽस्त '।
' कि बद कर्दन् बजाए नेक मर्दां ' ॥

अर्थ—बुरे लोगोंसे भलाई करना ऐसा है जैसे भले लोगोंसे बुराई करना। परन्तु इतनी बात हमारे कांग्रेसी भाइयोंकी समझमें नहीं आ सकती, आश्चर्य यही है!

' जादू वह जो सिर पर चढकर बोले "

खिलाफत—पाकिस्तानी लोग मुस्लिमेतरोंको कितनाही तुच्छ क्यों न समझें, परन्तु परमात्मा न्यायकारी हैं और सबकी प्रार्थना सुनते हैं और यथायोग्य फल देते हैं। स्वराज्यकी प्राप्तिके निमित्त हिन्दू-मुस्लिम एकताके सिद्धिके लिए हिन्दुओंने जो भी आर्थिक तथा शारीरिक कष्ट उठाए, वे सब कुपात्रको दान देनेके समान परमात्माने निष्फल ठहराए! परंतु गोरक्षाके लिए म. गांधीजीकी प्रार्थना परमात्माने सुनली थी, परंतु इसका ज्ञान अन्योंको तो क्या स्वयं म. गांधीको भी कदाचितही हो! देखिए:—

१. सन १९१७में हिन्दुस्थानमें खिलाफत हलचल आरंभ हुई, और म. गांधीजीके नेतृत्वमें हिन्दुओंने मुसलमानोंकी इस प्रकारसे सहायता करना आरंभ किया। नवजीवन १९-१-१९२५में जो महात्माजीने मुसलमानोंमें धर्मभावके जाग्रत होनेकी अपेक्षा की है, वह प्रार्थना प्रारंभ १९१७ सेही जारी थी। वह प्रार्थना परमात्माने सुनी, और अनेक प्रतिष्ठित मुसलमानोंके मनोंमें गो-रक्षाकी प्रेरणा की जो निम्न रूपोंमें प्रकट हुई।

१. मौलवी अब्दुलबारी तथा ११० अफगानिस्तानके मौलवियोंने फतवा पास किया कि गायकी कुर्बानी बंद करनी चाहिए।

२,३. हिज इम्पीरियल हायनेस अमीर अफगानिस्तान तथा निजाम हैद्राबादने अपने राज्योंमें गो-वध मना कर दिया।

४. अहमदाबादके वार्षिकोत्सवपर आल इण्डिया मुस्लिम लीगने गो-बलिदानको बंद करनेका प्रस्ताव पास किया।

नोट—ये सभी घटनाएँ १९१८ वा १९१९ की हैं, कारण ख्वाजा हसन निजामी कृत उर्दू पुस्तक 'तर्क कुर्बानी गाव'के प्रथम संस्करण १९२० में छपी थीं।

५. ख्वाजा हसन निजामीजीने ' तर्क कुर्बानी गाव ' प्रथम बार उर्दूमें १५०० प्रतियां १९२० ई. में छपवाई!

६. अगस्त १९२१ में श्री ख्वाजाजीने 'तुर्क कुर्बानी गाव 'को दूसरे भाग सहित मुद्रित कराया।

७. अक्तूबर १९२३ में हकीम मौलवी हाफिज अबुतराब मुहम्मद अब्दुल हक अमृतसरीने 'हिफाजतुल् बकर.' = 'गोरक्षा' नामक उर्दू पुस्तक छपवाई। इससे पूर्व आपने गो-रक्षा पर कई लेख लिखे, और व्याख्यान दिये।

नोटः- उक्त दोनों पुस्तकोंमें कुर्आन, हदीस आदिके अनेकों प्रमाणों, मुस्लिम बादशाहोंके आज्ञाओं आदिसे ऐसा सिद्ध किया गया है कि मुसलमानोंके लिए गो-बलिदान करना अथवा गो मांस भक्षण करना दोनों आवश्यक नहीं!!!

८. इनके सिवा देवबन्दके मौलाना अशरफ अली आदि अनेक मुस्लिम विद्वानोंने भी गो-बलिदानके विरुद्ध तथा पशु-दयाके संबंधमें पुस्तकें प्रकाशित कीं।

लेखकका दृढ विश्वास है कि स्वयं मुसलमानोंकी ओरसे गो-रक्षाके पक्ष तथा गो-मांस भक्षणके विरुद्ध, कुर्आन तथा हदीस आदिके प्रमाणोंसे प्रमाणित इतने बहु-मूल्य साहित्यका म. गांधीजीकी प्रार्थना-आरंभके पश्चात एकत्र होजाना मुसलमान विद्वानोंके हृदयोंमें ईश्वरीय प्रेरणाकाही फल था। ऐसोंको नपुंसक विचारके नेता कहना, छोटा मुंह बडी बात है। आश्चर्य अवश्य होगा कि कुर्आन आदिके प्रमाणोंको न मानकर गो-वध करनेवाले और गोमांस खानेवाले मुसलमान, मुसलमान कैसे कहला सकते हैं? परंतु उसका उत्तर खि. पा. स्कीमके कर्ताओंने दे दिया है कि 'मुसलमानकी हर हरकत इसका अमल है'!!! अपने मुंह मियां मिठ्ठू बनना इसीको कहते हैं।

'म. गांधीके अनुसारही नहीं, अपितु बाइबलके अनुसार भी गो-हत्या मनुष्य-हत्याके तुल्य है।' कुर्आनके आदेशानुसार बाईबलको मानना हर मुसलमानके लिए आवश्यक है। यशायाह ६६।३ का वचन हैः— 'वह जो बैलको काटता है, उसके सदृश है जिसने मनुष्य-हत्या की; वह जो भेड वा बकरीके बच्चेके बलि चढाता है, उसके सदृश है जिसने एक कुत्तेका गला काटा...... ' अर्थात् 'बाइबलके अनुसार सब प्रकारका पशु-बलिदान वर्जित है!' कुर्आन भी इसीका समर्थक है! यथाः—

'कदापि न पहुंचेगा खुदाको मांस [बलिदानोंका] न रक्त उनका,' परंतु पहुंचेगी उसको तुम्हारी परहेजगारी। [इंद्रिय-दमन = Continence] (२२ सूरतुल हज्ज आयत ३७)

अतः यदि पशु-रक्षा करना 'हिन्दू नेशनलिज्ममें विलीन' होजाना है, तो ऐसी कई आज्ञाएं स्वयं कुर्आनमें विद्यमान हैं, जिन पर 'सच्चे मुसलमानोंका' ईमान [विश्वास] है!

रही आपकी मुस्लिमेतरोंसे लडते रहने, उनसे शत्रुता करने तथा उन्हें डंक मारते रहनेकी प्रवृत्ति, और सत्यबर्ताव और शान्तिप्रियतासे विमुखता, तो इनके लिए कुर्आनकी निम्न आज्ञाएँ मननीय हैंः—

कुर्आनकी सहिष्णुताः- अल्लाह ह. मुहम्मद साहेबको समझाते हैं कि यहूदियों तथा ईसाइयोंको कह कि '...... जो भी पुस्तकें अल्लाहकी ओरसे उतरी हैं, उन सबपर मैं विश्वास रखता हूं। ... जो अल्लाह तुम्हारा पालन कर्ता है, वही अल्लाह हमारा भी पालन कर्ता है। हमारे कर्म हमारे लिए और तुम्हारे कर्म तुम्हारे लिए हैं। हमारा तुम्हारा कोई झगडा नहीं... ' कुर्आन ४२।१५

क्या खिलाफत-पाकिस्तानी मुसलमान कुर्आन तथा अल्लाहके इस वचनको मानते हैं?

'हिन्दुओंसे सत्य बर्ताव करनेकी कुर्आनी आज्ञा!'

हे मुसलमानों! जो लोग तुमसे तुम्हारे दीन [मत] संबंधी बातोंके कारण लडे नहीं, और जिन्होंने तुम्हारे घरोंसे बाहर निकाला नहीं, ऐसे लोकोंसे तो न्याय और परोपकार करनेसे अल्लाह तुम्हें मना नहीं करता, क्योंकि अल्लाह न्याय-युक्त आचरण करनेवालोंको प्रिय रखता है ॥ ८ ॥ अल्लाह तो तुमको ऐसे लोगोंसे मित्रता रखनेकी मनाई करता है, कि जो तुमसे दीनी बातों पर लडें, और जिन्होंने तुमको तुम्हारे घरोंसे निकाला, अथवा तुम्हारे निकाले जानेमें (तुम्हारे विरोधी पक्षकी) सहायता की... ॥ ९ ॥ कुर्आन सू. ६०.

क्या खिलाफती मुसलमान कुर्आनके इस वचनको मानने हैं ? क्या दीनी बातोंपर हिन्दुओंने कभी मुसलमानोंसे झगडा किया ? क्या उन्हें कभी घरोंसे निकाला ? क्या उनकी मस्जिदें तोडकर उनपर कभी अपने मंदिर बनाए ? कदापि नहीं। उलट मुसलमानोंनेही हिन्दुस्थानकी भूमि हिन्दुओंसे छीनी, और वेही दीनी बातोंपर सदा हिंदुओंसे लडते रहते हैं ! उन्होंनेही हिन्दुओंके मंदिर लूटे, तोडे और उनपर मस्जिदें बनाईं ! ! और अब 'खिलाफत-पाकिस्तान राज्य स्थापन' करके सभी मुस्लिमेतरोंको जडसे उखेड फैंकनेके स्वप्न ले रहे हैं ! ! ! साथही कुर्आनको माननेवाले शत प्रतिशत मुसलमान होनेके दावेदार भी हैं ! ! ! परंतु ऐसे अत्याचारियों के लिए बाइबल कहता है:-

'कोपसे परे रह और जलजलाहटको छोड दे। बुराई करनेके लिए अपने हृदयको किसी प्रकार भी मत जला ॥ ८ ॥ क्योंकि कुकर्मी लोग काट डाले जाएंगे, और जो जेहोवा [परमात्मा] पर आश्रय रखते हैं, वही पृथ्वीके अधिकारी होंगे ॥ ९ ॥ थोडे दिनोंके बीतनेपर दुष्ट रहेगाही नहीं, अपितु यदि उसके स्थानको भी तू श्रमसे ढूंढेगा तो वह भी तू न पाएगा ॥ १० ॥ परंतु नम्र लोग पृथ्वीके अधिकारी बनेंगे, और सत्यताकी विपुलतामें आनंद भोगेंगे ॥ ११ ॥ अत्याचारी लोग न्यायकारी लोगोंके विरुद्ध कट बांधते हैं, और उनपर दांत पीसते हैं ॥ १२ ॥ प्रभु उसपर अवश्य हंसेगा, क्योंकि वह देखता है कि उसका दिन आ रहा है ॥ १३ ॥ दुष्टोंने तलवार खैंचली है, और धनुष चढा लिया है, दीन दरिद्रको गिरानेके लिए, और सत्य-वक्ताओंका वध करनेके लिए ॥ १४ ॥ उनकी तलवार स्वयं उनकेही हृदयमें घुसेगी, और उनके धनुष तोडे जाएंगे ॥ १५ ॥ एक धर्मात्माका थोडासा भी कई दुष्टोंके धनोंसे उत्तम है ॥ १६ ॥ क्योंकि दुष्टोंकी भुजाएं तोडी जाएंगी, परंतु येहोवा धर्मात्माओंकी रक्षा करता है ' ॥ १७ ॥ "

ईसाइयो, मुसलमानों, और हिन्दुओं ! आओ सब मिलकर गाड, अल्लाह, वा परमेश्वरसे प्रार्थना करें, कि हम तीनोंमेंसे जो भी दूसरेसे अन्याय, दुष्टाचरण और घातपात करे वह समूल नष्ट होजाय।